27.20

भारतर समित्राच्या १५७ संस्थाचे यणि। (क्षीयामधियाने १.)

P GO O

शान्तिमयुखः

ाचिपता— श्रीनीलकगुउभट्टः

thanks --

सः पेः जीवशुनन्दर्गातेकः

मास्टर सेलाड़ीसाल ऐग्रह सन्त्र इंस्टर इकटियो,

पर्यक्ति, फासिटी।

बुल्वे सार्वेस्ट्रान्यवास

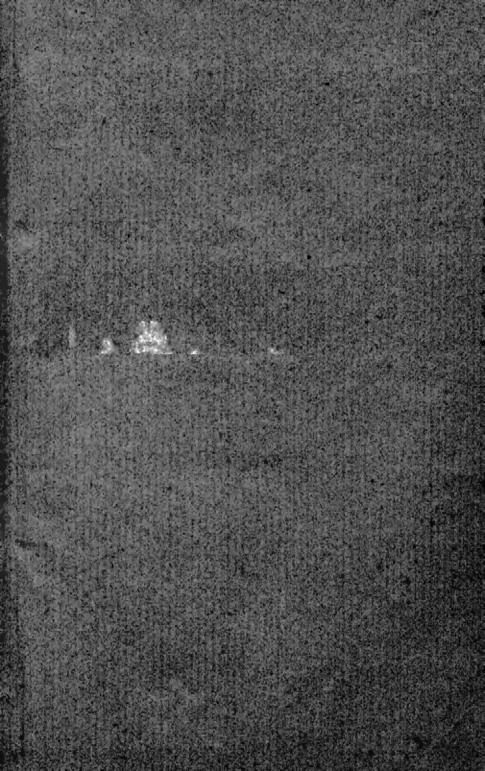
GOVERNMENT OF INDIA

DEPARTMENT OF ARCHAEOLOGY

CENTRAL ARCHAEOLOGICAL LIBRARY

CALL No. S Sa3S INILIMM

D.G.A. 79.





'मास्टर' संग्रिमालायाः १८७ संख्यको संग्रिः (धर्मशास्त्रविभागे २)

भगः + Santimayükha शादिनाषायायाः ।

श्रीनीलकगडभट्टः । क्टम्प्रहरू

सम्पादकः---

ख॰ पण्डितश्रीवायुनन्दनमिश्रः।

when 5356

E (New Dellai

श्रीमञाकाल अभिमन्तु एम॰ ९०

Sa3S ----

/ मास्य वेलाडीलाल ऐग्ड सन्स,

संस्कृत तुकवियो,

गावीड़ीमली, बनारस सिटी।

वधमें डेस्कलम्] सृष्यं स्वास्ट्रेयस्

ियत १९४३ एं-

त्रविकारः सर्वतः सुरवितः ।

MUNSHI RAM MANOHAR LAL BANKRIT W HINDI BOCK-MILLERS MN BARAK, DELET-L

प्रकाशकः —

ने॰ एन॰ याद्व श्रोत्राष्ट्र मास्टर खेलाथीलाल पेण्ड सन्स, संस्कृत मुक्डिपो, कवौड़ीगकी, बनारस सिटी।

Date Sa35 Nil M.M.



मुदकः— भोमश्वाकाक अभिमन्यु एम० ए० मास्टर प्रिणिटङ्ग वक्स्पे, बुक्तकाला, बबारस सिटी। मयूलं प्रन्थों के रचिवता का नाम संस्कृत-साहित्य-मकरन्य कोलुपों की जिह्ना पर विराजमान है। मीमांसक मह श्रीनीकरूण्ड ने जपने हादश मयूलों से धर्मशास्त्रास्त्र को प्रदीस कर अपनी विकक्षण प्रतिमा का प्रदर्शन किया है। इन्होंने न केवक अपने नाम को ही, विक अपने आश्रयदांता लेंगर-सित्रयवंशावतंस श्रीभगवन्त्रसास्त्रर की कीति-वैजयन्त्री को भी विक् विविक् में स्थापित किया है। इन्होंने अपने राजा को वशावली 'शान्त्रिममूख' के आरम्भ में यो बतकामी है—— स्वत्रास्त्र को वशावली 'शान्त्रिममूख' के आरम्भ में यो बतकामी है—— स्वत्रास्त्र का का वशावली 'शान्त्रिममूख' के

महा-कर्यप-विभागतक श्राह्मश्रुर कर्णदेव-विशोकनेव-स्पर्देव विदारणाज-वीद-राज नरमद्भवेव अन्युरेव-चन्द्रपास्त्रदेव-शिवगणादेव-रोक्षियन्द्रदेव - कर्मसेवरेव-नर-इस्टिव-यशोदेव-वासायन्द्रदेव-चक्रसेनर्वय-राजसिंह-भूपविसाहिदेव-अगवन्ददेव ।

महाराज भगवन्तदेव के विषय में अन्त्र में वे किसते हैं — किस्ति क्रियरें में विकास है किसते हैं — किस्ति क्रियरें । व्यापन क्रियमानि क्रियरें में विकास क्रियरें में व

व्यरोक कथन से स्वष्ट है कि चर्मप्यती (चम्बक) और तरिवाला (यसुना) के सङ्गम पर स्थित अरेह नगर (जिला हटाया) में महाराज अगवन्त देव शासन करते थे और राजालय शास कर इन्होंने नसी वगर में अम्बर्मप्यम किया । 'आज्ञासस्तेन राज्ञा' से भी यही ध्वनि निकलती है । जिल समय इन्होंने अन्यास्म्य किया उस समय भारतनर्थ में सुगळ सचाद जहाँगीर का शासन काल था और जिल समय ये अन्य किसे जा चुके ये उस समय जनस्मित है । इस तरह इनका यातुर्भीय काल सन् १६१०-१६५० ई० माना जाता है ।

अह जीवीलकण्ड मे इन मसूख मन्यों को बनाया-

ं १ खंस्कार अयुक्त-इतमें गर्माधान बादि संस्कारों का उन्हेस है।

र आप्वार मयुक-इसमें अनार सम्बन्धी वर्णन है।

sastra Literature में भी यही बात स्वीकार की है।

MIS

Municipi Raw, News Dellis On 41 1-156

७ दानसयूक्य—इसमें विविध दानों का साङ्गोपाङ्ग वर्धन है। द उत्तर्श सयूक्य—इसमें कलाशम-तहाग वापी-कृष-भाराम शादि उत्तर्ग हैं। ६ प्रतिष्ठा सयूक्य—इसमें अनेकविध प्रतिष्ठा का क्रम वतलाया गया है। १० प्रायक्षित्त सयूक्य—इसमें प्रायक्षित प्रकरण है। ११ शुक्ति सयूक्य—इसमें शुक्ति का परिपूर्ण शीत से वर्णन है। १२ शुक्ति सयूक्य—यह पुस्तक भाषके कर-क्षमळों में ही है।

कब हो शब्द इस मन्य के सम्भावक भीवायुनन्दनामश्च कर्मकावडी के सम्बन्ध में कहना जप्रासिक्क न होगा। आपने कर्मकाण्ड के प्रत्यों में एक कमिनव, किन्सु काकर्षक, शैली स्पी उच्छारहिम को तन्म वेकर भारतीय विद्वहुर्य के विश्व-चकोर को हठात अपभी ओर खींच किया। आपको बनावी हुई कुछ पुस्तकों की वालिका इसके अन्तिम आवर्श प्रह पर है। इनके अतिरिक्त आपने अन्त्येष्टि सहित कर्मकागुड समुच्चय, त्रयोदश संस्कार रत, विष्णुप्रांतष्ठा (बौधायनोक्ष), लिक्स प्रतिष्ठा, काली प्रतिष्ठा, बादि का प्रव्यन तथा गोपना ज्ञत कथा, जामक द्वादशी कथा, अपृषि पञ्चमी कथा, अनन्त चतुर्दशी वत कथा, महासदमी पूजा आदि की टीका किसी है। ये सब कागज की महर्चता एवं दुष्पाप्य होने से अप्रकाशित हैं। इसके बाद बन्होंने वर्तमान अन्य 'शान्ति मसूख' के सम्पादन में हाथ छवाया और ७२ एड वक हो छपे ये कि सम्पत् १९९६ आर्गशीर्ष शुन्त र मञ्जलवार को, रात्रि में दो बजे, ६४ वर्ष की काब में, अपनी ऐहिक कीका का संवरण कर, सम्भवतः शताइवमेध बर्खा क्षत्र में महामल में प्रधान ऋरिदछ का जालन अहल करने के छिए, असर-कोड चले ग्ये । आपके निधम से कर्मकाण्ड-संतार की अपूरव्यीय कृति हुई। 😅 अनिवार्थ कारकों से खगभग दो वर्षों तक यह यों ही पड़ा रहा । सन् १९४१ हैं। में मैंने पुरुषपाद पण्डितजी की हस्तकिसित प्रति का समाभय केवर इसका संशोजन करना जारम्म कर दिया और एक वर्ष में अवशिष्ठ अशों का यकामति संशोधन किया। पण्डितजी की इस्तकिसित प्रति के कतिरिक्त मेरे पथ प्रदर्शन के किए कोई दूसरी प्रति नहीं थी भतः इस पुस्तक में जो भी बुटि रह गयी हो उसका उत्तरदायित्व मेरे कपर है । इसके छिए मैं विद्वदृत्युन्द से शमा प्रापी हूँ तथा प्रार्थना करता हूँ कि वे वन बुढियों की ओर श्रीरा ध्वाम दिका वेंगे जिसमें दूसरे संस्करण में उनका सुधार किया जा सके।

काशी १८--१---१९४३ हैं विद्वज्ञनचरण**रण्यत्मः** मञ्जालास अभिमन्युः

🗯 श्रथ शान्तिमयूखस्य विषयसूची 🏶

प्रकरणस्	Ão	ďο	प्रकरणस्	. पृ०	पं॰
सङ्ग्रहाचरणम्	9	9	होस:	68.	14
कविवंशकथनम्	1	2	विख्यानम्	66	२३
शान्तिकक्षणस्	ą	4	पूर्भांडुविः	46	31
परिभाषा	ą	32	अभिषेकः	60	24
अथ विनायकानपनम्		74	अाचार्यां विपूजनम्	66	93
प्रयोगः	18	18	कथ प्रह्मरेगशान्तिः	48	1
अय प्रहेयज्ञः	90	9	प्रहस्नानानि	31	14
अयुतादिहोसं प्रकृत्यवशिष्टः	94	99	आदित्यशान्तिः	81	14
अहादीनां कक्षणानि	R.	15	वस्त्रशान्तिः	93	9.
अधिदेवता-प्रस्पधि- ।	80	9	मञ्जूकशान्तिः '	98	3
देवतालक्षणानि (बुधशान्तिः '	98	34
विनायकादिकक्षणानि	83	२०	गुरोः शास्त्रिः	34	
छोक्पा कस्पाचि	糠	99	गुरुपूजा	34	72
श्य कक्ष्मामः	8.8	9	शुक्रशास्त्रिः	98	11
अय कोटिहोसः	28	94	प्रतिशुकादिकान्तिः	* 94	14
शतसुखकोदिहोमः	41	- 1	शन्यादिशाम्तिः	33	-14
वय प्रहमस्त्रयोगः	44	6	शनिवदम्	200	79,
सण्डपकरयाम्	Чξ	18	शनिस्तोत्रम्	341.	-7%
शयोशपूजार्वि-	40	19	अर्कविवाह।	202	3
वास <u>्य</u> कर्म	44	- 1	अयोगः '	104	- 1
द्वारपूजा ं	44	9	ऋतुशाब्तिः -	746	
चोरणपूजा	48	1	मयोगः	1118	-14
भग्निस्थापनम्	φą	24	उपरामी रजोवक्षंनविश्लेषः	115	19
मगडलदेवतास्थापनम्	41	. 2	गोसुक्षमसयविभिः	934	ч
महादिस्थापनं पूजनं च	68	94	प्रयोगः	319	4
कळशस्थापनम्	4	14	सद्दन्तोत्पत्तिशास्तिः	119	44
विकासक्तमस्	28	18	कृष्णचतुर्दशीयनगरासि	1991	- 4

प्रकरणम्	Z.	фo	प्रकरणम्	g.	q ¹ o
सिमीवार्छ। हुदूशानितः	\$22	9	नक्षत्रशान्तयः	105	34
प्रयोगः	१२४	33	तियिवारश्रेषु साधारणः	949	28
दर्शवननशान्तिः	328	3	वयोगः		
प्रयोगः	120	45	अहणशान्तिः	105	4
उयेष्ठाशान्सिः	336	२६	जलाशय वैकृतशा म्सिः	198	34
मयोगः	121	3.5	वृष्टिवैकृतशान्तिः	106	٩
	128	18	अस्मिबैकृतशान्तिः	920	3
मुखशान्तिः		3	प्रतिमादिवैकृतशान्तिः	29	44
सूकाक्ष्ठेषाशान्त्योः प्रयोगः वैद्यतिक्यतीयातः	184	4	भाकरिमकशासाद- पत्तनशान्तिः	949	9
संक्रांतिशान्तयः 🕺			वृक्षविकारशास्तिः	990	35
प्रयोगः	180	54	उत्पातशान्तिः	199	
एकनस्त्रश्रजन्मशान्तिः	388	50	पश्चीसश्टशान्तिः	133	24
अयोगः	140	₹0	द्यासार्ययादिशान्तिः	168	*
ग्रह्कोस्पत्ती शान्तिः	141	9.	क्योतशान्तिः	194	90
विषयटिकाशान्तिः	345	2	काकवैकृतशान्तिः	199	98
भगग्या न्तशान्तिः	348	22	काकमैथुनदर्शनशान्तिः	190	23
दिमक्षमाविशान्तिः	144	1+	काकस्पर्शशान्तिः	356	55
विकशास्तिः	144	12	सिंहादौ गवादिप्रसुतिशा		15
प्रसववैकृतशाम्बः	140	94	मुसळाचाकस्मिक- }		3
.समलशान्ति।	346	1	स्फुटने शाम्तिः	508	A
,बहीगृहीतबालकविधिः	149	19	विद्युस्पातादिशाम्तिः	804	9.0
बारुप्रहरूतवः	140	24	मचयाचैकवेशभेदे शान्तिः	705	1.9
युतनाविधानम्	184	ч	अत्राहरा स्वः	200	1
अवराकुक्षाची शास्त्रयः	900	24	गजशान्तिः	530	18
, मारशाम्बदाः -	902	44	सहाशान्तिः	818	. 1
				-9	-

इति सूचीपत्रम् ।

er gri middelphistics o

श्रथ शान्तिमयूखः।

🏶 प्रारभ्यते 🏶

महोमयमुद्राराभं लोकत्रयनमस्कृतम् । तमहं भारकरं वन्दे सतां सर्वार्थसिद्धिदम् ॥१॥ यहे पितामहतनोः खलु कस्यपो स्तस्माद्जापत मुनिस्तु विभागडक(क्यः । तं जुत्रियां धुरमरोपयदृश्यशृङ्ग-स्तस्मान्वयेऽध्यजनि मृङ्गिवराभिधानः ॥२॥ तस्मिन्वंशे महति वितते सेंगराख्ये नृपाणां राजा कर्णः समजनि यथा सागरे शीतरशियः । कीर्त्या यस्य प्रथिततरया श्रोत्रजातेऽभि पूर्खे कर्णस्याऽपि मविततकया नावकाशं लभन्ते ॥३॥ विशोक्षरस्यदेवस्ततस्तत्स्रतोऽभूत् विशोकी कुता येन सर्वा धरित्री। ततोऽप्यासराजास्त्रशतुस्ततोऽभूत् रयाख्यो स्वेर्णैव सर्वाहितझः 11811 **बभूवाऽथ वैराटराजस्ततोऽध्**-न्तृपो मेदिनीवल्लभो बीढराजः । नरब्रह्मदेवस्ततो मन्युदेव-स्ततोऽभून्तृपश्चन्द्रपालाभिधानः [[2] शिवनशारूयतृपः समजन्यथो शिवगणाख्यपुरं भचकार यः |

शिवगणेन समः सक्तीर्श्रणैः

शिवशिवभयमो गणनासु यः ॥६॥
रोजियन्द इति तत्तनयोऽभृत् कमसेननृपतिस्तमथानु ।
क्षोकपो नरहरिर्नृपराजो रामचन्द्र इति तत्तनुजातः ॥७॥
पशादेवस्ततो जातस्ताराचन्द्रनृपरततः ।
चकसेनस्ततो राजा राजसिंहनृषो यतः॥॥॥
ततोऽप्यभृज्ञ्पतिसाहिदेवः स्वकीर्तिभिर्निर्जितदुग्धसिन्धुः।
स्वभूत्ततः श्रीभगवन्तदेवः सदैव भाग्योदयवान् ज्ञितीशः॥॥॥

यहानद्रविशाद्रिनिर्जितवपू रत्नाचलो लज्जया

द्रेस्तव्य इलाहते निविशते नो यत्र पुंसां गतिः । किंच त्रस्पदरातिषायनयनानेत्रास्युभिवेद्धित-

स्तेजोधिर्वेटवा मुख्योत्यहुतभुक्तुल्यः कथं नो भवेत्।१०॥ आइप्तस्तेन राज्ञा विविधकुलयणिर्वित्तणात्यावतंसो

भदृशीनीलकण्डः स्मृतिषु रद्गतिर्जैभिनीये द्वितीयः। धाद्मामादाय मूर्ज्नो सविनयमग्रना तस्य सर्वाभिवन्धान् दृष्ट्वा सम्यक् विविच्य मविततक्षिरणस्तन्यते भास्करोऽयस्॥११॥

मतास्कैराहतमन्त्रकिञ्चि-

न्यया तु निस् ततया तदुन्भितस्। छनोक्तितातो न हि तेन काचित् वपुष्पदीनाऽपचितिन दीयते ॥१२॥

'संस्काराऽऽचा 'रकालाः'सम्रचितरचनाः 'श्राद्ध 'नीती विवा 'दो 'दानो'त्सर्ग-'प्रतिष्ठा जगात जयकराः सङ्गतार्थाऽभुवद्धाः॥

[।] श्रीरकारमञ्ज्ञ २ माचारमञ्ज्ञ ४ समयमञ्ज्ञ ४ थाद्मगृत्व ५ गीति-मगृज्य । ६ विवादमपुत्र ७ दाममञ्ज ८ ३स्तर्ग मञ्जू ६ प्रतिष्ठामगुज्य

शाय'श्विषं विशु'द्धिस्तदनु निगदिता शा'न्तिरेवं क्रमेख रूपाता ग्रन्थेऽत्र शुद्धे बुधजनसुरूदा द्वादशैते मयुर्खाः ॥१२॥ भगवन्तभास्करारूमे ग्रन्थेऽस्मिन शिष्टसम्मते च ततः। शोन्तिविवेकमयुर्खः प्रतन्यते नीलक्रएटेन ॥१४॥

श्रव्यष्टपापनिदानकैद्दिकमाश्रानिष्टनिवर्शकं पापापयोजकं सैधं कर्मशान्तकम् । स्थादिद्वरदानादा।वित प्रसङ्गं वारियतुं निदानका स्तम् ॥ श्रामुष्मकानिष्टनिवर्शके तं वारियतुमैद्दिकेति । प्रायक्षित्रं वारियतुं माश्रपदम् । प्रायक्षित्रं स्वामुष्मिकानिष्टनिवर्शकमिष, श्रमिचारप्रत्यमिन्दारादौ वारियतुं पापाप्रयोजकमिति । तयोः फलतो हिंसारकेन तद्वुष्ठानं प्रायक्षित्रोकेश्च पापप्रयोजकरवात् । श्रानिधनि-वर्शकत्वं च शान्तिकस्य तक्षिकामपापनाशकपद्याप्रयोजिषदरकेन पृष्टिफलकं वैधं कर्म पौष्टिकम् ।

तत्र परिभाषा मार्कपडेयपुराखे—

शिरस्तात'श्र कुर्वात दैविष्ण्यमथाऽषि वा ।
प्राक्षमु 'खोदङ्मुखो वाऽषि रमश्रुकमे च कारयेत् ॥१॥
तत्रैव-देवार्चना'दिकर्माणि सथा ग्रुचेभिवादनम् ।
कुर्वीत सम्यगाचम्य मयतोऽषि सदा द्विजः ॥२॥
धृहत्मनु:-प्राणाना'यम्य कुर्वात सर्वकर्माणि संयतः ।
मार्करहेयः-सङ्करूप'विधिवत्कुर्यात् स्नानदानवतादिकम् ॥३॥
देवसः-मास'पत्तिविधीनां च निभिन्नानां च सर्वशः।
वन्नेखनमङ्कर्वाणो न सस्य फलभाग्यवेत् ॥४॥

१ प्रायक्षित्तमपूर्व । २ शुद्धिमयूर्व । २ शान्तिमयूर्व एवं हाद्शंमयूर्व । ॥ दैविपत्रकर्म में शिर से जान करें । ५ सम्भु कर्म पूर्व मुँद या उत्तर मुँद ॥ स्वी । ६ देवता भादि का पूजन गुरू की बन्दना इत्यादि कर्म आक्सम करके करें । ७ प्राणायाम करके । ६ सञ्जरूप युक्त स्नान करें । ९ मालपश्चितियाद निमित्त शक्तारण करें ।

मासपद्यतिथयः प्रयोगाधिकश्यभृताः सर्वेऽपि यसु अनेकिन-साच्ये कर्मप्याद्यदिने सङ्गल्पकालीनां तिष्यमधिकरण्येनोिक्सस्य क्योतिष्टोमेनाह् यद्ये इत्यादिसंकष्ट्रपदाक्यं प्रयुक्षते यायञ्काः ॥ यसु पदानामन्वयायोगादनादर्जन्यम् ॥ यद्यि केचिसेन तेन क्येण् प्रयोगाङ्गतया विद्वितानामे मासादीनामुल्लेश्च इति तद्यि न माना-मावात् ॥ अविद्वितमासादिक बाधानादी मासपद्यतियोगं ज्योति-ष्टोम पकादरीमतादी च मासपद्ययोदल्लेखामायप्रसंगाच ॥ अतो ज्योतिष्टोमादावेकादस्यादिपूर्णिमान्तानामुख्लेखः ॥ प्रयमन्यत्रापीति दिक् ॥ अत्र श्रद्वाणामप्यिकारः ॥

आवयेषतुरो वर्णान्हत्वा माह्यसम्प्रतः—

इत्यादिवाक्येतु श्रावणस्य कृत्यर्यतया रागमास्त्वेत तक्विचौ वैय-ध्यापक्तित्विववस्य। भवणविधानारोषां पुराणभवणेऽधिकारेण ज्ञान-सञ्चावात् ॥ वैदिकमन्त्राभावे कथं राज्ञत्सु कर्मस्वधिकार इति चेत् ॥ भ्रष्टेण धर्मेष्यवस्तु धर्महाः सर्ता धर्ममञ्जिताः ॥ मन्त्रवर्ज त तुष्यस्ति प्रशंसां माप्तुर्वास्त चेति मनुमा मन्त्रवर्जनात् ॥ धक्-मेधातिथिर्मेश्वार्थजतेष्व्यवासादिष्वधिकारार्थमिषं त तु समन्त्रवेषु मन्त्रपर्युद्धा-सेनाधिकारार्थमिति तथ ॥ समन्त्रकोपवासादिषु भवणविधिनैवा-धिकारसिद्धावेतहाष्यानर्थक्यापरोः ॥ अत पत्र मोक्क्षमेऽपि ॥ मन्त्रवर्जे व तुष्यान्त कुर्वाणाः पीष्टिकी कियामिति ॥ भन्नेतहाक्यस्य पीराण्यते तस्सामान्योपस्यवतीराण्यिक्योद्देशेन मन्त्रवर्जनविधौ पीष्टिकीमित्यस्योदेशायविशेपक्रवेनाविविद्यत्तरसम्॥ पत्रं मनुवाक्य-स्पैतस्य चैकेव भृतिमूंलर्थन कर्न्यते ॥

युवपरिशिष्टे-ब्यादौ विनायकः पूज्य भन्ते तु कुलदेवताः । भौनकः—पुष्पाइवाचनविधि वस्त्रामोऽय वशाविधि ॥१॥ भयोक्तुः कर्मणामादावन्ते चोदयसिद्धये,। कर्मभदीपे-कर्मादिषु तु सर्वत्र मात्ररः सगणाविषाः ॥२॥ पूजनीयाः मयत्नेन पूजिताः पूजयन्ति ताः । भृतिमासु च शुद्धासु लिखित्वा वा पटादिषु ॥३॥ भृषि वरश्चतपुञ्जेषु नैवेदीश पृथम्बिधैः । कुड्यलशावसोद्धीराः सप्तवारं घृतेन तु ॥४॥ कारयेत्पश्चधारा वा नातिनीचो न चोच्छिताः । आयुष्याणि च शान्त्पर्थं जप्त्या तत्र समाहितः ॥५॥ षड्भ्यः पितृभ्यस्तदनु श्रद्धदानसुपक्रमेदिति । षड्भ्य इति कातीयखन्दोगपरम् ॥

श्चन्येषां तु नव दैवत्यम्— श्चन्वष्टकासु हद्धौ च गयायां च च्चयेहिन । अत्र मातुः पृथक्श्राद्धमन्यत्र पतिना सह ॥६॥ इति वचनात् ॥

सर्ववाचार्यो वजमानसमगासीय पत ॥ अन्यथाऽऽचार्यस्य यज-मानशाख्यध्यनाभावे तच्छासीयपरार्थानां निर्वाह पत न स्यास् ॥ स्वशाखरीवातुष्ठाने तु वैगुरायम् ॥ तथा च पराशरः---

यः स्वशाखां परित्यज्य परशाखां समाश्रयेत् । द्यापाणमूपिं कृत्वा सोऽन्धे तमसि मज्जतीति ॥१॥

ऋत्विजस्तु भिष्नशासीया अपि सर्वेप्याचार्य्यं ब्रह्मत्विजो मधु-पर्केस प्रयाः ॥ ऋत्विजो वृत्वा मधुपर्कमाहरेदित्याश्वसायनोक्तेः ॥

सम्पूज्य मधुपर्केश ऋत्विजः कर्मकारयेदिति ॥ विव्यामित्रोक्तेश्वर्री।

यो भ्रत्विक् यच्छ।सीयं कर्म करोति तच्छ।सोक्तेत प्रकारेण काएडानुसमयेन मधुपर्के कुर्वन्ति यायजूकाः केचित् ॥ परे यजमान-शास्त्रोक्तेत ॥ यजमानेन स्वशासीया भ्रष्ट्रत्विग्मश्च स्वस्वद्याखीयाः पदार्धा अनेकेषु भ्रष्टत्विच् पदार्था सु समयेगानुष्ठेया स्ति तु युक्तं तत्त-च्छाक्षाध्ययनजन्मसानस्याहत्वादेकमयोगिविधिपरिभ्रद्याः ॥

त्रप्रत्विग्भ्यो देयमुक्तं लिङ्गपुराखे— वस्तयुम्मं तथाप्यूरं केयूरं कर्णभूषणम् । श्रङ्गुलीसूषणं चैव मिखवन्यस्य भूषणम् ॥१॥ कराज्ञाभररायुक्तानि प्रारम्भे धर्मकर्मग्रः । पुरोहिताय दत्वाऽथ ऋत्विरभ्यथाऽपि दापयेत् ॥२॥ स्रापः पूर्यन्तेऽस्मिक्षित्यप्यूरं जसपात्रम् ॥

मत्स्यपुराखे-यजमानः सपत्नीकः पुत्रपौत्रसमन्तितः । पश्चिमद्वारमाश्चित्य प्रविशेद्यागमण्डपम् ॥१॥ संग्रहे-समन्ततञ्च सिद्धार्थान् किरेद्रसोध्नमन्त्रतः । प्रतिष्ठासारे-सर्वतः पञ्चगच्येन शोत्त्रयेद्यागमण्डपम् ॥ भाषो हि ष्ठा सुचेनैव ततः स्वस्त्ययनं जपेत् ॥२॥

ध्वत्र हेमाद्रौ वास्तुपूजाप्युक्ता∽

समरहर्ष भविश्पाऽथ तोरणादि प्रपूज्य च । वास्तुयागं ततः क्रुर्यात् भासादे मण्डपेऽथवा ॥३॥ वास्तुमण्डले च-नैऋत्यां दिशि वास्त्वीशं ब्रह्माद्यांश्च समर्चयेत् इति शारदोक्तेः॥

वास्तुहोमस्तु भिन्नस्थि दिले कार्यः । सुख्यायतने वा ॥ सत्रा-प्यादी पृथक्षयोगतथा प्रधानसमयन्त्रतथा वा ॥ सारदातिलके तु होम पद नोकः ॥ सर्वा च शान्तिकं पौष्टकं महादानांदिलीकिकासी कार्यम् । श्रीतस्मार्त्तान्त्रप्राप्ती मानाभावास् ।

यत् अतुः-वैवाहकेऽम्नौ कुर्वीत गार्ह्य कर्म यथाविधि ॥ पश्चयक्षविधानं च पंक्तियाऽन्वाहिकी गृहीति ।

तत्स्पष्टं गृह्योक्तपरम् । वैवादिक इति च दारदायाच कालिकयो-रप्युपक्षक्षकम् । तत्सवातीयसंस्कारस्यैय साधनतावच्छेदकत्वात् ॥ यदिष याज्ञवस्त्रयः-स्मार्तं कमे विवाहास्नौ कुर्वीत मत्यदं गृही । दायकालाह्ते वाषि श्रीतवैतानिकास्निध्विति ॥१॥

तत्रापि सामान्यं स्मार्तपदं गार्से उपसंहियते ॥ वर्तेनाहयनीया-दयो निरस्ताः ॥ यदाह्वमीये जुद्धशीत्यादायभ्य प्रतिप्रहेऽशी वैदिक- रवसाम्म्येन वैदिकाश्वदानप्रतिप्रहोपस्थितवस् वैदिकहोमोपस्थितेश्व । यदाय्य गार्श्वस्मातं एव श्रीतं च नैतानिक एनेति वियमेन स्मृत्यु-केऽपि कर्मणि श्रीतस्मार्साम्म्योः प्राप्तिः सम्मान्यते ॥ तथाऽपि व साहवनीयावसध्यत्वादिक्षेण ॥ किन्तु लीकिकसाधारणःवलम-स्नोनेश्व ॥ श्रनीधाहुतिप्रहोपे श्राह्वनीयत्वादिविधातापरोश्च । सत एव सर्वाधानिन श्रीपस्मामावाहैतानिप्राप्तेश्च तेन गार्श्व लीकिक एव कार्थ्यम् ॥ श्रमुमेव सर्वमर्थं स्मृत्यर्थसारक्षद्वि संजप्राद्व ॥

गार्ह्य मौपासने कुर्यात्सर्वाधानी तु लौकिके । स्मानीच लौकिके कुर्याच्छोतं वैतानिकाऽग्निष्वित ॥१॥

यत् नारायण्डती सर्वाधानिता सोमन्तोष्तयनादि गार्श्वकर्मार्थं स्मार्चानिकत्पादभीय इति॥तत्र मूलमन्नोष्यम्॥ यद्पि विज्ञानेश्वरो इ.हयद्व श्रीपासम् इत्यूचे॥ तत्रापि भूलमन्वेष्यम्। कातीयपरं चा तत्स्त्रे तथास्नानात्॥ त्रत पर्व यिनायकशान्ती लीकिकान्निमेवाऽः शोचत्। श्रतः स्मृत्युक्तं लीकिक एनेति॥

कृत्यरज्ञाकरे-श्रुभपात्रं तु कांस्यं स्थाक्षेत्रान्ति मण्येत्वुधः ।
तस्याभावे शरावेख नवेनाभिग्रलं च तम् ॥१॥
गोभिलीये-आह्य चैव द्दोतव्यो यो यत्र विहितोऽनकः ।
तथा-लत्तद्दोमे च विद्धः स्थात्कोटिहोमे द्दुतासनः ।
पूर्णाद्दुत्या ग्रदो नाम शान्तिके वरदः सदा ॥१॥
अन्येषु संस्कारादिकर्मस्वर्गेनीम विशेषाः प्रयोगरत्ने श्रेयाः ॥
होमविशेषो गोभिलीये-न ग्रक्तकेशो जुदुयासातिपात्तिकानुकः ।
चत्तानेनेव दस्तेन अञ्जष्टाप्रेण पीडितम् ॥ १ ॥
संहतानुलिपाणिस्तु वाग्यतो जुदुयाद्दिविति ।
वदुकर्षके दोने श्र्याद्दित्यागाशकेद्दीमारम्म यव सर्वादेवताः

भय विमायकस्मपनम्---

याज्ञवन्नयः-विनायकः कर्मविध्नसिद्धयर्थे विनियोजितः ।

धातुर्थ्यं तेनोहिश्य सर्वांशि द्वय्याणि त्यजेषिति हेमाण्ड्यः ॥

गणानामाधिपत्ये च रहेण ब्रह्मणा तथा ॥१॥
तेनोपसृष्टो चस्तस्य जन्नणानि निनोधत ।
स्वप्नेऽवगाश्चतेत्यर्थं जलं शुण्डांश्च पश्यति ॥२॥
काषायवाससर्थेव क्रव्यादाँश्चाधिरोहति ।
श्चन्त्यजैर्गर्दभैरुष्ट्रैः सहैकत्राऽवतिष्ठति ॥३॥
व्रजन्नपि तथाऽऽत्मानं मन्यतेऽनुगतं परैः ।

उपसृष्टः उपदुतः ॥ स्वप्ने स्रोतसाऽपहियते तत्र मञ्जति वान-त्यगादनमात्रं विविद्यति तस्य ग्रमस्चनकत्वात् ॥ अन्त्यजैक्षाएडालैः ॥ अन्यदमसस्यान्याद्र—

विमना विफलारम्भः संसीदत्यनिभित्तकः।
तेनोपसृष्टो लभते न राज्यं राजनन्दनः॥१॥
कुमारी नैव भर्तारमपत्यं गर्भमङ्गना।
आचार्यस्वं श्रोत्रियश्चन शिष्योऽध्ययनं तथा॥२॥
विश्विक्लामं च नाप्नोति कृषि चापि कृपीवलः।

संसीदति कारशं विना दीनमनस्को भवति॥ पत्रदुपसञ्चां यस्य यदिष्टं स चेदिष्टसामग्री सत्वे तक आभोतितदा तदुपदुतो बोध्यः॥ पत्तदुपद्वपरिद्वारार्थं च कमोद्द—

स्नपनं तस्य कर्तव्यं पुरुयेक्षि विधिष्वेकम् ।

स्रश्न पुरुयेऽकोत्यविशेषेऽपि विशेषोऽपराके भनिष्ये—
शुक्रपन्ने चतुध्यी च नारेण धिषणस्य च ।
तिष्ये च वीरमन्त्रने तस्यैव पुरतो नृपेति ॥१॥
श्रन्नानी देवताप्जोका तन्नन—
व्योमकेशं सु सम्भूज्य पार्वती मामजं तथा ।
कृष्णस्य पितरं केतुं अर्कपारं सिनं तथा ॥१॥
पिषणां क्लेद्युनं च कोणलक्ष्मं च भारत ।

विधुन्तुदं बाहुलेयं नन्दकस्य च घारणमिति ॥२॥

व्योमकेशः शिवः॥ भामजो गर्गेशः॥ आरोभीयः॥ स्वितः शुकः॥ धिषणो गुरुः॥ क्लेदपुत्रो बुधः॥ कोग्रः शनैक्षरः ॥ लदम तद्यांक्षन्द्रः॥ बाहुशेयः स्कन्दः॥ नन्दकधारी कृष्णुः॥

गौरसर्षपकन्केन साज्येनोत्सादितस्य च । सर्वौषधैः सर्वगन्धेर्विखिप्तशिरप्तस्तथा ॥१॥ भद्रासनोपविष्टस्य स्वस्तिवाच्या द्विजैः शुभाः । गौरसर्षपपिष्टेन गोघृणयुक्तेनोत्सादितस्योद्वर्सितस्य ॥

सर्वीषधानि छन्दोगपरिशिष्टे--

कुष्टं मांसी इस्ट्रि हे ग्रुरा-शैलेय-चन्दनम् । चचा-कर्चूर-ग्रुस्ते च सर्वीपध्यः मकीर्तिताः ॥१॥

सर्व-नन्धैक्षन्दन-कुङ्कमाऽगरु कस्तृरिका-कातीफलादिधिः । वैद्यां सितवस्त्रप्रच्छादितश्रीपर्णीपीठभद्रासनं स्वस्तिवाच्याः स्वस्तिधा-धनीयाः ॥ ब्राह्मणुद्रासः स्वस्तिवाचनं कारमेदित्यर्थः ॥

श्रिथस्थानाद्द्गजस्थानाद्दल्भीकात्सङ्गमाद्ददात् । मृत्तिकां रोचनां गन्धं गुग्गुलुं चाप्तुः नित्तिपेत् ॥१॥ या श्राहृता एकवर्णेश्वतुभिः कलशेहेदात् । चर्मग्यानुदुहे रक्ते स्थाप्य भद्रासनं ततः॥२॥

श्चानहुद्दं चर्मं च वेद्यां प्राग्त्रीयमूर्ध्वलोम च स्थाप्यमिति विका-नेश्वरः ॥ या श्वापः ते चत्यारोऽपि कलया भद्रासनात्पूर्वादिचतुर्दिश्च स्थाप्या इति साम्भदायिकाः ॥ पूर्वादिषिक्त्रयाविस्थतकलग्रोदकेनाः भिवेककमेण मन्त्रानादः—

सहस्राचं शतधारमृषिभिः पावनं कृतम्। तेन स्वामभिषिश्चामि पावमानीः पुनन्तु ते ॥१॥ भगं ते वरुणो राजा भगं सुर्यो बृहस्पतिः। भगमिन्द्रश्च वायुश्च भगं समूर्षयो ददुः ॥२॥ यत्ते केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यत्त मूर्द्धनि । खलाटे केशयोरक्ष्योरायस्तद्धन्तु ते सदा ॥२॥

सहस्रास्त्रं वहुशक्तिकं ॥ पावमानी इत्यनन्तरमाप इति शेवः॥ भगं कल्याणं॥ चौर्भाग्यमकल्याण्म्। उद्दिगदस्थितेनाभिषेके पूर्वी-कास्त्रय एव सन्त्राः॥ सर्वेश्चतुर्थमिति विक्रानेश्वरोक्तलङ्गात्॥

किञ्च—

स्नातस्य सार्षपं तैलं सुवेखौदुम्बरेख तु । जुहुयान्मूर्द्धिन कुशान् सब्येन परिष्ट्य च ॥१॥ सब्यपाखिगृहीतकुशां तिईं ते सार्षपं तैलसुदुम्बरिनर्मितेन स्रुवेख यजमानमूर्द्धनि जुडुयादाचार्थः॥

वितश्च सम्भितश्चैव तथा शालकटङ्करौ । . कृष्मायङो राजपुत्रश्चेत्यं ते स्वाहा समन्वितैः ॥१॥ नामभिर्वेश्विमन्त्रैश्च नमस्कारसमन्वितैः ।

"नमः स्वस्ति स्वाहे"ति चतुर्थी । एतानि षट् विगायकनामानि इति विश्वानेश्वरः ॥ श्रपरार्कस्तु शालकटंकट इत्येकवचनान्तं पपाठ ॥ तेन तन्मते पञ्चेवाहुत्रथो भवन्ति ॥ स्नत्र लौकिकान्नी स्थालीपाकिन-धिना चर्व छत्था तेभ्य एवाहुतिषट्कं हुत्वेन्द्रादिदशलोकपालेभ्य-स्तन्नान्ना वर्ष्ति दद्यात् । इति मितान्तरायाम् ॥

तत्र चरुहोमे ६ म्हादिभ्यो बिलदाने च मूलं विस्थाम् । श्रन्ते स्थाहा समन्वितेनीमभिजुँदुयात् । नमस्कारसमन्वितेश्वेत्यादिभ्य एव वित्तं दद्यादिति वश्यमारोज सम्बध्यत इति तु युक्तम् ।

द्वाच्चतुष्पथे सूर्ये कुशानास्तीर्यं सर्वशः । कृताकृतांस्तरहुतांश पलकौदनमेन च ॥१॥ मत्स्यान्यकांस्तथैवामान्यांसमेतावदेव तु । पुष्यं चित्रं सुगन्धि च सुरां च त्रिविधामपि ॥२॥ मूलकं पूरिकापूपास्तथैनोस्डिरकस्रजः । दथ्यनं पायसं चैन गुडपिष्टं समोदकम् ॥३॥ एतान्सर्वान्समाहृत्य भूमौ कृत्वा ततः शिरः । कृताकृतान्सकृदनहृतान् पखलौदनः ॥॥॥

तिलिपिष्टिमिष्ट कोदन इति मितास्त्रायाम् ॥ अपक्रमांसं मिश्रं श्रोदन इति तु युक्तम् ॥ पललं अध्यमामिषं मिति कोशात् । श्रामान् पक्षान् मांसमेतावदेव तु । पक्षमपक्षमांसमस्यित्यर्थाः ॥ त्रिविधा सुरा गौडी पैष्टी भाष्त्री च । मूलकं क दाक्षारो भव्यविशेष इति मितास् रायाम् ॥ श्रवस्यत एव ब्राह्ममिति तु युक्तम् । उभयमपि ब्राह्ममिति महार्ण्ये । अपूषाः क्रोइपका गोधूमितकारा इति विकानेश्वरः । उपडे-रक्षाः पिष्टविकारा नानाविधास्ते स्वज इत्युच्याते । गुडिपिष्टं गुडिमिश्रं शास्त्रादिपिष्टं अत्र सुरामांसं चाऽल्लास्य विवयम् ॥ ब्राह्मपैस्यु मांस-सुरास्थाने तु सलदणं पायसं दुग्धं च श्राह्मम् ।

पाँयसं खनणोपेतं मांसस्थाने मकल्पयेत्। दुम्धं खनणसंमिश्रं सुरास्थाने मकल्पयेत्।।१॥

स्मरकादिति महार्यवादिषु विनायकाम्बिकामावश्रीभ्यां विभायकमम्बिकां च नमस्कृत्य पूर्वोकद्रव्यजातं तथोरप्रत उपहृत्य तच्छेषं सूर्पे विधाय चतुष्पये धूर्पं संस्थाप्य वर्ति दथादेतैमंन्त्रेः ।

वर्षि गृह्वनित्वमं देवा आदित्या वसवस्तथा ।
मरुतोऽयारिवनौ रुद्धाः सुपर्गाः पद्मगा ग्रहाः ॥१॥
श्रमुरा यातुधानाश्च पिशाचा मातरोरगाः ।
शाकिन्यो यच्चवेताला योगिन्यः पूतना शिवाः॥२॥
जम्भकाः सिद्धगन्धर्या नामा विद्याधरा नगाः॥
दिवपाला लोकपालाश्च ये च विद्यविनायकाः ॥३॥
जमतां शान्तिकर्तारो अह्याद्याश्च महर्षयः ।
मा विद्यं मा च पापं मा संतु परिपंथिनः ॥॥॥

सौम्या भवन्तु तृप्ताश्च भूतप्रेताः सुखानहाः।

द्यादित्यापि देहलीदीपयदभ्येति । विनायकस्य अननीमुपति-ग्रेचतोम्बिकाम् । दूर्यासर्थपपुष्पाणां दरशर्यं पूर्णमञ्जलिम् । अनन्तरं विनायकम्मिक्कां च दूर्वाद्यञ्जलिमर्थं च दस्वोपतिग्रेत ।

डिएस्थानमन्त्रमाइ-रूपं देहि यशो देहि भगं भगवति देहि मे । पुत्रान्देहि धर्नं देहि सर्वोन्कामाँश देहि मे ॥१॥

भगवित्रत्यृह्य विश्वयकमण्डुपतिष्ठेतेति विद्यानेश्वरः। अत्र मदनः। विनायकोपस्थानं कृत्वाऽभ्यिकोपस्थानं कार्य्यमित्याहः । किञ्च---

ततः शुक्राम्बर्धरः शुक्रमाल्यात्रुलेपनः । ब्राह्मणान्भोजयेद्दयादृह्मयुग्मं गुरोरपि ॥१॥

गुरोराचार्याय । अपि शब्दाइचिलामपि ॥ पर्वविधं कर्म कुर्वतः। एवं विनायकं पूज्य अहांश्चैव विधानतः । कर्मलां फलमामोति श्रियमामोत्यतुत्तमाम् ॥१॥ •

श्चस्याः कर्माङ्गत्वेन पौष्टिकत्वेन च वर्णयतुष्टयस्याप्यत्राधिकारः ॥ श्रहस्य तु मन्त्रवर्ज तान्मक्रस्य ॥

मन्त्रवर्जन दुष्यन्ति कुर्वाणाः पौष्टिकी क्रियामिति मोश्चर्यने अवणादिति बदन्ति॥ महार्णवोऽपि॥यजमानस्तु ग्रह्छेदिति वदन् सर्वाधिकारमभिमेति॥ इति विशयकशान्तिनिर्णयः समाप्तः॥

श्रथ प्रयोगः ॥

कर्ता देशकाली सङ्कीत्यां ऽमुककर्मणो निर्विद्यतासिङ्यर्थमुपसर्ग-निनृत्यर्थं वा विनायकक्षपमं क्रेरण्य इति सङ्कल्पयेत् ॥ ततः पुण्याद-वाचननान्दीश्राद्धान्तं थथोकं कुर्यात् । अपरे पुण्याद्वाचनं नेच्छन्ति॥ अश्रे तस्य कर्ण्यव्यात् ॥ अथाचार्य्यं ऋत्विक् चतुष्टयं वृणुयात् ॥ ऋत्विजो व सन्तीति केचित् । तदाक्षार्यं एव बद्यमाणमित्रवेकं कुर्यात् ॥ यजमानः प्रतिमास्यद्यतपुक्षेषु वा । शिक्, पार्वर्ती, गणेशं, वसुदेवं केतुं, अर्कं, भीमं, शुक्रं, गुरुं, बुधं, श्रानं, वन्द्रं, राद्बं, स्कन्दं, छण्यं,

भावास पुत्रयेत् ॥ तथाऽऽभार्यः पश्चवर्षः पूर्वादिचनुर्दिश्च चत्वारिः मध्यस्थवेदां वैकमिति स्वस्तिकपश्चकमानिकय मध्यस्थस्वस्तिकोः परि ज्ञानदुई रजं वर्म प्राचीनधीकमूर्जलोम संस्थाप्य तस्योपरि श्रीपर्लीपीढं संस्थाप्य सितेन बाससा संद्राइपेत् ॥ पतद्भद्रासन-मिति । अप चतुर्चं स्वस्तिकेषु पूर्वादिद्यं चत्वारोऽपि अस्तिकः कलग्रान्संस्थापयेषुः ॥ बाबायाँ वा ॥ तथाऽषं प्रकारः ॥ 🗳 वर्षायीः पृथिवी च नेति भूमि स्पृशन्त ॥ सम्मार्थ्य भैन्द्रोवप्रयः समिति वधान् चित्रका के बाजिलकसरोध्वितितेषु कश्रशं संस्थाप्य # ॐवदनस्योशा-अअभमस्तित उद्केमापूर्व ॥ त्वां गन्धवंति गन्धं क्रिपेत् (केविक् बन्दनागरकस्त्री-कर्यूर-गोरोकशदीन गुन्गुन्ने च निक्रियम्ति) 📽 वा क्रोपचीरित सर्वीपधीः क्रिपेत् ॥ ॐ काश्कान्काडादिति पूर्वाः ॥ ॐ क्षाहबत्थेव इति पञ्चपरलवान् ॥ ऋौ स्वोना पृथ्विवीत्यनेन सृशिकां जिपेत् ॥ (कथवा उजुतासि वराहेल इच्लेन रातवाहुना ॥ सृचिके हर मे पाप यन्त्रया पुरदेश कुरामित्यनेन शन्त्रेल प्रध्य मृदः द्विपेत्) बाः फलिनीरिति फलम् । 🦥 परिवाजयतीति पञ्चरकानि क्रिपेत् ॥ क्षों हिरम्यगर्मेति हिरएयं चिपेत् ॥ को युवा सुवासेति वस्तयुग्मेन केट्येल् ॥ अ पूर्णा दर्वी परेति कलशोपरि धान्यपूर्व पूर्णपात्र निय-४वात् ॥ अत्र वदशाबाहने पूजने ऽपि केविशादुः ॥ ततः कलरो सर्वे खमुद्रा इति गद्राचाथाइनम् । ततः कुस्माभिमन्त्रणम् ॥ कतः शास्य मुखे विष्णुरिस्थादिना इति ॥ ततः कुल्लमार्थना ॥ देवशानव-संबादे ... सर्वदेति ॥ ततो खारिका जानो प्रदेति शाग्तिसूकं पठेयु-रिति केचित् । आनो अहेति शान्तिम्कस्य राष्ट्रगको विश्वेषेशास्त्र-पूर् आचा सश्मी व जगरवः पष्टी बिराट् शेवासिप्नः शस्तिस्कजपे विनियोगः ॥ 🗳 सानो अद्भाः १२ मंत्राः ॥ शको व्यातः पवतामिग्या-दिकां वा ६ मंत्राः । तस्मिन्नेव समये आवार्गे महासमस्योत्तरः इंग्रान्यां या वलाण्यादितधीठादी विनायकर्मातमामस्मिकामितमा बाम-युक्तारतपूर्वकं प्रतिशाय बोडगोवबारैः पूजवेदिति निवन्ध-**इतः ॥ तम् विमाधकसम्बः ॥ ॐ ग्रह्मानारखा**० » ॐ तस्प्रचाय विचारे वकतुबकाय जीमहि । तजी वृत्तिः सबोद्यादिति वा ॥ गीर्थस्तु । 👺 बायं गीः । कम्बेऽब्हास्वके० वा 🔳 सुमगारी विचाहे काममालिस्ये पीमिट ॥ तको गौरो प्रकोदयांपति ॥ अप मिताकरायां

चरहोमोव्युकः ॥ सिद्यक्ष कुर्वन्ति तस्मिन्यचे आचार्यो ग्रह्योक्तिनि कुर्वे स्थिति छति वार्यनि प्रतिष्ठाच्य प्रावेशमार्गं सिमिदृह्यभादायास्मिन्होमे देवतापरिप्रहार्यमग्द्राधानं करिष्य इति सङ्कल्य
चत्त्वी शाल्येनेत्यन्तमुत्क्वा श्रव प्रधानं मितं सिमितं शालंकरं
दूष्मारं राजवुत्रमेताः प्रधानदेवता एकैक्या चर्वोहृत्वा यद्ये ॥ शेषेण् सिष्टकृतमित्याद्युत्यवानावाद्ध्यात् ॥ श्रवरावमिते तु पञ्चेवादुत्यस्तस्मते त्वाधाने होमद्वये च तथैवानुस्त्ध्यम् ॥ ततः परिसमूहनादिचवश्यपण्यन्तं कृत्वा गोचृतलोक्षीकृतेन गीरसर्पपक्षक्षेनोद्वत्तित्वाद्धं
सश्चीपधिचूणैः कस्तुरिकागस्-चन्दनादिभिवित्तिर्श्वरस्तं यजमानसश्चीपधिचूणैः कस्तुरिकागस्-चन्दनादिभिवित्तिर्श्वरस्तं यजमानसश्चीपधिचूणैः कस्तुरिकागस्-चन्दनादिभिवित्तिर्श्वरस्तं यजमानसश्चीपधिचूणैः कस्तुरिकागस्-चन्दनादिभिवित्तिर्श्वरस्तं यजमानसश्चायौ भद्दासने उपवेश्येत् ॥ ततो यजमानः स्वस्तिवाचनं कुर्यात् ॥
सन्तरं स्पगुणशालिनाभिः सुवासिनीभिनीराजनं कारयेत् । ततो मद्दासनात्पूर्वदेशाविद्यतं कल्यमादायाभिविक्षचेवाचार्यः।

मन्त्रश्च सहस्राची शतं पारमृषिभिः पावनं कृतम् । तेन त्वामभिषिश्चामि पावमानीः गुनन्तु ते॥१॥

ततो दक्षिणवेशावस्थितं कलश्रमादायाभिषिश्चेदाचार्यः।

भन्त्र:-भगं ते वरुक्षो राजा भगं सूर्यो बृहस्पतिः। भगमिन्द्रश्च वायुश्च भगं सप्तर्षयो ददुः॥२॥

ततः पश्चिमदिगवस्थितं कलशमादावाभिविश्वेदाचार्थः।

मन्त्र:-यचे केशेषु दीर्भीग्यं सीमन्ते यच्च मूर्द्धिन । ललाटे केशवी रक्ष्णोरापस्तं ब्रन्तु से हदा ॥३॥

ततः उदकदेशावस्थितकलशमादाय पूर्वोक्तेस्विभिर्मन्वैरिभिष-श्रोत्त् ॥ बृहत्पराशरेशाऽभ्येऽपि मन्त्रा उक्ताः ।

मन्त्रः-एतद्वै पादनं स्नानं सहस्रात्तम् पिस्मृतम् । तेन त्वा शतघारेण पादमान्यः पुनन्तु माम् ॥१॥ शकादिदशदिवपाता ज्ञसाद्या केशवादयः । धापस्तं प्रन्तु दौर्भाग्यं शान्ति यच्छन्तु सर्वदा॥२॥

वेदमन्त्रः -ॐ सुमित्रिया नऽ आएऽ श्रोषघयः सन्तु ।

दुर्भिति रस्तस्मै सन्तु योस्मान्द्रेष्टि यं च वयं द्विष्यः ॥

मन्त्रः- सप्तद्रा गिरयो नद्यो ग्रन्थश्च परित्रताः ।

दौर्भाग्यं प्रन्तु ते सर्वं शान्ति यच्छन्तु सर्वदा ॥॥

पादगुन्फोकजङ्कादौ नितम्बोदरमाभिषु ।

स्तनोकवाहुदस्ताग्रद्रीका द्यंसाधिसन्धिषु ॥॥

नासाखलाटकर्णभूकेशान्तेषु च यत्स्थतम् ।

तदापो प्रन्तु दौर्भाग्यं शान्ति यच्छन्तु सर्वदा ॥६॥

इत्कैतैरप्य भिषिक्षेदिति केष्मित् । चतुर्धकलशाभिषेषम यवैते पठनीयाः ॥ अथानायों यजमानस्य पश्चिमत तिष्ठम् सम्यपाणिगृहीत-कुशां तर्हि ते यजमानशिरसि औषुम्बरेण स्नु देण सार्वपतैलं सुद्धयात् ।

मन्त्रा:- ॐ भिताय स्वाहा । यजमानः इदं मिताप न मम ॥१॥
ॐ सम्मिताय स्वाहा । इदं सम्मिताय न मम ॥२॥
ॐ शालाय स्वाहा । इदं शालाय न मम ॥२॥
ॐ कटंकटाथ स्वाहा । इदं कटंकटाय न मम ॥४॥
ॐ कूष्माएडाय स्वाहा । इदं कूष्माएडाय न मम ॥४॥
ॐ राजपुत्राय स्वाहा । इदं राजपुत्राय न मम ॥६॥

श्रथाचार्योग्यर्थनादाज्यभागानतं कृत्वा चरुणा मिता-दिश्य एव जुढुयाद्यजमानस्तु पूर्ववस्यजेष् ॥ श्राचार्य्यः स्विष्टस्यादिप्रणीताविमोकान्तं कर्मशेषं समापयेत् ॥ धजमा-नस्तु श्रमिकशास्त्रयामित्वादिरशदिषपालेश्यो नाम्ना दिस् श्रिदिस् च बस्तीन् द्यात् ॥ धतानि क्रम्निस्थापन-चरुदोम-दिस्पाल-बसिदानानि मितास्थामनुदृश्योकानि ॥ ततो मितास एष बस्तिनै ममेति पायसेन माद्यमक्तेन वा बर्लि दत्वा विनायकाम्बिकयो-रश्रतः सङ्ब्बहसत्तरहुलानां मांसेन तिस्रपिष्टेन वा मिश्रमोदनमत्त्य-मांस पन्यमपत्रवं गौडी पैष्टी माध्वीति त्रिविधां सुरां च ॥ श्राह्मणस्य मांसस्थाने सत्तवणं पायसं सुरास्थाने स्वत्वणं वुग्धं चित्र पुष्पं सुगन्धिदृश्यं मूलकं पूरिकाः श्रपूपाः उद्देरकस्त्वः ॥ स्थ्यस्रं पायसं गुष्ठमिश्रतएडुलाविषिष्टं मोदकांश्च पात्रे संस्थाप्य तरपुरुवाय विवाहेति मन्त्रेण विनायकाथ ॥ सुभगाय विवाहेति मन्त्रेल चाम्विकायै निवेद-येत् । अधाचार्यो मूतनशूर्पं सर्वमुपहारशेषं संस्थाप्य चतुष्पधं गत्वा तत्र गोमयेनोपलिप्य कुशानास्तीर्यं तत्र शूर्णं बाङ्मुखं संस्थापयेत् ॥ यजमानस्वेतीर्यन्त्रीर्वलं वद्यात् ॥

मन्त्रः चितं गृह्यन्तिमं देवा आदित्या वसवस्त्या ।

गरुतोऽधात्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगा ग्रहाः ॥१॥

श्रमुरा यातुधानाश्च पिशाचा मातरोरगाः ।

शाकिन्यो यद्मवेताला योगिन्यः पूतनाः शिवाः ॥२॥
शृम्भकाः सिद्धगन्थर्वा नागा विद्याधरा नगाः ।
दिन्यालाः लोकपालाश्च ये च विद्यविनायकाः ॥३॥

श्रातां शान्तिकर्तारो अस्थायाश्च महर्षयः ।

मा विद्यं मा च मे पापं मा सन्तु परिपन्थिनः ॥४॥

साम्या भवन्तु तृप्ताश्च भूत्रमेताः सुखावहाः ॥६ति॥

स्रानेन बिलदानेन देशदित्य-वसु-मददश्वि-रुद्र-सुपर्ण-पन्नगः प्रहा-सुर-यातुषात-पिशाच-भावुरग-शाकिनी-यज्ञ-वेताल-पोगिनी-पूतना-शिबजुम्भकसिद्ध-गन्धर्ग-नग-विद्याधर-नग-दिक्पाल-क्षेक्षपाल-विद्य-विनाथक-जगच्छान्तिकर्त् ब्रह्माविमहर्षि-भूत-प्रेतेभ्य इदं न मर्मात त्यागः॥ ततः शिरस्त भूमि यत्वा पुष्पयुत्तमर्घ तत्पुरुपायेति मन्त्रेण विनायकाय सुमगायै दृश्यम्बदार्थं च द्यात् ॥ ततो दृश्यंसर्पपु-ष्पाणां पृथीकविनायकमन्त्रेण यशानाव्येति वा विनायकायाञ्जलि द्यात्॥ स्रान्यकायै पृथीकमन्त्रेण स्थानाव्येति का विनायकायाञ्चलि द्यात्॥ स्वति विनायकमन्त्रेण चेतिष्ठेत् ॥

मन्त्रस्तु-रूपं देहि यशो देहि भगं भगवति देहि मे । पुत्रान्देहि धनं देहि सर्वीन्कामांश्च देहि मे ॥१॥

व्यस्मिन्यन्त्रे भगं भगवन्त्रेहि म १त्यूद्य विशयकमुपतिष्ठेत्॥ सनन्तरं यजमानः आङमुखोपविष्ट उदक्मुखानाचार्यादीनपूजयित्या दिक्षणां द्यात् । तत उत्तिष्ट ब्रह्मण्डयत इत्यमेन यान्तु देवगणा इत्यमेन च विनायकमस्विकां चोत्थाच्य विस्तृत्य प्रतिमादिस्तवां सामग्रीमाचार्याय द्यात् । ततो यथाशकि भूवसीं दिज्ञणां दीना-नायेभ्यो दत्वा यथाशकि विनायकप्रीत्यर्थमस्विकाशीतये च ब्राह्मणा-ग्मोजविद्या सङ्गरूप्य । या यस्य स्मृत्येत्यायुक्तवा न्यूनातिरिक्तं सर्वे सम्पूर्णमस्त्रिति तान्सम्पार्यः तैरनुकातः सुद्वयुतो भुजीत ॥

इति श्रीमञ्बद्धरमहस्रिस्तुभट्टनीलकश्टकते भगवन्तभास्करे शान्तिमयुक्ते विनायकशान्तिपद्धतिः समाप्तः ॥

अथ अहयज्ञः।

स्कान्दे-देवदानवगन्धर्वी पत्तराज्ञसिकत्रसाः ।
पोड्यन्ते ग्रहपीडाभिः कि पुनर्भवि मानदाः ॥१॥
शनैश्ररेण सौदासो नरमांसे नियोजितः ।
राहुणा पीढितो राजा नजो आन्तो महीतछे ॥२॥
अङ्गारकविरोधेन रामो राष्ट्राभिवासितः ।
सप्टमेन शशाङ्केन हिरस्यकशिपुहतः ॥३॥
रविषा सप्तमस्थेन रावस्यो विनिपातितः ।
गुरुणा जन्मसंस्थेन हतो राजा सुयोधनः ॥४॥
पारहवा बुधपीडायां विकर्मसि नियोजिताः ।
पष्टेनोशनसा युद्धे हिरस्याच्चो निपातितः ॥॥॥
पते चान्ये च बह्नो ग्रहदोषैस्तु पीडिताः ।

याज्ञवन्क्यः-ग्रहाधीना नरेन्द्रासाम्रुच्छ्रायाः पततानि च । भावाभावौ च जगतस्तरमात्पूज्यतमा ग्रहाः ॥१॥

मयोगपारिजाते उत्पत्तपरिवले---

कार्योरम्भेषु सर्वेषु प्रतिष्ठास्वध्वरेषु च । नव-वंश्मपवेशे च गर्भाधानादिकम्मु ।(१॥ श्चारोग्यस्नानसमये संकान्तौ रोगसम्भवे । श्वभिचारे च यः कुर्योद्ध्रहपूजां विधानतः ॥२॥ सोऽभोष्ट्रफलमाभोति निर्विद्धन न संशयः । श्रोकामः शान्तिकामो वा ग्रहयत्रं समाचरेत् ॥२॥ हृष्ट्यायुः पुष्टिकामो वा तथैवाभिचरत्रपि ॥इति॥

गात्स्ये—ग्रहयज्ञास्त्रिघा मोक्ताः पुराखश्रुतिकोविदैः।

गथगोऽयुतहोमश्र लक्तहोमस्ततः परम् ॥१॥

तृतीयः कोटिहोमस्तु सर्वकामफलप्रदः।

ग्रहस्योक्तरपूर्वेण मण्डपं कार्येद्धधः॥२॥

रहायतनभूमौ वा चतुरस्रप्रदक्षत्वम् ।

दशहस्तमयाष्ट्रौ वा हस्तान्कुर्योद्धिधानतः॥३॥

तस्य द्वाराणि चत्त्रारि कर्त्वन्यानि विचक्तर्यौः॥इति॥

स्कान्दे-नवग्रहमस्ते कुएडं इस्तमात्रं समं भवेत् । चतुरसमधो इस्तं योनिवक्त्रं समे खलम् ॥१॥

योनिरेव वक्त्रं यस्य तत् । पुत्रादिकामनया तु योग्याद्याकारा श्रापि भवन्ति । श्रतुरङ्गुलविस्तारा मेखला तद्वदुष्टिङ्गृता । सन्न विशेषोपदेशादेकेव मेखला ।

मात्स्ये-वितस्तिमात्रा योनिः स्यात् षट्समाङ्गुलविस्तृता । कूर्मपृष्ठोश्वता मध्ये पार्श्वयोश्वांगुलोच्छिता ॥ गजोष्ठसद्द्यी तद्ददायता च्छिद्रसंयुता । मेखलोपरि सर्वत्र अस्वत्थदलसन्निभा ॥२॥

एकं कुण्डं च मरुउपेशानभागे उदीच्या वेति हेमादिः । अयु-ताबि होमे प्रश्रुत्य वशिष्ठस्तु--

> कुरार्ट तन्यध्यभागे तु कारयेच्चतुरस्रकम् । कुरारस्येशानभागे तु पूजावेदिं प्रकल्पयेदित्याद् ॥१॥

श्रज्ञ चतुरस्रमित्यनेन स्तियादिषुरस्कारेण विदितानामाकार-विशेषाणां स्त्रीपुरस्कारेण त्रिहितस्य योन्याकारस्य निवृत्तियोंनी पुत्राः शुभं•वृत्तेन्द्राभ दत्यादाः काम्यास्त्वाकारा भवन्त्येव ⊪वेधां त्रिशेषमाद्द∸

गोभिलः-कुण्डस्य पागुदीच्यां वा पाच्याग्रुत्तरतोऽपि ना ।
चतुरसः चतुर्द्वारं कर्त्तव्यं ग्रहपीठकम् ॥१॥
श्रीकावः पूर्वतः कुर्वात्युष्ट्यर्थं दक्तिणेन ह ।
पश्चाद्द्विजन्मसिद्ध्यर्थं ग्रान्त्यर्थं चोत्तरेण ह ॥२॥
ऐशान्यां सर्वकामाय साग्नेय्यां त्वभिचारके ।
नैऋत्यां पुत्रलाभाय पुष्ट्यर्थं वायवेन त्विति ॥३॥

भ्रहवेदी तु स्थपिडलपक्षेऽपि कार्या । वशिष्ठः-लिखेदष्टदलं पग्नं वेदिकोपरि तसहुलैः । भ्रत्रेकाग्नित्रहासार्थपक्षमुक्त्वा तेषां नवसंख्या कुरुडेषु तसहुर भ्रहाकारांश्याह-

प्रयोगपारिजाते भगवान्-

मनोरमे शुनौ देशे होमशालामलङ्कृताम् । कृत्वा तु संवतांभाक्षे ग्रहस्थानं मकन्ययेत्॥१॥ तम्मध्ये भास्करस्थानं भवेत्पूर्वोत्तरे बुधः । पूर्वस्मिन्भार्गवस्थानं सोमो दक्तिणपूर्वके ॥२॥ दक्तिणस्यां कुनस्थानं राहोदिक्तिणपश्चिमे । शनेस्तु पश्चिमस्थानं केतोकत्तरपश्चिमे ॥३॥ उत्तरस्यां गुरोः स्थानमेवं च स्थिएटल्लं भवेत् ।

स्थण्डिलमण्यर्थम् ।

भास्करस्य व ष्टशं स्याचन्द्रस्य चतुरस्रकम् । कुत्रस्य तु त्रिकोर्णं स्याद्वाणाकारं बुधस्य तु ॥१॥ गुरोर्दीर्घचतुष्कोर्णं पश्चकोर्णं सितस्य तु । चापाकारं शने राहोः सूर्वकेतोध्वेजाकृतिम् ।,२॥
नवधा विभनेद्गिन श्रीतकर्मीवधानसः ।
ऋत्विजश्र यथायोगं कुण्डेषु ब्राह्मणाः पृथक्॥३॥
अथ स्वृतेण जुहुयातस्य्येपानकदाककान् ।
ऋत्विजो जुहुयुः सर्वे स्वृतेणेनं पृथक् पृथक्॥॥॥
अश्री तु शक्तवान् गृश समारोपणमञ्जिषु ।
प्रधानासी निधायेमानित्थं होमं समाचरेदिति ॥॥॥

श्रवेष च स्थिएडलं भवेदित्यनेन स्थिएडलानां कुएडानां च स स श्राकारस्त त्रिश्च निवेशश्चोकः । ब्राह्मशाः पृथिगित्यनेन नवा-ऽऽचार्या ब्राह्मशास्त्र नवेत्युक्तं । अत्रार्थसंद्येषः प्रयोगपारिजाते । मध्यकुरुडे स्मार्त्तारिन प्रशीय ततो नवानार्या अष्टसु कुठ्डेर्ध्यान्नं प्रशीयाऽऽज्यभागान्तेऽकांदिक्षमिद्धिर्गुडोदनाविद्दविर्भिराज्येन च प्रदाविदनविद्वीत्वा व्यस्तसमस्तव्याद्दतिभिक्ष तिसान् दुत्वा स्विष्ट-कृदाविद्दीमशेषं कृत्वा पूर्णांदुतीर्जुदुयुरिति ॥

कुएडमुक्त्वा स्कान्दे---

तस्य चोत्तरपूर्वेशा स्थिष्टिली इस्तमात्रकम् । त्रित्रमं चतुरसं च वितस्त्युच्छायसम्मितम् ॥१॥

स्थिष्डिलं वेदिः। वत्रो मेसला।

भात्स्ये-द्विरङ्गुलोच्छितो वमः भथमः समुदाहृतः । ज्यङ्गुलोच्छ्ययसंयुक्तं वमद्वयमधोपरि ॥१॥ द्वयङ्गुलस्तत्र विस्तारः सर्वेषां कथितो नुषैः ।

तत्र प्रहानाऽऽह याज्ञवल्वयः-

सूर्यः सोमो महीपुत्रः सोमपुत्रो बृहस्पतिः। शुक्रः शनैश्वरो राहुः केतुरचेति ग्रहाः स्मृताः॥१॥ स्कान्ते नवग्रहमखे कुर्यादृश्विजश्रतुरः शुभान्। अथवा चैकमभ्यर्ष्यं विधिना ब्रह्मणः सह॥१॥

त्रिविषमपि नवग्रहमुपक्रम्य वसिष्ठस्तु-

षोडश ब्रासासान् शुद्धान् द्रमभानृतविवर्जितान्। तेषां मध्ये श्रेष्टतमयाचार्यं तं वकन्वयेदिति ॥१॥

श्रव पारिजाते नवाचार्या एको ब्रह्मा बहु त्विजः । श्राचार्यभ्यो नवभ्यश्च ग्रहार्चनफलं तत इत्युक्तेः । श्राचार्यः कमे एव कुर्यात् ॥ परे त्वारम्भमात्रम् । चेन्वाचा प्रह्यदिश्या श्रिपे तेभ्य एव देया इत्याद्युक्तम् , तद्युक्तम् । उपक्षमे एकाचार्यस्य संस्कार्यः त्वेनैकत्वमिवन् द्वितम् । तथाप्याचार्यस्य भृतभावपुपयोगाभावात्संस्कार्यत्वानुपपचेर्युत श्राचार्यः स्वकमे कुर्यादिति कल्यिते वाद्ये उपावेयत्वादाः चार्यस्य भवत्येकत्वं विवक्तितम् । उपवादितं चेदमध्यपुं वृश्यति होतारं वृश्यति पुराहितं घृषीत इत्यव मिश्रैः ।

जन्मभूर्गोत्रमप्तिथ वर्णस्थानमुखानि च । योऽज्ञात्वा कुरुतेशान्ति ग्रहास्तेनाऽवमानिताः॥१॥

तत्र वर्णअन्मनि आह दामोदरीये ब्रद्धपराधारः-

रक्तः कश्यपनो भान्नः शुक्को मससुतः शशीः।
रक्तो रुद्रसृतो भौमः पीतः सोमसृतो बुघः॥१॥
पीतो बाह्यसुराचार्यः शुक्रः शुक्रो स्मृद्दरः।
कृष्णः शनी रवेः पुत्रः कृष्णाः पापास्त्रयोऽप्यमी॥
कृष्णः केत्रः कृशनृत्थः कृष्णाः पापास्त्रयोऽप्यमी॥

स्कान्दे उत्पन्नोऽर्कः कलिङ्गेषु यमुनायां च चन्द्रमाः। श्रङ्गारकस्त्ववन्त्यायां मगधायां हिमांशुकः ॥१॥ सैन्थवेषु ग्ररुकांतः शुक्तो भोजकटे तथा। श्रनैश्वरस्तु सौराष्ट्रे साहुवैराटिनापुरे ॥२॥ श्रन्तवेद्यां तथा केतुरित्येता ग्रहभूमयः । यस्य यस्य च यहुगोत्रं तत्ते वक्ष्याम्यतः परम्॥ श्रादित्यः करमपे गोते आत्र यश्चन्द्रमा भवेत् ।
भरद्वाजोद्भवो भौमस्तथाऽऽत्रेयश्च सोमतः ।.४॥
शक्तपूज्योऽङ्गिरो गोत्राः शुक्रो वै भागवस्तथा ।
शिनः काश्यप प्वाठ्य राहुः पैठीनसिस्तथा ॥४॥
केतवो जैमिनेयाश्च ग्रहाप्तिस्तदनन्तरम् ।
श्रादित्यः कपिलो नाम पिङ्गतः सोम उच्यते ।
श्र्मकेतुस्तथा भौमो जाठराग्निबुधः समृतः ॥
ग्रुरोश्चैव शिखानाम शुक्रो भवति हाटकः ।
श्रीश्चारो महातेजा राहुकेस्वोहुताशनः ।

यतानि ब्रह्मिशेषतोऽग्निनामानि । कर्मविशेषतोऽपि देवीपुराणे-

शुभो शहविधौ स्नाग्नित्हेत्तहोमे पराजितः । कोटिहामे शिवो वहिः सर्वकाममदायकः॥१॥

किचित्रु–सत्त्वहोमे तु विहः स्यात्कोटिहोमे हुताशनः । स्कान्दे−भास्कराङ्कारकौ स्कौ श्वेतौ शुक्र−निशाकरौ ।

सोमपुत्रो गुरुश्चैव ताबुभौ पीतकौ स्मृतौ॥
छण्णं शनैश्चारं विन्धाद्राहुं चित्राश्चा केतवः।
मध्ये तु भास्करं विद्याच्छशिनं पूर्वदिविणे॥२॥
दक्षिणे लोहितं विन्धाद्रबुधं पूर्वोत्तरेण तु ।
उत्तरेण गुरुं विन्धाद्रपुर्वेणैव तु भार्मवम्॥३॥
पश्चिमेन शनि विन्धाद्राहुं पश्चिमदक्षिणे ।
पश्चिमेत्तरतः केतुः स्थाप्यो वै शुक्कतण्डुलैः॥४॥
प्रथवा वर्णकैः कार्याः कार्याः स्वर्णदिधातुभिः।

याद्ववन्ययः –ृताम्रकात्स्फटिकाद्वक्तचान्द्वनात्स्वर्छजादुभौ ।। रजतादयसः सीसात्कांस्यात्कार्या ग्रहास्तथा । विश्वष्ठः-यथारुचिममाखेन प्रतिमाः कन्ययेत्युधीः ॥ श्रत्र सर्वत्र अहाणां सूर्यादिः स्पष्टः । वीधायनस्तु'सूर्याङ्गारक-श्रुक्त-चन्द्र-बुध-सुद-सनय इत्याद्य ─

स्कान्दे-भानुं तु मण्डलाकारं सेमं तु चतुरस्रकम् । श्रक्षारकं त्रिकोणं च बुधं बाणाकृतिं तथा ॥१॥ दीर्घचतुरसं गुरुं पञ्चासं भागवं - तथा । धनुस्तुल्यं शनि विन्ह्याद्वाहुं सूर्पाकृति तथा ॥२॥ धनुस्तुल्यं केतवश्च गणेशं तत्र रूपिणम् ।

स्वित्रं इस्तपादाद्यवयवयुक्तम् । स्थापयेण्डुल्कतण्डुलैर्वर्शकेर्लेक्या इत्येतरपद्मयोर्मरङ्क्षाद्याकारतेति देमाद्रिः ।

त्तजीव-शुक्राकी प्राङ्मुखी बेयी ग्रह-सीम्यावुदङ्मुखी। प्रत्यङ्मुखी शनि-सोमी शेवा दक्तिणतो मुखाः ॥१॥

द्वं च शुक्रादीनां प्राक्षुखत्वादि सादित्यामिमुखाः सर्वं इति मारश्योकादित्याभिमुक्तवेन विकल्पते । यत्तु हेमाद्विदिकल्पपरि-जिहीर्घया प्राङ्मुकाद्ध्वेदही उदङ्मुखी वामदही पत्यङ्मुकोऽघो-दृष्टिदं जिगातो मुखाः दक्षिणदृष्टय इति ज्याचष्ट तत्र मूलं चिन्ध्यम् । विरोधतादबस्यं च । वर्णस्यगुणैर्युकान् व्याह्म्यायाहयेन्तु तान् ।

मात्स्ये-पुरुषेक्षि विश्वकथिते कुला ज्ञाक्षरणवाचनम् । अभिनणयनं कुल्वा वेद्यामानाइयेरसुरान् ॥१॥ देवानां तत्रा संस्थाप्या विश्वतिद्वीदशाधिका । आदित्याभिसुखाः सर्वे साधिशत्यभिदेवताः ॥२॥

विष्णुधर्मोत्तरे-

श्चतः पूरं प्रवश्यामि यो देवो यो ग्रहः स्मृतः । श्चित्रिरकः स्मृतः सोमो वरुणः परिकीर्तितः ॥१॥ श्वङ्गारकः कुमारश्च बुधध्व भगवान् हरिः । बृहस्पतिः स्मृतः शकः शुक्रो देवी च पार्वती ॥२॥ मजापतिः शनिश्चैव साहुर्बेयो हुँगएगाभिपः ।
विश्वकर्षा स्पृतः केतुर्ये ग्रहास्ते सुराः स्पृताः ॥२॥
स्रत प्रवान्यादितिकका मन्त्राः स्पृतिस्थापने उक्ताः ।
स्कान्दे अग्नि द्तं दिनेशाय चान्द्रायाप्स्वन्त इत्यपि ।
स्योना पृथिवि भौमाय इदं विष्णुर्वेधाय च ॥१॥
इन्द्र स्नासां सुरेड्याय शुक्रज्योतिः सिताय च ।
मजापतेति सौराय आयं गीरिति राहवे ॥२॥
केतवे ब्रह्मपद्वानं स्वैस्वैर्यन्त्रैः प्रतिष्ठिताः ।

प्तेषां च मन्त्राणां व्याहृत्याऽऽवाहयेतु तानित्युक्त्वाभिन्यांह-तिभिराबाहने विकल्पः ॥ मदनक्त्वाबाहन-स्थापनयोगेंदादु व्याहु-तिभिराबाहनम् । पत्तैर्मन्त्रैः स्थापनमित्युचे पारिजाते वामनस्तु−

वर्णवं स्वादितः क्रत्वा भूर्भुवः स्वस्ततः परम् । चतुध्या नामसंयुक्तं नमस्कारम्तयोजितम् ॥१॥ एष मन्त्रः समारूयातः ग्रहपूजाविधायकः । श्रनेनाऽऽवाहनं क्षयादिनेनैव विसर्जनमित्यूचे ॥२॥

श्चवाहमवाक्येषु विशेषमाह बीधायनः । किरीटिनं प्रमासनं पद्मकरं प्रसमर्भसमधुति सप्तादवं सप्तस्रक्ष्मं कलिक्कदेशजं काक्ष्यप-गोत्रं विश्वामित्रार्थं विष्टुप्छन्दसं रकाम्यरघरं रकामरणभृषितं रक्त-गन्धानुलेपनं रक्तछत्रध्वजपताकिनं मुक्कटकेयूरमणिशोभितमाबद्य रथं दिन्यं मेकं प्रदक्तिणीकुर्वाणं प्रदमण्डले प्रविद्यमधिदेवताग्निसहितं प्रत्यधिदेवतेश्वरसहितं रक्तजुक्तमण्डले पूर्वमुखमादित्यमावाहयामि॥१॥

किरीटिनं श्वेतास्वरधर दशायवं श्वेताभूवर्ण पाशपाणि द्विषाषुं वनायुरेशजमित्रगोत्रमाषेयार्षगतुष्टुण्छन्दसं श्वेतास्वरघरं श्वेतगन्धानुलेपनं श्वेतहत्रप्रजापताकिनं सुकुटकेयूरमाणशोधित-भारता रथं विवयं मेर्न प्रदक्षिणीक्ष्याणं प्रहमण्डले प्रविष्टमधि-देवताऽपसहितं प्रत्यधिदेवतोमासहितं चतुरस्रमण्डले प्रत्यक्ष्मुकं सोममाबाह्यामि ॥२॥ किरीटिनं रक्तमार्त्यं रक्तमूलगदाधरं चतुर्भु जं मेवगमनमवन्ति-देशजं चाशिष्ठगोत्रजं समद्ग्यापं जगती छन्दसं रक्ताम्बरधरं रका-भरणभूषितं रक्तगम्धानुलेपनं रक्तछत्रध्वजपताकिनं मुकुटकेयूरम-णिशोधितमारुद्य रथं विन्यं मेर्च प्रदक्तिणीकुर्वाणं त्रहमगुरुते प्रविष्ट-मधिदेवताभूमिसहितं प्रत्यधिदेवतास्कन्दसहितं विकोणरक्त-मण्डले दिन्णमुखमङ्गारकमाबाह्यामि ॥३॥

किरीटिनं पीतमाल्यं पीतवर्णं कर्णिकारसमद्युति खङ्गचर्मगद्यापा-णि सिंहस्थं वरदं मगधदेशजमित्रगोत्रजं मारद्वाजार्षं वृहतीछन्दसं पीताम्बरधरं पीतामरणभूषितं पीतगण्धानुलेपनं पीतछन्नभ्रजपता-किनं मुकुटकेयूरमणिभूषितमारुद्या रथं दिन्यं मेरः पदद्यिणीकुर्वाणं प्रहमगुग्रले प्रविष्टमधिदेवताविष्णुस्रहितं प्रत्यधिदेवताविष्णुस्रहितं पीतवर्णमण्डले वदङ्मुखं बुधमावाह्यामि ॥॥

किरीटिनं पीतवर्षं चतुर्भुंजं दृष्डिवरदं साक्षस्त्रकमण्डलुं सिन्धुदेशजमाङ्गिरसगोत्रं वासिष्ठार्षमनुष्टुद्धन्दसं धीतास्वरघरं पीतासरणभूषितं पीतगन्धानुलेपनं धीतछत्रध्वजपताकिनं मुकुट-केयूरमणिभूषितमारुद्धा रथं दिव्यं मेरुं प्रदक्तिणीकुर्वाणं ब्रह्मण्डले प्रविष्टं अधिदेवतेन्द्रसहितं प्रत्यधिदेवताब्रह्मसहितं पीतदीर्घ-चतुरस्रमण्डले उद्दक्षुसं गुरुमाबाह्यामि ॥४॥

किरीटिनं श्वेतवर्णे चतुर्भुं दिख्डनं घरवं काव्यं साक्षस्त्र-कमण्डलुं कीकटदेशां भागवगोत्रां श्वेतनकार्षं पंक्ति छन्दसं श्वेताम्बरधरं श्वेताभरणभूषितं श्वेतगनधानुलेपनं श्वेत-खत्रध्वजपताकिनं भुकुटकेयूरमणिशोभितमादृश्चा रयं दिव्यं भेदं प्रदृत्तिणीकुर्याणं प्रहमगडले मविष्टमधिदेवतेन्द्राणीसद्वितं प्रत्यधिदेवे-न्द्रसद्वितं शुक्रपृश्चकोणमण्डले प्राङ्भुकं भगवन्तं शुक्रमावाह-यामि ॥ ६॥

किरीटिनिमन्द्रनीलसमयुति शुल्धरं वरतं गुधवहनं समाण्-शरधरं सौराष्ट्रदेशअं काश्यपगोत्रअं सृग्वार्षं गायत्रीछन्दश्तं कृष्णा-स्यरधरं कृष्णाभरणभूषितं कृष्णगन्धानुलेपनं कृष्ण्यत्रपञ्चत्रपताकिनं मुक्कटकेयूरमण्डिशोभितमारुद्ध रथं वित्यं मेर्व प्रदक्षिणीकुर्वाणं प्रह्मण्डले प्रविष्टमधिदेवताप्रजापतिसहितं प्रत्यधिदेवतायमसिदेवं कृष्णधनुर्भगडले प्रश्यङ्मुखं शंनैश्वरमाबाह्यामि ॥७॥

किरोटिनं करालवदनं खद्मधर्मश्लघरं सिंहासनस्यं पूर्वदेशकं पाटिलगोत्रमाङ्गिरसार्थमनुष्टुःकृत्दसं रुष्णाम्बरधरं रुष्णामरणभूषितं रुष्णगम्धानुलेपनं रुष्णक्षप्रध्वजपराधितं मुकुटकेयूरमणिशोभित-भारह्म रथं दिव्यं मेरं प्रदक्षिणोक्षवीणं प्रहमण्डले प्रविष्टमधिदेवता-सर्पसिंहतं प्रत्यधिदेवताकालसिंहतं रुष्णशूर्पमण्डले दिक्षणमुखं राहुमाबाह्यामि ॥=॥

भूसान् हिवाह्न् पाराधरान् विकताननात् गृधवाहनान् किरीटिनो मध्यदेशजान् जैमिनिगोशजान् गौतमार्यान् नानाञ्जन्दश्चित्राम्बरधरां-श्चित्राभरणभूषितांश्चित्रगन्धानुत्तेपनान् कृष्णपिद्रलप्बजपताकिनो मुकुटकेयूरमणिशोभितानारक्ष रथं दिव्यं मेर्च प्रविद्याणिकुर्वाणान् ग्रह्मण्डले प्रविद्यानिष्वतात्रह्मस्वितान् प्रत्यधिदेवतानिश्चगुप्तस-दितान् कृष्णपिङ्गलक्ष्वजमग्रहले दक्षिणामुखान् केत्नावाह्यामि ॥१॥

स्कान्दे-ईश्वरं भास्करे विन्धादुमां विद्याक्षिशाकरे ।
स्कन्दमङ्गास्के विन्धादुमां विद्याक्षिशाकरे ।
स्कन्दमङ्गास्के विन्धादु शुक्ते शको विधीयते ।
शनैथरे यमं विन्धादाही कालस्तथैव च ॥२॥
वित्रमुप्तोधियः केतोस्त्येता प्रहदेवताः ।
क्टिनिधिर्कताः ।

तत्रैव — नक्ष्ये स्थानानि देवानामीश्वरादि यथाक्रमम् ।
सूर्यस्य चोत्तरे शम्भ्रमुमां सोमस्य दक्षिणे ॥१॥
स्कन्दमङ्गारकस्यैव दक्षिणस्यां निवेशयेत् ।
सौम्यात्पश्चिमतो विष्णुं ब्रह्मा जीवस्य पूर्वतः ॥२॥
इन्द्रमैन्द्र्यां सितादिद्धि मन्दाद्याग्नेयतो यमम् ।
राहोः पूर्वोत्तरे कार्लं सर्वभूतभयावहम् ॥३॥
केतोनैंक्द्रतदिग्भागे चित्रग्रसं निधापयेत् ।

स्थापनमन्त्रांश्च कथयाम्यनुपूर्वेशः । स्कान्दे-श्रतः ईरवरं ज्यम्बकरचेति श्रीश्र ते चेति पार्वतीम् ।११।। यदक्रन्देति च स्कन्दं विष्णुं विष्णो रराडिति । त्रा अद्यक्षिति ब्रह्माएं सजीपेन्द्रेति वासवस्।।२॥ यमाय त्वेति च यमं कालं कार्षिरसीति च। चित्रावस्विति मन्त्रेण चित्रगुप्तं निधापयेत् ॥३॥ श्रक्षिरापः चितिर्विष्णुरिन्द्रश्चैन्द्री मजापतिः । सर्वी ब्रह्मा च निर्दिष्टा अधिदेवा यथाक्रमम् ॥४॥ श्चिनन्द्तमिति स्वग्नेवेदणस्य उदुसमस्। स्योना पृथिवि मेदिन्या इदं विष्णुस्तु विष्णवे।।४॥ इन्द्र ऽत्र्यासात्रेतेतीन्द्रादित्यै राखा शचीस्थतौ । मजापते भजेशस्य एप ब्रह्मेति वै विधेः ॥६॥ मन्त्रो नमोऽस्तु सर्पेभ्यः सर्पाणां स्थापने पतः। भ्रहदेवाभिदेवानां नैवेशं इसुमानि च ॥ ७ ॥ ग्रहवच्चासमं दानं स्थापनं चानुपूर्वेशः।

सूर्याद्यो ब्रह्म ईश्वराद्यो देवाः अग्न्याद्योऽधिवेदाः । तन्नेश्वराः दिदेवानां सूर्यस्यैभोश्वरे सम्भुमित्यादिना पूर्वे स्थलान्युक्तानि । अग्न्याद्योऽधिदेवास्तु ब्रह्देवयार्मध्ये स्थाप्याः । तथा च मद्भरत्ने गोभिल-विशिष्टी-

ग्रहदेवतयोर्मध्ये अधिदेवान्निधापयेत् । तत्रीय संग्रहे हु-ईश्वरादयो देवा अधिदेवतात्वेन व्यवहृता॥ अन्यादयस्तु अध्विधेदेवतात्वेन । तेषां स्थानान्तरं श्रोकम्—

> श्राधिदेवा दत्तिणतो वामे मत्यिधदेवताः । स्थापनीयाः मयत्नेन व्याहृतिभिः पृथक् पृथक् ॥१॥

तमैव वासिष्टीये तु देवतानां स्थानान्तरं चोक्तम्-

खं स्थम्बकमन्त्रेण रवेरुत्तरतो न्यसेत्।
सोमस्यात्रे यदिग्मागे श्रीश्च ते येनकात्मजाम् ॥१॥
यदकन्तेति भौमस्य स्कन्दं पाम्पे पदापयेत्।
विष्णुं विष्णो रराटेति यकेत्यूवें बुधस्य च ॥२॥
गुरोरुत्तरतोऽभ्यच्यों ब्रह्मा ब्रह्मतिमन्त्रतः।
सजोषेन्द्रेति शुकस्य प्राच्यां शक्नं निधापयेत् ॥३॥
शनेः पश्चिमतः स्थाप्यो यमाय त्वेत्यूचा यमः।
कार्षिरसीति मन्त्रेण राह्ये कालं तथीत्तरे ॥४॥
वित्रग्नसं त्र केत्नां चित्रायस्वेति नैत्र्यते।
ग्रहाश्च देवताः ख्याताः शृणुष्वातोऽधिदेवताः॥
ग्राचिरसपो भरा विष्णुरिन्द्रेन्द्राणी प्रजापतिः।
सपौ ज्ञसा च निर्दिष्टा श्रविदेवा यथाक्रमम् ॥६॥
ग्रहदेवतयोर्मध्ये श्रविदेवानिनवेशयेत्।

एतानि च वाशिष्ठीयवर्चास कैश्वित्रादियन्ते—

पारिजाते-पद्म माग्दलपारभ्य दलाग्रेषु क्रमान्न्यसेत् । इन्द्रादि खोकपालांश्च तशन्यन्त्रैः प्रपूजयेत् ॥१॥ विनायकं तथा दुर्गा वाशुराकाशमेव च । स्रावाहयेद्दव्याहृतिभिस्तथैवारिवकुमारकौ ॥२॥

एतेऽत्र विनायकाद्याः पञ्चमद्देश्य उत्तरतः स्थाप्या इति साम्प्र-दायिकाः । दक्षिणपश्चिम-वायव्योश्वर-पूर्वेषु यथाकममित्यन्ये ।

> राहुमन्दविनेशानामुत्तरस्यां यथाक्रमम् । गणेशो दुर्गा वायुश्च राहुकेस्वोश्च दक्षिणे ॥१॥ श्चाकाशमध्यनौ चेति पञ्चैतानस्थापयेह्बुधः ।

इति संग्रहमञ्चनानुसारेगेति पितामहचरणा रूपनारायणश्च-

स्कान्दे-उत्तरे शनिसूर्याभ्यां गुरुकेत्वोश्च दक्षिणे । गणाथियं पतिष्ठाप्य सर्वदेवनमस्कृतम् ॥१॥

रिव-शनि-केतु-गुरूणां मध्य इति फलितोऽर्थः । विनायकपद-मुपलत्तराम् । तेन दुर्गादयोऽप्यत्रैव स्थाप्या इति केचित् । चन्दनादि नियमस्तरीय ।

दिवाकर-कुजाभ्यां हि दापयेद्रक्तचन्द्रनम्।
चन्द्रे च भागवे चैव सितवर्णं भदापयेत् ॥४॥
कुङ्कुमेन तु संयुक्तं चन्द्रनं जीव-सौम्ययोः।
अग्रुरुं चन्द्रनं द्याद्राहुकेत्वर्कजेषु च ॥२॥
अहवर्णानि पुष्याणि गायत्र्या धूपमादहेत्।
स्वेः कुन्दुरुकं धूपं शशिनस्तु धृताच्चताः॥३॥
भौमे सर्ज्जरसं चैव श्रगुरुं च बुधे स्मृतम्।
सिह्नकं ग्रुरवे द्याच्छुके विन्वागुरुं तथा॥४॥
गुग्गुलं मन्द्रवारे सु लाचा राह्येथ केतवे।

कुन्दुचकः=सङ्लकीनिर्यासः। सिह्नकं – सिह्ना इति मध्यदेशे मसिन्हम् । विख्वागुरुं =विज्वफलनिर्याससिहतमगुरुं । मन्द्रवारः=शनिः। अधिक्योतीति मन्त्रेग दीपं द्यादतन्द्रितः। विहितधूपदीपगन्धादीनामसम्भवे तु—

माइचन्च्यः न्यथावर्णे मदेयानि वासांसि क्षस्रमानि च । गन्धाश्र वत्त्रयश्रव धूपो देवश्र ग्रम्गुलः ॥१॥

स्कान्दे-गुडोदनं रवेर्दधात्सोमाय धृतपायसम्। खोदिताय इविष्यान्नं बुधाय चीरपाष्टिकम् ॥१॥ दध्योदमं गुरोद्देधाच्छुकाय च घृतोदनम् । मिश्रितं तिलमापैश्र नैतेद्यं तु श्नीश्वरे ॥२॥

राहोर्मापोदनं दद्यात्केतोक्षित्रोदनं तथा ।

चित्रोदनम्-तिलतगडुलिमश्रं स्यादजाचीरं च शोखितम् । कर्णनासागृहीतं स्यादेतचित्रोदनं समृतम् । इति दामोदरः

पतेरेच द्रव्येर्काह्मसा भोज्याः। तथा च याज्ञवल्क्यः-

गुडोदनं पायसं चा हविष्यं चीरपाष्टिकम् । दथ्योदनं हविश्चृर्णं मांसं चित्रान्नमेव चा ॥१॥ द्याद्ग्रहक्रमादेतद् द्विजेभ्यो भोजनं बुधः । शक्तितो वा यथालामं सत्कृत्य विधिपूर्वकम् ॥२॥

वशिष्टः-उपचाराणि सर्वेषामपि शुक्लान्तरैः सदा । गन्धाभावे शुक्लगन्धं पुष्पाभावे सुगन्धकम् ॥२॥ धूपाभावे गुग्सुलः स्याद्द्रध्याभावे सु मिश्रकस् । पश्चामृतं गवामेव मिश्रकं न कदाचानेति ॥३॥

मात्स्ये-प्रागुत्तरेण तस्माच द्य्यद्यतिभूपितम् ।
चृत्ववृद्धवसंयुक्तं फलवस्त्युगान्वितम् ॥१॥
पश्चरव्यसमायुक्तं पश्चभङ्गयुतं तथा ।
स्थापयेदत्रणं कुम्भं वरुणं तत्र विन्यसेत् ॥२॥
गङ्गाद्धाः सरितः सर्वाः समुद्राश्च सरांसि च ।
गजारवर्थ्यावस्यीकसङ्गमाद्भदगोक्कलात् ॥३॥
मृत्मानीय विभेन्द्र ! सर्वोषधिसमन्विताम् ।
स्नानार्थं विन्यसेराधा यजमानस्य धर्मवित् ॥४॥

याश्चवन्ययः-ग्रवर्कः पत्तासः खदिर श्रपामार्गोऽय पिप्पत्तः । बदुम्बरः शमी दुर्वा कुशाध समिधः क्रमात् ॥१॥ ईरवरादिदेवानां स्व-स्व-ग्रहसमिक्तिरेव होमः ।

हेमाद्रौ देवीपुराखे —

गणाधिपतये देया भथमा तु वराहुतिः । अन्यथा विफलं विष्ठा भवतीह न संशय इति ॥

धाश्वलायनः—

जुहुयात्समिदञ्जाज्येनासिऋरिभर्यथाक्रममिति । समित्सु विशेषमाह याज्ञवन्त्रयः—

होतच्या मधुसर्पिभ्यां दक्षा चीरेण वा ग्रुता !

इति चात्र सम्प्रति यस देवताकानेकद्रव्यासामेकैबाहुतिः साम्रा-ज्यवस्तिदित वाच्यम् ।

श्रादी हु समिद्ञाञ्यैः पृथमष्टोत्तरं शतमिति नाशिष्टात् ।

श्चन्यवापि सम्प्रतिपश्चदेवताके स्मार्तं कर्मण्यनेकद्रव्यके पृथ्येव होस इति साम्प्रदायिकाः । बहुषु कर्मस्र प्रायो वचनान्यप्येवम् ।

स्कान्दे — आकृष्योन सहस्रांसोरिमं देवा तथेन्दवे । अग्निम् द्वेति भौमाय जहनुष्यस्य पुधाय च ॥१॥ बृहस्पतेति चा ग्ररोः शुकायाऽकात्परिश्रुतः । श्रुनैश्वरस्य मन्त्रोऽयं शन्नोदेवीख्दाहृतः ॥२॥ कयान इति राहोश्च केतुं कुएवंस्तु केतवे ।

गारस्ये-आवोराजेति रुद्रस्य वर्षि होमं समाचरेत् ॥३॥ आपो हिष्ठेत्युमायास्तुस्योनेति स्वामिनस्तथा । विष्णोरिदं विष्णुरिति त्वमित्सेति स्वयम्भुवः॥४॥ इन्द्रमिदेवतातय इतोन्द्रस्य प्रकोर्तितः । तथा यमस्य चायश्रीरिति होगः मकीर्चितः ॥४॥ कालस्य अद्यज्ञानमिति मन्त्रः प्रशस्यते । चित्रगृप्तस्य चाद्रातमिति पौराणिका विदुः ॥६॥ श्राग्न द्नं हलीमह इति विश्लोरुदाहुतः ।
इन्द्रायेन्द्रो मरुत्वत इति शकस्य शस्यते ॥%॥
एचानपिं सुभगे इति शच्याः समाचारेत् ।
मजापतेः पुनहोंमं मजापत इति रमृतः ॥व॥
नमोऽस्तु सर्पेभ्य इति सर्पाणां मन्त्रा उच्यते ।
पूषं ब्रह्माय ऋत्विज इति ब्रह्मस्युदाहृत ॥६॥
विनायकस्य चात्न इति मन्त्रो वृधैः स्मृतः ।
जातवेदसे सुनवाम दुर्गामन्त्रोऽत्र उच्यते ॥१०॥
पूर्णाहृति च सूर्दानं दिव इत्यिभमातयेत् ।
स्कान्दे—मैंवेद्यशेषं हुत्वा च होममन्त्रादनन्तरम् ।
श्रथ व्याहृतिभिद्धत्वा एकैकस्य यथाक्रमम् ॥१॥
श्रष्टोत्तरं च साहसं शतमृहादिकं तथा ।
श्रष्टाविश्विरष्टौ वा एकैकस्य तु होमयेत् ॥२॥
होतव्यं च धृतं वत्र चरुलक्षादिकं पुनः ।

श्रथेति अधवेत्यर्थः । गृहीत्वा तामयाम्यिकामितिवत् । मदनस्त्व-यवेत्येय पपाठ तसन्मन्त्राणां व्याहृतीनां च परस्परं विकल्पः । श्रथा-ऽष्टोत्तरसहस्रादिसंख्यादि तु पस्त्रह्येऽपि नैवेदाशेषहोमस्तु शासा-विशेषपर इत्यपि स एत सत्तादिकः पुनव्याहृतिभिहामो मन्त्रे-दंशाहृती हृत्या स्मृत १त्यन्वयः । मन्त्रेग्रह्मन्त्रेः । व्याहृतिभिह्यं-स्ताभिः समस्ताभिध्व । तातत्त्ररण्यस्तु । श्रथ व्याहृतिभिद्यं-स्ताभिः समस्ताभिध्व । तातत्त्ररण्यस्तु । श्रथ व्याहृतिभिद्यंति पृथ्यवाययं पस्त्रस्यति तु मतिदैवतमश्चादिसंच्यान्वयार्थम् । एकैकस्य तु होमयेवित्येकैकपदं तु चर्वादिद्वव्यपरम्, न देवतापरं । श्रास्त्रस्येव होमे घृतचव्यव्यविधिरये सद्यादिक्यपरम्, न देवतापरं । श्रास्त्रस्येव होमे स्ताविध्यर्थे । मग्त्रेरित्यादि तु चरुहोमोत्तर्यः सोमं राजानमिति सन्त्रेण् यथाप्रहृतिस्विध्वद्वसुत्वा सूर्यादिमन्त्रे-ईशद्याहृतीः प्रतिवैवतं सुस्रहोमादिद्वच्येण् हुत्वा व्याहृतिभिर्वसादि

मन्त्रीर्देशाहुतीहु त्वा होमो व्याहृतिभिः स्पृतः ॥३॥

होमः कार्य इत्याहुः। यबाद्यन्यतमद्भव्येण प्रहादिमिः प्रत्येकं दशाहुती-स्त सन्मन्त्रेहुँत्वा तेनैव द्रव्येण व्यस्तसमस्तव्याहृतिमिरयुत्तव्या-कोटयम्यतमसंख्यया जुहुचादिति हेमादिमदनौ । तानि च द्रव्याणि देवीपुराणे---यवव्रीहि-धृत-ज्ञीर-तिल-कंग्र-मसारिकाः ।

---यवन्नाह-धृत-सार्-तिल-कश-मतारकाः पङ्कुजोशीर-विल्वाक-दत्ता होमे मकी र्तिताः ॥१॥ उद्ब्रुखाः माङ्गुखा वा क्रुश्चेत्रीद्यशपुद्भवाः । यन्त्रवन्तश्च कर्त्तव्याश्चरवः मतिदैवतम् ॥२॥ द्रुत्वा च तांश्चरूत् सम्यक् कृतो होमं समारभेत् ।

चर्वादिकं च घृताचक्तं होतध्यम्—

होतव्यं च घृताद्यक्तं चह भक्ष्यदिकं पुनः | इति-मातस्यात् भक्षं द्वानादि । वहनैंबेद्यशिष्टो गुडोदनादिः । तानि द्रव्याण्यु-कत्वा इत्येतानि हर्षीयि स्युः समित्संख्यासमाहुतीरित्याभ्यनायनोकेः श्राधिदेवताभ्योऽपि होमः—

हेमाद्रौ-चारुणा चा समिज्ञिश्व सर्पिषा चा तिलैः क्रमात् । तत्त्रमन्त्रीश्व होतन्याः क्रमादशाधिदेवताः ॥१॥

गृह्यपरिशिष्टे—प्रधानदशांशेन पार्श्वदेवतथोरिति अधिदेवतादि-होमे संख्या वाशिष्ठे द्वित्राश्वेदाधिदेवताः पञ्चानां चैव पञ्चधेति । द्वित्राः पञ्च । पञ्चानां गणेशादीनां पञ्चधा प्रश्वेकमित्यर्थः । केचित्तु द्वी वयो वा द्विशः । विनायकादीनां पञ्चधा प्रकेकमिति केचित् ।

प्रयोगपारिजाते--

इन्द्रादिलोकपालांश्व तश्चन्मन्त्रैः प्रपूजयेत्। तशन्मन्त्रीर्जेषं कुर्यात्ततो होमं समार्थेत्।।१॥

नृसिंहपुरायो-

ततो च्याहृतिभिः पश्चाङ्जुहुयाच तिलादिकम् । यावस्त्रपृच्यते संख्या लक्ष वाकोटिरेव वा ॥१॥ वा शब्द।स्युत्तमधि श्रहयङ्गक्ष व नियतकालीनः स्वेच्छायहः स उच्यतं इति भविष्योचरात्—

ततो च्याहृतिभिः कुर्याचित्तहोमं प्रयक्ततः । प्रथमोऽयुतहोमः स्याल्लच्छोमो द्वितीयकः ॥ १ ॥ तृतीयः कोटिहोमः स्यात्त्रिविधो ग्रहयज्ञकः । एकरात्रं त्रिरात्रं वा पश्चरात्रमधाऽपि वा ॥ २ ॥ शिवगार्था विष्णुगार्था शान्ति बाह्यसभोजनम् । समापयेत्मतिदिनमे वं भक्तिसमन्त्रितम् ॥ ३ ॥

इति बारिल्डेप्येकराजादि जहर्गं विथमानाव्यार्थम् । अत्र स्का-विजयोऽपि तुसादानवदिति केचित् ।

वाशिष्टे — अधाभिषेकमन्त्रेण वाद्यमङ्गलगीतकैः ।
पूर्णकुम्भेन तेनैव होमान्ते शागुदङ्गुर्वैः॥ १ ॥
अध्यङ्गावयवै जैद्यान् हैमसग्दामभूषितैः ।
यजमानस्य कर्त्तव्यं चतुभिः स्नपनं द्विजैः॥ २ ॥

अभिवेकमन्त्राः प्रथोगे बदयन्ते-

विशिष्ठः — स्विस्तकं कन्पवेत्पथात्कुएडस्येशानभागतः ।

यजमानाभिषेकार्थं तत्र भद्रासनं न्यसेत् ॥ १ ॥

माङ्गुखस्योपविष्टस्य यजमानस्य तत्र च ।

श्रभिषेकं ततः कुर्युः साचार्याः षोडशित्विजः ॥ २ ॥
विविधैर्यकृतीर्योषैः स्तमागध्नैः सह ।

ततस्तस्याभिषिकस्य स्वार्थं वित्तिप्रत्विपत् ॥ ३ ॥
दिग्विद्यु विचित्राः नेदीपैनीराजयेचतः ।

शुक्रमान्याम्बर्भरः शुक्लगन्धानुलेपनः ॥ ४ ॥

ततो मण्डपगगत्य ध्यायेदित्रं सुरान्यहान् ।

मत्येकं मतिमन्त्रेथं द्यात्युष्पाञ्जन्तिं तत इति ॥ ५ ॥

वामनः — आवार्षमभृतिभ्यश्च ग्रहाचैनफलं ततः । समिदाज्यचरूलां च तिलहोमफलं च यत् ॥ १॥ ब्रह्मत्वे कुम्भपूजायां चाऽर्चनस्य फलं च यत् । गण्यपत्तेत्रपाश्वीशहुर्मादेव्यक्षदेवताः ॥ २॥ तासां जयफलं सम्यग्यह्वीयाज्यलपूर्वकम् ।

पतानि च वामनवचांसि निर्मूलानीति पितामध्यरणाः । वाशिष्ठ-गोभिलवचसामपि केचिदाहुः ।

वशिष्ठः-ततो जपादीन् जुहुयात्पूर्णाहुतिमथाऽञ्चरेत् । तत्रैव-मन्त्रेण सप्त ते ऽञ्चग्ने इति पूर्णाहुतिं चरेत् ॥१॥ श्चित्तपुराणे-मूर्दानं दिव मन्त्रेण संस्रवेण च धारया । दद्यादुत्थाय पूर्णा वै नोपविश्य कदा च नेति ॥२॥

मात्स्ये पूर्णांद्वतेरेकरवान्यन्त्राणां विकल्पः । उपांशु याज इत्र शास्त्राभेदभिन्नामां याज्यानुवाक्यामां समुच्वयेन तु पठन्ति बसोर्खाः। स्वयुतदोमे गस्ति प्रमाणाभावात् ।

ततः शुक्लाम्बरधरः शुक्लगन्धामुलेपनः ।
सर्वोषधेः सर्वगन्धेः स्मापितो वेदपुत्रवैः ॥१॥
यत्रभानः सपत्नीक ऋत्विजस्तान्समाहितः ।
दक्षिणाभिः प्रयत्नेन पूजयेद्दगतिसमयः ॥२॥
सूर्याय कपिलां धेतुं द्धाच्छद्वं तथेन्दवे ।
रक्तं धुरन्धरं द्धाद्धौमाय कत्रदाधिकम् ॥३॥
बुधाय जातरूपं तु ग्रुपवे पीतवाससी ।
श्वेतारवं दैत्यगुरवे कृष्णां गामकस्त्नवे ॥४॥
श्वायसं राहवे द्धात्केतवे छागम्रत्तमम् ।
सुत्रर्णेन समाः कार्यो यज्ञमानेन दिव्याः ॥४॥

बुधश्रीत्यर्थे देख हेसा सह सर्वा मृत्यतः समा इति केचित् । अस्मिन्पत्ते चोडशमाधविशिष्ठहेमवाचि सुवर्णपदाऽसमंजसस्या-पत्तेश्तादशसुवर्णमृत्यं प्रत्येकमिति परे वद्वत्यमृत्येषु तथा हेमाऽपि देयं यथा सर्वाः अत्येकं दशमाधसुवर्णन समा मवर्शिति तुसम्यक् ।

सर्वेषामथवा गावो गुरुवी येन तुष्यति । स्वमन्त्रेण प्रदातन्याः सर्वाः सर्वत्र दक्तिणाः ॥१॥

स्कान्दे-केतने छागमांसानि सर्वेषायेन काञ्चनमिति । तत्रैव-यस्तु पीडाकरो नित्यं स्वल्पवित्तस्य वा प्रहः। तमेन पूजयेद्धनत्या दिल्लाभिः स्वशक्तितः।

दानोद्योते आश्वलायनः-

यथाशक्ति ततो विमानृत्विजश्चेशरानिष । एकमेकाहुतौ विमं होमे लक्षेन भोजयेत् ॥१॥ अत्यर्थो मध्यमश्चापि विभमेकं शताहुतौ । सहस्रस्य हुतैबैंकं जघन्योऽपि मभोजयेत् ।

भत्रैव-तस्माहातुमशक्तोऽपि दक्तिणां वाश्रमेव वा । जपैः प्रशामैः स्तोत्रैश्र तोषयेत्तपेयेद्गुरुम् ॥३॥

स्कान्द्रे-यथा ब्रहो द्विजस्तद्वद्विज्ञेयो वेदपारगः । तोषयन् मृदुबस्ताधैस्तुष्टमेनं विसर्वज्ञेयेत् ॥१॥ स्रबद्दीनो दहेदाष्ट्रं मन्त्रहीनश्च ऋत्जिः । यजपानमद्विषयो नास्ति यज्ञसमो रिपुः॥२।

सर्वेद-यथा समिन्दतं मन्त्रं मन्त्रेश प्रतिहन्यते । एवं समुच्छितं घोरं शीघ्रं शान्त्या विनश्यति ॥३॥ द्यहिसकस्य दान्तस्य धर्माजितधनस्य च । नित्यं च नियमस्थस्य सदा सानुप्रहा प्रहाः ॥४॥ ग्रहा गावो नरेन्द्राथ ब्राह्मणाश्च विशेषतः । पूजिताः पूजयन्त्येते निर्देहन्त्यपमानिताः ॥४॥ ग्रहाणामिदमातिथ्यं कुर्यात्संवत्सरादिपे । ग्रारोग्यवलसम्पन्नो जीवेच्च शरदां शतम् ॥६॥

मास्त्ये-एवं समग्राश्चिष्याच सर्वान्देवान्विसर्जयेत् । तत्र मन्त्रः-वान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय पार्थिवीम् । इष्ट्रकाममदानार्थे पुनरागमनाय च ॥१॥

भविष्योत्तरे-ततः समाप्ते यहे तु कारयेत्तु महोत्सवम् । शंखतूर्यनिनादेन ब्रह्मघोषस्वेण च ॥ १ ॥

मात्स्ये-छनेन विधिना यस्तु ग्रह्णूजां समारभेत् ।
सर्वान्कामानवाप्नोति शेत्य स्वर्गे महीयते ॥१॥
स दैवायुतहोमोऽयं नवग्रहमखः स्मृतः ।
विवाहोत्सवयशेषु मतिष्ठादिषु कम्मस्नु ॥२॥
निर्विच्नार्थं ग्रुनिश्रेष्ठ ! तथोद्देगाञ्चतेषु च ।
वश्यकर्पाभिचारादि तथैनोभाटनादिकम् ॥३॥
नवग्रहमखं छत्वा ततः काम्यं समारभेत् ।
छात्यथा फलदं पुंसां न काम्यं जायते किषत् ॥४॥
तस्मादयुतहोमस्य विधानं द्यु समाचरेत् ।

विवाहेत्यादिना च विवाहादिषु काम्येषु कर्मस्वक्षत्वमुक्तम् ।
सत्र प्रहस्वरूपवर्णदेशनोवान्तिस्थानसुक्षाकारस्थापनहोममन्त्रचन्दनधूपदीपनैवेद्यसमिद्द्विणाधिदेवतामस्य धिदेवतोपदेशकदाक्येषु धहाणां स्वरूपनिर्देशस्थाधनहोममन्त्रोपदेशवाक्येषु वाधिदेवतामस्पाधिदेवतादिनायकादिपञ्चलोकपालानामनेकस्मृतिपुराणमेदेन भूयो
विस्वाविभिरनेकैः पर्यायशन्दैरूपस्थितेर्नात्रक्षयेधशुरूदिन्यमः ।
भाषि सन्ववर्णनेकशन्दोपस्थितिः । शन्दविशेषहेवता अनुद्य-

तत्सारकतया मन्त्रविनियोगेन मन्त्राणां वेषताशयकत्वायोगात् । तेषां बाहुएथेनारपश्लिञ्जनवाचा। अतो व्रस्थत्यागादिषु स्वरूपाति-निह्यकस्मृतिमन्त्रवर्णोपस्थितशब्दानामन्यतमेन शब्देनोहेशो प्रहाधी-नामिति शिष्टाचारोप्येवम् । स्रत्र ब्याहृति-करगुके युत्तहोमेऽग्निवायु-सूर्यप्रजापतय एव देवताः । न नवप्रहाः । पेन्द्रयादिवसत्प्रकाशकत्वेन बिनियोगासाबात्। स्रत पत्र पारिजाते—ॐ भूर्भुवः स्रुवश्चेति तिस्रो व्याहतयो जपेत्। श्रामिश्च होमे तिस्रविश्चतुर्थी स्पान्समा-सत इति समस्तामिरेव होमः स चान्नि-बायु-सूर्य-वैज्ञत्य इति तु महनः। खर्वया ब्याइतिहोमेन बहा देवता इति । प्रधानं चात्र प्रह-पूजा तदोमोयुत होमाविथा । श्रीकामः शान्तिकामो वा ब्रह्यहं समाचरेवित्यादिना तत्पूजा तद्योमयोः फलसम्बन्धात् । महयज्ञ-क्रिवेत्युक्त्वा मधमोऽयुतहोम इत्याविनाऽयुतलक्षकोटिहोमानां प्रह-य अविशेषकःविनोपक्रमात्। तस्माष्युतहोमस्य विधानं तु समाचरे-वित्युपसंदाराच । प्रद्वाप्रहदेवस्यकर्मसमृद्धे प्राणभूत उपद्धातीति बर्ल्लिगसमबायेन प्रहयकश्च्यः । तातचरणास्त्वयुत्तहोमादीनामेव प्राधान्यं प्रदृष्टोमस्त्वकृतित्वादुः । तदाशयं म जाने यो हि कामशुम्देव श्रोकामः शान्तिकामो वा प्रहयद्यं समाचरे-बित्यादिः स ताबद्यहपूजाहोमयोरेबोजितः। प्रहसम्बन्धमासे प्रह-वद्यश्चन्दस्य तन्नामत्त्रात् । न चायुत्तहोमादीनां फलसम्बन्धे तत्मकर-गुपाडादुप्रहप्शाहोमयोर्कतेति बाच्यं वैपरीत्यस्यापि सुवबत्वात्। श्चयुतहोमादिशन्दानां प्रदृषक्षसामानाधिकरएयेन प्रदृयहनामत्वे तु लिकसमबायेन आर्थवाविकः फलसम्बन्धस्तु ।

> श्चनेन विधिना यस्तु ग्रहपूर्जा समाचरेत् । सर्वोन्कामानवाप्नोति मेत्य स्वर्गे महीयते॥१॥

इत्यत्र यज्ञदेवपूजासंगतिकरण्यानेश्वित्रयनुशिष्योः पूजाहोमयोः सदैवायुतहोमोयमित्याचुपकस्य निर्विद्रार्थं मुनिश्रेष्ठ इत्यादिना त्वयु-तहोमादिनामपि स्मृतिषु पाय भार्थवादिकमेव फलम् । अत्र कामग्रा-ब्दोपनीते फले सत्पार्थवादिकं सम्बन्धवे न वेति तु विचारान्तरम् । कि व याह्यदक्यादिस्मृतिषु न ताववयुतहोमादीनां विधिनांष्यनु-बादः । अतो प्रदृप्ताहोमयोः प्राधान्यामावे तत्रत्येतिकर्शस्यक्षा- सम्बन्धो न स्यात् । श्रतो ग्रहपूजाहोमयोर्णि प्राधान्यं माति । श्रत एव कचित्केत्रलग्रहमलेषु तदक्रकेषु च शान्तिकादिकमस्वेकस्मृत्यु-काङ्गप्रधानादरेण स्मृत्यन्तरोक्तप्रधानभूतायुतादिहोमं विनाऽपि शासान्तरोक्तश्रहयागाभ्यासंविनेकशाखीयश्रहयागाभ्यासमात्राणामित्र पूजा श्रहदेवत्यहोमयोरेनानुष्ठानं कथिञ्चत् शिष्टानां सङ्गच्छते । प्रहपूजाहोमयोरङ्गत्वे त्वङ्गमात्रानुष्ठानमेव स्यात् ।

अथ प्रहादीनां लच्चणानि ।

मात्स्ये-पद्मासनः पद्मकरः पद्मगर्भसमञ्जूतिः। सप्ताश्वरथसंस्थश्च द्विग्रजः स्यास्तदा र्विः ॥१॥ श्वेतः श्वेताम्बर्धरो दृशान्तः श्वेतभूषणः । गदापाखिद्विंबाहुश्र कर्तव्यो बरदः शशो ॥२॥ रक्तमाल्याम्बर्धसः शक्तिश्र्लगदाधरः। चतुर्श्वजो मेषगमो दरदः स्याद्धराञ्चतः ॥३॥ पीतमारुपाम्बर्थरः कर्णिकारसमयुतिः । स्नब्गचर्मगदापाणिः सिंहस्थो बरदो बुधः ॥४॥ देव-दैत्यगुरू तद्दत्पीतश्वेती चतुर्भुजी। दिएडनौ बरदौ कार्यों सालसूत्रकमण्डलू ॥५॥ इन्द्रनीलधुतिः श्र्ली वस्दो ग्रधवाहनः। वाखवाखासनघरः कर्तव्योऽकीमुतः सदा ॥६॥ कराखबट्नः खड्गचर्मश्रूली बरप्रदः। नीलः सिंहासनस्थव राहुरत्र प्रशस्यते ।।।।। धूम्रा द्विवाहवः सर्वे गदिनो विकृताननाः। गृधासनगता नित्यं केतवः स्युर्वरवदाः ॥=॥ सर्वे किरोटिनः कार्या प्रहलोका हितायहाः । ष्यकुलेनोच्छिताः सर्वे शतवष्टोत्तरं सदेति ॥६॥

अथाधिदेवताप्रत्यधिदेवतालच्चणानि---

विष्णुधर्मोत्तरे—

पश्चवस्त्री दृषारूदः प्रतिववत्रं त्रिलोचनः। कपाली शूलवट्वाको चन्द्रमौत्तिः सदाशिवः ॥१॥ श्राचसूत्रं च कमलां द्र्पेगां च कमण्डलुम्। डमा विभर्ति इस्तेषु पूजिता बिदशैरपि ॥२॥ क्रुपारः षरमुखः कार्यः शिखरडकविभूषणः । रक्ताम्बरघरो देवो मयुरवरवाहनः ॥३॥ कुन्कुटश्र तथा घएटास्तस्य दित्तरणहस्तयोः। पताका वैजयन्ती स्थारबक्तिः कार्या च वामयोः ॥शा विष्णुः कौमोदकी-पद्म-शङ्ग-चक्रधरः क्रमात् । भद्त्तिर्णं द्त्तिखाधः करादारभ्य नित्यशः ॥५॥ पद्मासनस्थो जटिलो ब्रह्मा कार्यश्रदुर्भुजः । श्रद्ममालां सर्वं विश्वत्पुस्तकं च कमग्रहलुम् ॥६॥ चतुर्दन्तगजारूढो वजी कुलिशभृत्करः। शचीपतिः मकर्त्तव्यो नानाभरणभूषितः॥७॥ ईपश्रीखोपमः कार्यो दण्डहस्ते विजानता। रक्तद्वपाशहस्तथः यहामहिषवाहनः कालः करालवदनो नीलाइश्र विभीषणः पाशहस्तो दख्डहस्तः कार्यो दृश्चिकरोमवान् ॥६॥ श्रवीच्यवेपस्ताकारं द्विश्चनं सौम्यदर्शनम् । दितिए। छेखनी चित्रगुप्तं वामे तु पात्रकम् ॥१०॥ पिङ्गलश्मश्रुकेशाचाः पीनाङ्गजंडरोऽङ्खाः द्यागस्थः साचसूनोऽसिः सप्ताचिः शक्तिथारकः ॥११॥ चिद्रितं चमरेणास्य करमन्यं मकन्ययेत् ।

श्रापः स्रोरूपधारिएयः श्वेता मकरवाहनाः ॥१२॥

दधानाः पाशकलशौ मुक्ताभरणभूषिताः ।

शुक्रवर्णा मही कार्या दिव्याभरणभूषिता ॥१३॥

चतुर्भुजा सीम्यवपुश्वग्रदांश्वसदशाम्बरा ।

स्वपात्रं सस्यपात्रं पात्रमोषिवसंयुतम् ॥१४॥

पद्यां करे च कर्षव्यं भूवो याद्यनन्दन !।

दिङ्नागानां चतुर्णी सा कार्या पृष्ठगता तथा ॥१५॥

विष्णोरिश्वस्य चोकम्--

वामे शच्याः करे कार्या सीम्या सन्धानमञ्जरी । वरदा मस्टिता कार्या द्विश्वजा च तथा शची ॥१॥ यज्ञोपवीती इंसस्य एकवक्तश्रत्यश्चेजः । श्रद्धं सूर्वं सर्वं विश्वत्कुस्टिकां च प्रजायितः॥२॥

श्रचं श्रचमालाम् । कुरिडकां कमरख्युम् ।

श्रमसूत्रधराः सर्वाः कृष्टिकाषुष्टश्रृष्णाः । एकभोगास्त्रिभोगा वा सर्वे कार्याश्र भोषणाः ॥३॥

ब्रह्मसङ्ग्रसुक्तम्—

ग्रहाणां दक्षिणे पारर्वे स्थापयेदधिदेवताः । ग्रहाणाग्रुत्तरे पारर्वे न्यसेत्यत्यधिदेवताः ॥४॥

श्रथ विनायकादिलच्णानि ।

चतुर्श्वजिक्षनेत्रथः कर्षय्योऽत्र गजाननः ! नागयद्गोपवीतथः शशाङ्कुकुतशेखरः ॥५॥ दत्ते दन्तं करे दद्याद् द्वितीये चाचसूत्रकम् । हतीये परशुं द्याचतुर्थे मोदशं तथा ॥६॥ १ शक्ति वाणं तथा शूलं लहमं वर्कं च दिस्ति ।
चन्द्रविम्बमधो वामे लेटम्थ्वें कपालकम् ॥७॥
सुकं कटं च विश्वाणा सिंहारूढा तु दिग्ञुजा ।
एवा देवी समुद्दिष्टा दुर्गा दुर्गाऽचिंहारिणी ॥=॥
धावद्धरिणपृष्ठस्थो : ध्वजधारी समीरणः ।
वरदानकरो धूझवर्णः कार्यो विजानता ॥६॥
नीलोत्पलामं, गमनं तद्दर्णम्बर्धार च ।
चन्द्रार्कहरतं कर्त्तव्यं दिशुजं सौम्यखण्डवत् ॥१०॥
दिशुजौ देवभिषजौ कर्त्तव्या रूपसंस्थितौ ।
तयोरोषध्यः कार्या दिव्या द्विष्णहस्तयोः ॥११॥
वामयोः पुस्तकौ कार्यो दर्शनीयौ तथा दिजाः ।
एकस्य द्विणेपार्वे वामे वान्यस्य यादव !॥१२॥
नारीयुगं मकर्त्तव्यं सुरूपं चारुदर्शनम् ।
रत्नभाण्डकरे कार्ये चन्द्रशुक्राम्बरे तथा ॥१३॥

अथ लोकपाल रूपाणि।

तभेन्द्राग्नियमरूपाष्यधिप्रत्याधिदेवोक्तानि— सब्गचर्मधरो बालो निष्ठितिनेरवाहनः॥ कथ्वकेंशो विरूपानः करातः कालिकापियः॥१॥ नागपाश्यरो रक्तभूषणः पश्चिनीपियः॥ वरुणोऽम्बुपतिः स्वर्णवर्णो मकरवाहनः॥२॥

बायुर्विनाथकाविएञ्चके उकः । सोमो प्रदेशु । जनस्तः सर्पः सप्रत्यधिदेवतासु । इत्ययुत्कोमः ।

अथ लत्त्रहोमः ।

तव ब्रह्मीडादीनि निमित्तान्युकान्ययुतहोशारम्भो देघीपुराणे —

लानहोमं मनस्यामि यथामीकं तु शम्भुना ।
भूमिकम्पे दिशादाहे प्रह्युद्ध उपस्थिते ॥ १ ॥
केतुसन्दर्शने चैव आदित्यस्य च कम्पने ।
कुच्छावर्णेऽथवा सूर्ये तथा छिद्रसमन्विते ॥२॥
रक्तदृष्टिस्तथा नद्यो विपरीतां नहन्ति च ।
निर्मतं गगनाइधूमं वारिमध्ये च यत्स्थितस् ॥ ३ ॥
उपसर्गास्तथा लोके रक्षान्तु न्नयकारकाः ।
यस्य राशौ ग्रहाः पञ्च अथ सप्त सुराधिष ॥४॥
ग्रह्णं चन्द्रसूर्यसग्रहेर्नाष्ट् संस्थितरित्यपि ।

तथा-कम्पनं स्वेदनं गात्रे श्रम्युपानार्धजन्यनम् । देवतानां सुराध्यत्त उत्पाताः ज्ञयकारकाः ॥१॥ ल्रज्ञहोमं प्रकृषीत कोटिहोममधापि चा । इति ।

मात्स्ये-अस्मादशागुणः मोक्तो लक्तहोमः स्वयम्भुवा । श्राहुतीभिः प्रयत्नेन दक्तिणाभिस्तयैव च ॥१॥ द्विहस्तविस्तृतं तद्वश्चहुईस्तायुतं दुनः । लक्तहोमे भवेत्कुण्डं योनियनत्रं त्रिमेखलम् ॥२॥

व्यासतो ब्रिहस्तं फलतश्चतुर्वस्तायवं भवतीत्यर्थः । तस्य चोत्तरपूर्वेण विवस्तित्रयसम्मितस् । मागुदक् प्रवर्ण तद्वच्चतुरसं समं ततः ॥३॥ विष्कम्भाद्धीच्छितं भोक्तं स्थिएटलं विश्वकर्मणा । संस्थापनाय देवानां वपत्रयसमाद्यतम् ॥४॥ तस्मिस्तावाहयेदेवानपूर्ववसपुष्पतपद्धलैः । गरुत्मानधिकस्तत्र सम्पूज्यः श्रियमिच्छता ॥॥॥ सामध्यनिशरीरस्त्वं नाहनं परमेष्ठिनः । विषपापहरो नित्यमतः शान्ति प्रयच्छ मे ॥६॥

<mark>ऋयं गरुडावाहनमन्त्रः—</mark>

पूर्ववत्कुम्भमामन्त्र्य तद्वद्वीमं समाचरेत् । सहस्राखां शतं हुत्वा समित्संख्यादिकं तुनः ॥१॥

पूर्वयदेव समिदास्यं चस्होमं पूर्वोक्तेरेव मन्त्रैः कुर्यात् । गरुत्मतः खुपर्योसि गरुत्मानिति इन्द्रं मित्रमिति वा मन्त्रः ।

घृतकुम्भवसोद्धीरां पातयेदनलोपिरे । उद्दुम्बरीमथाद्धी च ऋत्वीं कोटरवर्जिताम् ॥१॥ बाहुमात्रां सूर्व कृत्वा ततः स्तम्भद्दवोपिरे । घृतधारां देथा सम्यग्नेरुपरि पातयेत् ॥२॥ श्रावयेत्सूक्तमान्नेयं वैष्णवं रीद्रमैन्दवम् । महावैश्वानरं सम्यग्ज्येष्टसाम च पाठयेत् ॥३॥ स्नानं च यजमानस्य पूर्ववत्स्वस्तिवाचनम् । दातच्या यजमानेन पूर्ववत्स्वस्तिवाचनम् ॥ दातच्या यजमानेन पूर्ववहित्तणा पृथक् ॥॥॥ कापक्रोधविद्दीनेन ऋत्विग्भ्यः शान्तचेतसा । तद्दद्दाद्या चाष्टीया लक्तहोमेऽपि श्वत्विजः ॥॥॥ कर्त्वव्याः शक्तितस्तद्वस्तुरो वा विगत्सराः ।

ब्रह्माचार्यसहिता नामेनेयं संख्येति केचित्-

नवप्रहमस्वारसर्वे जलहोमे दशोत्तरम् । ह्याच ग्रुनिशार्द्सः ! भूषणान्यपि शक्तितः ॥१॥ श्यनानि च वसाणि हैमाचि कटकानि च । कर्णाकुलीपवित्राणि क्रण्डस्त्राणि शक्तितः ॥२॥ न कुर्याद्दित्याहीनं वित्तशाका न माननः।
श्रवत्वा होमलोपाद्वा कुलत्त्वयमवाप्तुयात्॥३॥
श्रवत्वा होमलोपाद्वा कुलत्त्वयमवाप्तुयात्॥३॥
श्रवतां यथाशक्त्या कर्त्तव्यं भृतिमिच्छता।
मन्त्रद्दीनं कृतो यस्मादुर्भित्तफलदो भवेत्॥४॥
तथा-सम्मात्पीडाकरोतीव य एव भवित ग्रहः।
तमेव पूज्येद्वक्तचा द्वौ वा त्रीन्वा यथाविधि ॥४॥
तथा-पूज्यते शिवलोके च वस्वादित्यमहद्वर्णैः।
यावत्कन्पशतान्यशौ श्रथ मोत्तमवाप्तुयात्॥६॥
तथा-पुत्रार्थी लभते पुत्रं भनार्थी लभते धनम्।
भार्यार्थी लभते पुत्रं भनार्थी लभते धनम्।
भार्यार्थी लभते भार्यी कुमारी च शुभं पतिम् ॥७॥
भ्रष्टराज्यस्तथा राज्यं श्रीकामः श्रियमाप्तुयात्।
यं यं मार्थयते कामं तं तं माप्नोति पुष्कत्तम् ॥द्याः।
निष्कामः कुहते यस्तु परं ब्रह्म स गच्छति।

॥ इति लक्तहोमः ॥

अथ कोटिहोमः।

तत्राप्ययुतसम्होमप्रकरण एव निमित्तान्युकानि । भविष्योत्तारेऽपि । संवर्ण उवाच---

भगवन् ! महदुत्पातसम्भवे भूमकम्पने ।
निर्माते पांशुवर्षे च श्रहभक्के तथैव च ॥१॥
जन्मनत्त्रपीदासु अनाष्ट्रष्टिभयेषु च ।
क्रूरासु प्रहपीदासु दुभित्ते राष्ट्रविष्तवे ॥२॥
व्याधीनां सम्भवे जाते शरीरे वेति पीढिते ।
चलेशे महति चोत्पन्ने किं कर्याव्यं नरीसमैः ॥३॥

स्वर्गस्य साधनं यश्वत्कोतिदं धनदं तथा। प्रज्ञूहि मनुजश्रेष्ठ ! तथाऽऽरोग्यप्रदं नृखाम् ॥४॥

सनत्कुमार उवाच-

शृशु राजन् ! मवध्यामि शान्तिकर्मेग्यञ्जनमम् । कोटिहोम।स्यमतुलं सर्वकामफलभदम् ॥१॥ ब्रह्महत्यादिपापानि येन नश्यन्ति तत्त्वाखात्। उत्पाताः मशमं यान्ति महत्सम्बद्यते शुभम्॥२॥ विधानं तस्य वक्ष्यामि शृणु होकमना भव । देवागारे च भवने तीर्थे वा शिवसन्नियौ ॥३॥ पर्षेते वाऽथ कुर्वीत इच्छेत्चेममारमनः । शुभनन्तत्रयोगे च बारे सर्वेग्रणान्विते ॥४॥ यजमानस्यानुकुछे कोटिहोमं समाचरेत् । पुजियला भयत्नेन ब्राह्मर्थं वेदपारगम् ॥५॥ वस्त्रीवं भूषर्णेश्चैव गन्थमान्यानुष्ठेपनैः । प्रक्रम्य विधिवत्तस्मै चात्मानं निवेदयेत् ॥६॥ त्वं मे यतः पिता माता त्वं गतिस्त्वं परायसम् । बत्मसादेन विभवें ! सर्वे में स्यान्मनोगतम् ॥७॥ आपद्रिमोत्ताय च में कुरु यहमनुत्तमम्। कोटिहोमारूयमहर्त्व शान्त्यर्थे सार्वकामिकम् ॥=॥ पुरोहितस्ततः प्राज्ञः शुक्राम्बरधरः शुचिः। ब्राह्मणैः संवृतः पुण्यैः संयुत्ः सुसमाहितैः ॥६॥ भूमिभागे समे शुद्धे मागुदक्षवर्णे, तथा । पुरायाह बाचयेरपूर्व कृत्वा विर्मास्तु पूजयेत्।।१०।। ततः समाहितो विषः सूत्रयेन्मएडपं शुभम्। छत्तमं शतहस्तं तु तद्देंन तु मध्यमम् ॥११॥

अथमं तु तद्रद्वेन शक्तिकालाद्यपेत्तया 🕂 मध्ये तु मएडपस्यापि कुएडं कुर्याद्विचत्तराः ॥१२॥ ष्यष्टहस्तप्रमाणेन व्यायामेन तथैव च मेखलात्रितयं तस्य द्वादशाङ्कुलविस्तृतम् ॥१३॥ तत्ममारणां तथा योनि कुवींत सुसमाहितः । कुण्ड्स्य पूर्वभागे तु नेदिं कुर्याद्विचक्तराः ॥१४॥ चतुईस्तां समां चैव इस्तमात्रीच्छितां छप । स्थापनं च सदेवानां कुर्याचत्नेन बुद्धियान् ॥१४॥ चपलिष्य ततो भूमिं मरहपस्य प्रकल्पयेत्। स्थापयेदिन्नु सर्वाद्ध तोरणानि विचन्तरणः ॥१६॥ ष्वं सम्भृतसम्भारः पुरोधाः सुसमाहितः। पुरुवाहत्रयद्योषेक होमकर्म समाचरेत् ॥१७॥ स्थापयिता सुरान्वेद्यां बश्यमासानरिंदम ! अस्मार्णं पूर्वभागे हु मध्ये देवं जनार्दनम् ॥१८॥ पश्चिमे तु तथा रुद्रं वसूनुत्तरतस्तथा ईशान्यां च ग्रहान्सर्वानाग्नेय्यां मस्तस्तथा ॥१६॥ बायुं भूम्यां तथैशान्यां लोकपालान्क्रमेख तु । एवं संस्थाप्य विबुधान्ययास्थानं तृपोश्तम ! ॥२०॥ **पूजयेद्विधिवद्दस्त्रैर्गन्धमाल्यानु**लेपनै : वेदोक्तमन्त्रैस्तन्तिङ्गेः पुराणोक्तैः पृथक् पृथक्॥२१॥ श्रादित्या वसवी रुद्धा लोकपालास्त्यवे नच । ब्रह्मा जनाई नश्चैक शृ्लपासिर्महेश्वरः ॥२२॥ अत्र सन्तिहिताः सर्वे भवन्तु मुखभागिनः पूजां ग्रह्मन्तु सर्वत्र मया भक्त्योपपादिताम् ॥२३॥ वकुर्वन्तु शुभं सर्वे यहकर्तुः समाहिताः

एवं तु पूजियत्राः तान्देवान्यत्नेन शुद्धधीः ॥२४॥ नैवेदींविविधेभें स्थैः फलैक्षेव छशोभितैः । ततस्तु तैद्विजैः सर्वैः क्रुग्डस्य विधिपूर्वेकम् ॥२५॥ कुर्यात्संस्कारकरणं यथोक्तं वेदनित्तमैः। ततः समाइयेद्वहिनाम्नाख्यातं घृतार्वितस् ॥२६॥ नियोजयेइद्विजांस्तत्र शतसंख्वान्द्रपोत्तम । **प्रताभे च बहूनां च यथालाभं नियोजयेत् ॥२७**॥ विद्यावित्तदयोद्धदान् गृहस्थान् संयतेन्द्रियान् । स्वक्रमेनिरतान् बुद्ध्वा ज्ञानशीलान्ययवतः ॥२८॥ चिन्तयेशत्र देवेशं पश्चास्पं तृप ! पावकम् । मुखानि तस्य चलारि सप्तजिहानि पार्थिव 🗓 ॥२६॥ एकजिहमधैकं तु तत्स्मृतं सार्वकामिकम् । धुमायमानेन दृथा होतच्यं उवलितेन ते ॥३०॥ ऋग्भिः पूर्वमुखैः कार्यो यज्ञभिश्रोत्तरामुखैः। सामभिः पश्चिमे कार्यः पूर्वेददक्षिणासुखैः ॥३१॥ श्राघारावाच्यभागौ तु पूर्व हुला विचन्नसाः। परितम् परिस्तीर्णे कल्पिते च तथाऽऽसने ॥३२॥ ब्राह्मणाः पूर्वमेवात्र सर्वे पश्चात्समाचरेत्। ब्याहृतिभिश्चैव सर्वस्तत्र विधीयते ॥३३॥ मणुबादिभिरच तन्तिङ्गैः स्वाहाकारान्तयोजितैः। जुहुयात्सर्वदेवानां वेद्यां ये चावकल्पिताः ॥३४॥ एवं मक्रपयेदाईं कोटिहोमाख्यमुत्तमम् तिलाः कृष्णाः प्रताभ्यक्ताः किञ्चि द्वीतिसमन्विताः ॥३५॥

किञ्चित्रचयः समायुक्ता इति कचित्पाटः । होतम्बद्धः कोटिहोमे तु समिधः सुपलाशजाः । पूर्णे पूर्णे .सहस्ते हु द्यात्पूर्णाहुति शुभाम् ॥३६॥
पत्रमे तन्मुले राजन् ! सर्वकामायसिद्धये ।
पूर्णाहुत्यः समारूयाताः कोटिहोमे नराधिप !॥३७॥
सहस्ताणि कृपश्रेष्ठ ! दशशास्त्रविशारदैः ।
पारम्भदिनमारभ्य ब्राह्मणैबीधावादिभिः ॥३८॥
होत्तन्यं यजमानैश्र अथवा सुपुरोहितैः ।
क्रोधलोभादयो दोषा वर्जनीयाः प्रयस्ततः ॥३६॥
यजमानेन राजेन्द्र सर्वकामानभीष्मता ।

मारस्ये-ग्रह्माच्छतगुणः मोकः कोटिहोमः स्वयम्भवा ।
ग्राहुतीभिः श्रयत्नेन दक्षिणाभिः फलेन म ॥ १ ॥
पूर्ववद्यह्वेवानामाबाह्नविसर्जनम् ।
होममन्त्रास्त एवोक्ताः स्नानदाने तथैव च ॥ २ ॥
कुण्डमण्डपवेदीनां विशेषोऽषं निवोध मे ।
कोटिहोमे चतुर्हस्तं चतुरस्रं च सर्वशः ॥ ३ ॥
योनिववत्रद्वयोपेतं तद्य्याहुस्त्रिमेखल्म् ॥

सर्वशः चतुर्द्वस्तमिति विस्तारायामकातेष्वश्यर्थः । योनियक्य-द्वयोपेतमित्येका योनिः पश्चिमतोऽभ्या दक्षिणत इति द्वेमाद्रः । वक्तं=कारुः । योनिकण्ठयुतमिति पितामहक्रणाः ।

वेदिश्व कोटिहोमे स्यादितस्तीनां चतुष्ट यम् । चतुरसा समाहृता त्रिभिवेत्रैः समग्रुता ॥ १ ॥ वत्रमानं मया त्रोक्तं वेदिकायास्तयोच्छ्यः । इक्तमयुत्तहोमे

तथा पोडशहस्तः स्थान्मध्हपश्च चतुर्भुखः॥२॥ पूर्वद्वारे च संस्थाप्य बहुत्रचं चेदपारमम्। याजुर्वेदं तथा याम्ये पश्चिमे सामवेदिनम्॥३॥

भग्रवेवेदिनं तद्दुत्तरे स्थापयेद्बुधः। अष्टी हु होमकाः कार्या वेदवेदाक्ववेदिनः ॥ ४ ॥ **१र्च** द्वादशः तान् विमान् वसमान्याज्ञुलेपनैः । पूर्ववस्युज्जयेद्भवस्या सर्वाधरणभूषितैः ।१ ४ ।। शाविस्कां च रीई च प्रावमानं सुमङ्गलम् । पूर्वतो बहुरुषः शान्ति पटनास्त उदच्युक्षः ॥ ६ ॥ शार्क रौद्रं व सीम्यं व कौष्याएउं शास्त्रिय व। पटेलु दक्षिणे द्वारि याजुर्वेदिकप्रुसमम् ॥ ७॥ वैराजमारनेयं रौद्रसंहिताम्। ज्येष्टसाम सथा शास्ति छन्दोगः पश्चिमे पटेत् ॥ 🖙 ॥ शान्तिम्कं च तथा तथा शाकुनकं ग्रुमम् ! पौष्टिकं च महाराजन्तरेखाऽप्यथर्ववित् ॥ १ ॥ पञ्चभि सप्तभिर्वाध्य होत्री कार्योध्य पूर्ववत् । स्नानं दाने च मन्त्राः स्युस्त एव मुनिसत्तम ! ॥१०॥ वसोद्धीराविधार्ग तु लक्षहोमवदिष्यते । **भ्रा**नेन विधिना बस्तु कोटिहोमं समाचरेत् ॥११॥ श्चर्याम्कामानवापनीसि सती विष्णुपर्व जजेत्। यः पठेच्छ्णुयाहाऽपि प्रहशान्तित्रयं नरः ॥१२॥ सर्वपापविश्वद्धास्मा बदमिन्द्रस्य ग्रन्छवि । व्यरंबनेशंसहसाणि दश वाडही च पर्मवित् ॥१३॥ कृत्वा बस्पलमाभीति कोटिहोमाचद्रसनुते । ब्रह्मइत्यासहस्राणि भ्रूणइत्याऽर्धुदानि च ॥१४॥ ॰ नश्यन्ति कोटिर्शमेन यथावरैवभाक्तिम् । इति कोटिहोंमः ।

अथ शतमुखकोटिहोमः ।

कंपरण ख्वाच---

बहुतास्कर्मेखो असन् ! कोटिहोमः सुँदुच्करैंः। फालेन पहता चैव कर्तु शक्यः कथञ्चन ॥ १॥ नियमा अझचर्याद्या दुष्करा इति मे सक्षः। निरोधो ब्राह्मणानां च भुशय्यादि सुदुष्करम् ॥ २ ॥ कार्याणामलघीयत्वात्यूर्वेकालाद्यपेत्रया एतदिवायं ते महान् ! सर्वशास्त्रेषु पट्यते ॥ ३ ॥ कोटिहोपस्य संचेपं वद ये अग्रसम्भव !।

सस्त्रुगार उवाच-

दशप्रुको दिग्रुकेकप्रुक्सका। चतुर्वियो महाराज ! कोटिहोमो विधीयते ॥ १ ॥ बार्यस्य सुरुतं हात्रा नैकट्यम्थ पर्वेसः। यया संदोवतः कार्यः कीटिहोमस्तया ऋतु ॥ २ ॥ गुरसा कुएउश्तं दिव्यं यथोक्तं मानसम्मितस् । एकैकस्मिन्तथा इएके दश निमानियोजयेत् ॥ ३॥ सकः पत्ते छ विमाणां सहस्रं परिकार्तितम्। **एकस्यानशक्षीतेऽग्रौ सर्वतः** परिशाबिते 🛮 😣 🖟 पक्तस्यानात्सर्वतः सर्वतः सर्वतिमन्तुत्वे परिज्ञाचिते संस्कृते-

अभी प्रणीत इत्यर्थः ।

होमं कुर्युद्धिनाः सर्वे इष्टे कुरुडे यथोदितम् । यया कुण्डबहुत्वेऽपि राजसूर्वे महाकर्ता । ५ ॥ न साध्यविबहुत्वं स्थाय प यहादि भियसे । तथा कुपदश्रतेऽच्यत्र प्रतार्विषि नियोषिते ॥ ६ ॥

एक एव भवेदाहः कोटिहोमो न संशयः। प्रं यैः क्रियते चिमं न्याकुलीः कार्यगौरवात् ॥ ७ ॥ शताननः स विश्वेयः कोटिहोमो न संशय। स्वन्पैरहोभिः कार्यं स्पादीर्घकालादिकेऽपि वा ॥ ८ ॥ तदा दशमुखः कार्यः कोटिहोमः शुभे मते। विमाणां द्विशते तत्र मनिभव्य नियोजयेत् ॥ ६ ॥ तेऽपि विज्ञातशीलाः स्युष्टेत्तवन्तो जितेन्द्रियाः । यत्र कुएरद्वयं कृत्वा विभक्ष्य च विभावसुम् ॥१०॥ होमं कुर्युद्धिंजा भूयः संस्कृत्य विधिपूर्वकम्। शतं तत्र नियोष्यं च वित्रार्धा प्रविभक्त्य वै ॥११॥ मासेऽथवाऽर्द्धमासे वा कार्य्यः काले ग्रुपस्थिते । तदापि द्विष्ठतः कार्यः कोटिहोमी विचन्नर्यौः ॥१२॥ तद्भु स्बेच्छया यशं यजमानः समापयेत्। कालेन बहुना राजंस्तदा चैकपुरतो भवेत्।।१३॥ एककुएटस्थितो वहिरेकचिचैः समाहितैः। पयालाभस्थितैर्विभैक्शनशीलैर्विचलाणैः ॥१४॥ न संख्यानियमभाऽत्र त्राह्मणानां नरोचम ! न कालनियमरचैकस्वेच्छायझः स उच्यते ॥१४॥ आहरवा कर्तुकामस्य चातुर्मास्यादि कर्मवत् । « शदा शसक्तः कर्त्तव्यो यहोऽयं सर्वकामिकः ॥१६॥ श्चयमेकशुःखो राजन ! कालेन बहुना भनेत्। बहुविद्रार्च काली वै तस्मात्संदीपमाचरेत् ॥१७॥ पत्ती वै विश्वमायुश्व विश्वं चैवाऽस्थिरं सद्यो । श्रतः संचेपतः कार्ये घर्मकार्य्य श्रशस्यते ॥१८॥ त्तर्भ समाप्ते यज्ञे ह कारयेत्स्रमहोत्सवम्।

शंखतृय्यंनिनादेन ब्रह्मघोषरवेण च ॥१६॥ ततस्तु दत्तयद्वित्रान् ऋत्विजः भ्रद्धयान्वितः। एकैकं कनकैश्चैव कुगडलैविविधिर्दूप !।।२०॥ गोशतं चैव दातन्यमस्वानां च शतं तथा। सहस्रं तु सुवर्णस्य सर्वेषामपि दापचेत् ॥२१॥ ब्रामैर्गजै रथैररवैः पूजयेख पुरोहितम्। दीनान्धकुपणान्सर्वान्वस्रोज्ञैशाःशि पूजयेत् ॥२२॥ ततभावस्ये सायाचैर्घटैः पूर्वकन्पितैः। खनहोमोक्तमन्त्रेख सदाविजयकारिया ॥२३॥ एवं समापयेथस्तु कोटिहोममखं शुभम्। तस्यारोग्यं वियाः धुत्रा श्रायुर्धेद्धिस्तथैव च ॥२४॥ सर्वपापत्तवश्चैव जायते तृपसत्तव 🗀 अनादृष्टिभयं चैव उत्पातभयमेव पा।२५॥ दुर्भिन्तग्रहपीदाश्च प्रशमं यान्ति भूतले । पापहरं सर्वकामफलमदम् ॥२६॥ **ए**तत्पुपर्यं सनत्कुभारग्रुनिना पार्थिवाय निवेदितम्। सर्वेपिसर्गशमनं भवनाशनं वा

ये कारयन्ति मनुना नुपकोटिहोमय् । भीगानवाप्य मनसोऽभिमतान् मकार्य ते यान्ति शक्तसद्वं भ्रुवि शुद्धसस्वाः ॥२७॥

श्रथ यथैते साहसाः साधस्यता इत्येकसंख्यांपकातेषु क्रमाम्ना-तेषु च विकायिसंक्षेषु याणेषु प्रथमस्याम्यातधर्मकस्य धर्मा उत्तरे-व्यवाक्रतातधर्मकेषु निकायित्याऽवान्तरासामान्यात्साहस्रः साध-स्वत्राधेकनामकत्याच्य भवतेत इत्यष्टमे निकायिनां तु पूर्वस्योत्तरेषु प्रसृत्तिः स्थादित्यत्र निरणायि । तथेष्ठ चतुर्विचो महाराजकोटिहोम इति चतुर्णां कोदिहोमनामस्यासान्तरसामान्येन सधर्मकस्यैकमुक्कस्य

घर्मा अनाम्नातधर्मकेषु ब्रिक्षुकादिषु प्रवर्षन्ते तेन तेवां निरुतित्वम् । तम हिमुचे तामन्तुः व्हर्य प्रकृतिमात् । इतपः वाहत्यः वर्षियतिहस्त-मन्दर्पेषु मञ्जामनवर्मारी कार्य तस्यीव मन्द्रमे नवर्मारी तु कुराई कुर्योद्भवत्तव रति प्रकृती वचनेनात्रापि तथा शारे।। तच्य कुण्ड-इयं वर्डस्तम् । दशस्त्रमिते होमे वद्दरं संप्रवाहत इति अविध्य-खुराणात् । पश्चद्रस्तं वा । कुएडं पञ्चकरं प्राक्तं दश्वकाहुती क्रमादिति उत्वान्तराच्य। दशक्कोत्तरमेकोनकोडियन्यंन्तं पञ्चयद्करे इत्यर्थः । अयुषदोसतः प्राप्तं एकद्रस्तत्वं प्राक्ष्यं परिमानं त्वाद्वदशर्थः स्वापत्याऽप्राइतकार्यत्वाद्वाच्यते । कर्णार्त्यारमावित कात्वावनी-केंबा। तब पत्रविश्वतिहस्ते मण्डपे मध्यनबारी दक्षिकोस्तरयोः क्रएकद्रयं निविश्तेः ॥ कथित्रम् अकृतियो क्रावशासुनमेकनामासेः । इतरपोस्तु मदकपयोः सुगम एवं निवेशः। एवं इशमुक्तेऽपि प्राकृतैः कहरतत्त्ववधिन पश्चकराखि पर्कराचि वा चस्कुण्डानि । तेषु प्रत्येकं इरालक बाहुतयः । तब पश्चविद्यतिहस्ते मध्यवे सध्यवारीकु पूर्वाविकु चतुर्द्व व्यवे संसम्मानि चत्वारि इत्यानि । प्राकृतमध्यमीकाथिः करक्त्वस्य वावत्सम्भवमनुषद्दस्य स्थान्यत्वात् । प्राचि नवमधि त माहता चतुःकरा वेशी । सतस्वरीषु चट्कुरवानि क कमिदेकीशस्तु रिक एव । कुंडहर्म मध्यमारी । अप्रस्वरोध्वष्ट/विति वेचित् । शत्रु-केऽपि पश्चविद्यतिहरते ताबन्गण्डपे शतकुरुको निवेशो वाश्रित एव । वेचारावस्ते वयपि सम्बन्धि स्थापि स्थासिकम् श्रुचेन निवेशो वाभितः । सतः शतहस्य एव विवेश उच्चते । अत सच्च-मारी प्राप्ताने वदक् संस्था पम्कानानेका पंकिः । तेशं व कुवदानां प्रत्येकमन्तरं सार्वसमदस्याः सर्तागुलानि च । ततः मतीच्या-मेतादरामेवान्यरपंकित्रमं कार्यम् । वैकीनामन्तरेवाही इस्ताः । सर्तागुकति व । यवं विद्यविकृतकति संध्यमाने अन्येषाहसु मानेबु मन्त्रे हे हेऽस्य विस्वस्थानसर्वित । मत्ये ई दश दशेति । बहु सत-कुरुवेषु अपे क समावृतिमासिः । न बैतरसायाः कोटिबोमपने कारक कति । इतका कृष्डरातं विक्यं वधोकं इस्तसमित्रवमिति सत्तमुख-मक्दचे इच्छामां इस्तपरिमाक्षेकेरिति चेचन केवित् इस्तक्षरिमकः क्रिक्व इस्ताभ्यां इस्तैकं बारिमक्ष्मित्रि वित्रहेव विवतुद्रस्तकापि पुरुवते । जिल्लाकेऽपि हु जन्मानुसका स्टब्सालये । जन एव 🖚

हेमादी - अयुते जब होतन्ये कुएटं स्याद्धस्त्मात्रकम् । दिगुखं लक्षाहोमे तु कोटिहोने चतुर्गुणमिति ॥१॥

वच्चेत्रसमिक एकव्यनान्तेनैव विप्रहरूतथाऽच्यनुपपत्या विवहु-क्ष्यनान्तेनापि क्रियते । यथा सप्तदश् माजापत्याग्यशनासमत इत्यव चोदकप्राप्तैकपर्यानन्यसङ्ख्यादेकादशावदानगणानुरोधेन अजापति-चैंबता यस्यासी प्राजापत्यः प्राजापत्यम्य प्रामापत्यम्य प्राजापत्य इति इसदितामामेकरोप एव यागो न तु वर्ष वा पञ्चेक इत्येकरोपी-चरं ठदितं चोदकवाकायचेरित्युक्तम् । यदं द्विषगृहेस्तकुयवं सम्पत्या युज्यम्त पक्षेकस्मिन्कुएडे लक्षमाद्यतय इत्याहुः। तातचर-जस्तु-ध्यासतुल्यचातेन पट्पञ्चवतुर्तिग्रह्यं गुलानां पञ्चमसताना विश्वासंगुलोबतया व मध्याधकाशविशृध्या एकैकइस्तेष्वपि शृक्या एक क्रमाहतयः कर्तुम् । अनारभ्यासातपञ्चमेकलापन्नेष भाकतः मेखतः वयवाधस्तूर्पवर्षेकहस्तःवानुरोधेनेति युक्तमाङ्कः। अजैकस्मि म्कुच्डे आज्यभागान्तं कृत्वाऽस्यकु०डेच्चप्रिप्रण्यनमिति केचित्, तक वरुणाप्रकासि कदक्तिणोत्तरवेशोरन्श्रीयमानायामाहृत्यामाग्नेयासन् क्षविष्णुबाधाराज्यभागमयाज्ञ सङ्कार्ता पूधगन्छानवदास्य मागाती स्विष्टकृषाद्यक्षानुष्ठानवदिहापि शा**बुतीतिबत्संक्य**या तिव कोटिसंक्याकेषु होमेषु सद्याः एतकुरहेरवद्धायमा-मेष्याज्यमागातिस्विष्टकवाचन्नानुद्वानमेवस्यैव व्याव्यस्थात् अप्रमादार्थेन दोक्षाकालीनआगरबेद दीक्रोपयुक्तसम्भारसंरक्र-भायजीयाधर्यसम्मारसंरज्ञकार्याति देशिकजागरकावृत्ति-षविद्वाप्यक्रिसमित्यनार्थेभाषानामृत्तिः सममन्यनिवार्थेव । न दि काषार्यकुरबस्येऽग्री समिन्ने कुण्यान्तरस्थानां समिन्धनं अवति । शत प्रायुतहोमे पूर्विविकतं वस्तदुप्रहाकारम्य कुरबीएके गया-नायतनावृद्धि विभाग्य जाजार्यकुरुदेषु प्रणीय नगाजार्या जाल्यमा-गान्तं कृत्वेत्याविमा होमरोचं समाप्य पूर्णाहुतीर्द्वत्यन्तेमाज्यमार्गा-तानां श्विष्टक्रवादीनां वरङ्गानामाश्चरित्तिवनं प्रदोगपारिजातीवं शंगकाते तदेव च कीरिड्रोमे चीरकात्यासम् । महताइसंक्यावाधेन नवतिसंख्यामानं विभीयते । यद्यपि मज्यमांतरं तथापि तद्यमेकसेनं सर्वयाक्षनामावृत्तिरेव पताक्षनविशेवः शतर्थवया कुरवेषु नव-संबंधा प्रशासाकारास्यविदेशेषाका निवर्सन्ते । अतोऽन्त्रिस्यापनोत्तरः

मेव प्रश्यनम्। यसु पारिजाते मध्यकुरुदात्मग्यनमुक्तं तथा प्रागुदगपः वर्गप्रचारवाचात् । तेन तत्संरस्याण्यं नैसूत्यकुरदादेव प्रश्यनं कार्यम् । स्रस्तु वा कथिसद्युतदोमे मध्यकुरदसद्भावातस्य च सर्वप्रधानभूतस्यवेदत्यत्यातकथिसत्तिः प्रख्यनं शतमुक्ते तु मध्ये कुरुदनिवेशाभावान्त ततोन्निप्रश्यनं मध्यस्थलसमीपमस्तिव्वनेक-कुरुदेषु तु विनिगमनाविरदः । सर्वोऽप्ययं कोटिहोमविचारस्तात-चरणैद्वेतनिर्णये सुविवृत इति नेह विस्तरः॥

श्रथ पायो मात्स्यानुसारिणीं भट्टकृतां पद्धविमनुस्पृत्य श्रहमस्वप्रयोगः ।

कर्ता प्रारम्भदिनात्पूर्वे सुद्दिने दानमयूखीयास्मदुक्तभक्षाराणाः मन्यतमप्रकारेण प्राची संसाध्य तत्र वितस्त्युक्तसूर्यं मएडपनिवेश-योग्यं चतुरस्तं चत्वरं कृत्वा पूर्वाह्ये देशकाली स्मृत्वाऽमुककर्म कर्तुं मण्डपं करिष्य दति संकल्प्य गणेशं कृर्मे शेषं वासुकि द्विआंक्षा-सम्पूज्य---

श्चागच्छ सर्वेकल्याणि वसुघे लोकधारिणि। लद्द्षतासि वराहेण सरीलवनकानना ॥१॥ मग्रहपं कारयाम्यदा त्वदूर्व्वे श्चभलचणम् । गृहा णाऽर्ध्ये मया दत्तं प्रसन्ता शुभदा भव॥२॥

दित बसुधाया अर्घ्यं दत्या स्योना पृथिवीति तां प्रार्थ्यं मण्डपं त्रद्भुद्दीच्यां मध्ये वा कुण्डं विदि च कुर्यात् । मण्डपक्षायुत्तहोमेष्ट-इस्तो दशहस्तो चा कुण्डं इस्तमितं चतुरंगुलैकमेसक्षं वेदीमण्ड-पोच्चरमाणे हस्तविस्तृता वितस्त्युच्छ्रता वप्रवयवती कार्या । तत्र प्रथमो वप्रक्यंगुलोच्छ्रता । ततुपरितनी प्रत्येकं इयकुलोच्छ्रती । विस्तारस्तु सर्वेषामाप प्रत्येकं व्यंगुलः । लच्चहोमे तु मण्डपो द्वादश् चतुर्दश्योग्रशहस्तोऽपि कुर्युं च्विष्कलतकातुःकरम् । तदेष व्यासन्तो हिकरम् । हिविचतुरंगुलोचविमेसलम् । तथेपरितनी चतुरंगुल-विस्तारा मधोगते हे अपि प्रत्येकं इयंगुलविस्तारे । कुण्डाचीशान्यां मार्डहस्तविस्तृता तद्दीच्छ्रतेशान्यवर्णा पूर्वपवित्वद्धा वेदी ॥

कोटिहोम तु गततवर्जतदर्जयोजशान्यतमहस्तो बएडपः कुण्डं तु बण्डस्तं व्यवस्तं योजशहस्तं या फलतः । तत्र श्याससमजातं मराजपमध्ये तस्य विद्यापिक्षमयोगॅनिद्धयम् । वेदी च माच्यां द्विद्द-स्तिवस्तृतेति विशेषः । द्विमुखदरामुखरातमुखेषु तु निर्णयात्रसरे सिवेश एकः कर्ता सुदिने मासपन्नादि संकीत्यं श्रीकामादिर्भेद्दपी-जानिवारस्वकामो वाऽयुत्तद्दोमं लज्ञदोमं वा करिष्य इति संकरूपः । गरोशपूजा-स्वस्तिवाधन-मात्रपूजा—(वस्तोद्धारा आयुष्यमध्यकः) वृद्धिभाद्याचार्यादिवरणाणि कुर्यात् । तत्रायुत्तदोमे चत्थार श्वतिवजो द्वी वा । लक्षदोमे द्वादशाणी चत्वारो था । कोटिहोमेऽष्टी द्वीमार्थं चत्थारो द्वारजापका इति द्वादश । अयुत्वलक्षकोदिहोमेषु त्रिष्वपि योदश वा । ब्रह्माचार्यावप्येतस्मध्य एवं सर्वत्र ।

वरणपन्त्रास्तु-

स्मानार्यस्तु यथा स्वर्गे शकादीनां शृहस्पतिः । तथा त्वं मम यद्दोऽस्मिन्नाचार्यो भन सुवत ॥ १ ॥ यथा चतुर्भुखो अस्मा स्वर्गलोके पितामहः । तथाऽस्मिन्मम यद्दो त्वं ब्रह्मा मन द्विजोत्तम ॥ २ ॥ अस्य यागस्य निष्पत्तौ भनन्तोऽभ्यर्थिता मया । सुनसन्नाः पक्कवन्तु शान्तिकं निधिपूर्वकम् ॥ ३ ॥

(कोटिहोमे तु गुरुपार्थना)

स्वं मे थतः पिता माता त्वं गतिस्त्वं परायसम् । स्नत्प्रसादेन विश्वें ! सर्वे मे स्यान्यनोगतम् ॥ ४ ॥ भ्रापद्विमोत्ताय च मे क्रुक् यहमनुत्तमम् । कोटिहोमाख्यमहुलं शान्त्यर्थं सार्वकामिकमिति ॥ ४ ॥

ततः सर्वानाचार्याचीन् स्वशाकीयानामृत्यिकशासीयानां च पदा-र्थानामनुसमयेन मधुपर्वेष संयुज्य शुक्रमास्याम्बरानुक्षेपनः सप-स्रोक श्रात्यिकसहितो मद्रं कर्णेभिरिति वेद्योवेण मर्क्षं मद्दि-स्रोक्कस्य पश्चिमञ्जारेण प्रविशेस् । तत आचार्योः— de termina de la completa del completa de la completa de la completa del completa de la completa del la completa de la completa del la completa de la comple

यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वदा । स्थानं स्थवता तु तत्सर्वे यत्रस्थं तत्र गच्छतु ॥ १ ॥ द्यपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम् । सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे ॥ २ ॥

दित सर्पपान्यकीर्य शुची वो इब्येति एतोन्विश्वमिति च हसाम्यां आपो हि हेरयादिभित्र मुधं प्रोप्य स्वस्त्ययनं तार्थमिति ऋग्द्रयं पटेत्। ततो मग्डपनिद्धतिमागे इस्तमितां वेदिं छावा तस्यां वस्तं प्रसान्यं तत्र सुवर्णादिशलाक्या नय रेकाः प्राक्पश्चिमा-यता नव च दक्षिणोत्तरायताः हरवा मध्यकोष्ट्रयतुष्टयमेकीहत्य प्रतिकोशं त्रिषु पदेषु सूत्रं द्यात्। तथा चतुर्विं शतिरर्द्धपदीन सम्य-चन्ते। मग्डलस्याग्नेयादिषु कोगेषु शंकुभतुष्ट्यं निस्ननेयुः।

सत्र भन्त्रः---

विशन्तु भूतले नागा लोकपालाश्च सर्वतः । मण्डपेऽशावतिष्ठन्तु छायुर्वलकराः सदा ॥ र्हत मन्त्रेण निरवाय ॥ १॥

ततो विखदानम्---

आग्निश्यो अपन्य सर्पेश्यो से चान्ये तान्समाश्रिताः ।
तेश्यो बिल प्रयच्छामि पुरुषमोदनगुत्तमम् ॥ १॥
नैऋत्याधिपतिरचैव नैऋत्यां ये च राज्ञसाः ।
बिल तेश्यः प्रयच्छामि सर्वे गृह्वन्तु मन्त्रितम् ॥ २॥
ॐ नमो वायुरकोश्यो ये चान्ये तान्समाश्रिताः ।
बिल तेश्यः प्रयच्छामि पुरुषमोदनगुत्तमम् ॥ ३॥
छद्रेश्यश्चैव सर्पेश्यो ये चान्ये तान्समाश्रिताः ।
धितं तेश्यः प्रयच्छामि पुरुषमोदनगुत्तमम् ॥ ३॥
धितं तेश्यः प्रयच्छामि पुरुषमोदनगुत्तमः ॥ ३॥
धितं तेश्यः श्यच्छामि पुरुषमोदनगुत्तमः ॥ ४॥
धितं तेश्यः श्यच्छामि पुरुषन्तं सत्तोतप्रकाः ॥ ४॥
धितं तेश्यः श्यच्छामि पुरुषन्तं सत्तोतप्रकाः ॥ ४॥
धितं तेश्यः श्यच्छामि पुरुषन्तं सत्तोतप्रकाः ॥ ४॥

इति नष प्रामायतरेखादेवतः पूजियत्वा दिरएया सुप्रभा लच्मी विभृति-विमला प्रिया जया काला विशोका इति नववित्तिणोत्तरायतरेखादेव-ताम्य सम्पूच्य । मध्ये व्यस्तसमस्तव्याद्वतिभिर्वोस्तुपृश्चमायाद्व वास्तोष्यते प्रतीति सम्पूच्य । वर्लि च दत्वा मध्यपदचतुष्ट्ये वास्तो-इ द्ये ब्रह्मासुमावाद्य पूजियत्वा ॐ ब्रह्मसे नमो वर्लि समर्थयामीति पायसगर्लि द्याद् ॥ १॥

ततः पूर्वपदद्वये दिच्च णस्तने धर्यमणे नमः॥ २॥ दिच्च गपदद्वये जठरदिच्च णभागे विवस्तते नमः॥ ३॥ पश्चिमपदद्वये वामभागे मित्राय नमः॥ ४॥ वामस्तने पृथिवीधराय नम इत्युदकपदद्वये॥ ४॥ अभिकोणसूत्रद्विधाकृतपदद्वयोत्तराद्वद्वये दिच्च णहस्ते

> सावित्राय नमः ॥ ६ ॥ दक्षिणार्दद्वे सवित्रे च ॥७॥

एवं नैश्वस्यपदद्वयपूर्वार्द्धपदद्वये व्रषणयोगिवृधाधिपायः ॥=॥
तत्परिचमार्द्धदे उत्ति अद्भष्यः ॥६॥
दक्षिणार्द्धदे सुखे आपवत्सायः ॥१०॥
ततोऽन्त्यपंक्तिगते ईशानपददक्षिणार्द्धे शिरिक्ष शिखिने ॥१॥
तद्विणवाही सूर्योयः ॥१२॥

तद्त्रिणयोद्द्विणवाहावेव सत्याय० ॥१३॥

तहिंदाले स्वार्दे दिस्तिसकुर्परे भुशायः ॥१४॥ तहन्त्रिरामबाही आकाशाय० ॥१४॥ तत्पश्चिमार्द्धे दक्षिणप्रवाहावेव वायवे० ॥१६॥ तत्त्वश्चिमदृये दिचाणोरौ यमाय० ॥१७॥ तत्पश्चिमयोर्दिचिएाजानौ गन्धर्वाय० ॥१८॥ सत्विथमे सार्द्धे पदे दिचलजङ्घार्या भूकराजाव ।।।१६।। तरपश्चिमे नैत्रप्रत्यपदार्दे दिनसारिकाचि सुगाय ।।।२०।। .सहस्तरार्दे पादयोः पितृभ्यः ।।२१॥ तदुत्तरे सार्द्धपदे वायस्फित्ति दौवारिकाय० ॥२२॥ त्तदुत्तरयोगीमजङ्घायां सुग्रीवाय० ॥२३॥ तदुत्तरयोर्चायजानौ पुष्पदन्तायः ॥२४॥ तदुत्तरबोर्वामोरी वरुणाय० ॥२४॥ सदु परयोगीमपारवें सुराय० तदुत्तरे सार्द्धे पदे वागपार्श्वे शेषाय० ॥२७॥ हरुसरे वाबच्यार्जे वामविश्वनन्त्रे पापाव० ॥२८॥ बल्ह्यगर्जे वामप्रवाही रोगाय०॥ २६॥ तत्माक्-सार्द्धे वायमबाहावेन पाहबे० ॥ ३०॥

नार्वे शिरमि क्रिकान ॥ १३॥ तहिमये सार्वपदे वृक्षिणनेत्रे मध्यंन्याय ॥ १९॥ तहिम्बन्यये वृक्षिम्य । ॥ १९॥ तह्य । ॥ १९॥ तह्य । ॥ १९॥ तह्य । ॥ १९॥ वृक्ष्यये । ॥ वृक्ष्यये । वृक्ष्यय

तत्त्राक्ट्रये वामकूर्यरे सुख्याय० ॥ ११ ॥ तत्त्राक्ट्रये वामवाही भन्ताटाय० ॥ १२ ॥ तत्त्राक्ट्रये वामवाहायेव सोमाय० ॥ १२ ॥ तत्त्राक्ट्रये वामांसे सर्पाय० ॥ १४ ॥ तत्त्राक्सार्खे वामश्रोत्रे भदित्यै० ॥ १४ ॥ तत्त्रागर्द्धे वामनेत्रे दित्यै० ॥१६॥ इति पट्षिशहेवता॥। तत वचरे वास्तोष्यत इति वास्तोष्यतये० ॥

ततो मण्डलाहरिशानादिषु चरक्की० विदार्थे० पूतनायै० पापराञ्चर्ये०॥ ततः पूर्वादिषु स्कन्धाय अर्व्यम्यो कुम्मकाय पिलि-पिच्छाय॥ पुनः पूर्वादिषु स्वतःदीन् । ततो मण्डलाबीमाने कल्खं संस्थाप्य तत्र वहणं तस्वायामीत्यावाद्य पूज्येत्।

> यथा मेरुगिरेः शृङ्गं देवानामालयः सदा । तथा जहादिदेवानां ममयह्ने स्थिरो भवा।१॥ इति शार्थयेत्।।

#4 श्र वहुक्तरवोदां स्वयुक्त सुप्रीवाय । ॥ ११॥ वहुक्तरवोद्या स्वयुक्त । ३५॥ वहुक्तरवोद्या । ३५॥ वहुक्तर वायस्य स्वयुक्त । ३५॥ वहुक्तर वायस्य स्वयुक्त । ३५॥ वहुक्तर वायस्य स्वयुक्त । ३५॥ वहुक्तर वायस्य । ३५॥ वहुक्तर वायस्य । ३५॥ वहुक्तर वायस्य । ३५॥ वहुक्तर वायस्य व्यव्या । ३५॥ वहुक्तर वायस्य वायस्य । ३५॥ वहुक्तर वायस्य । ३५॥ वहुक्तर वायस्य । ३५॥ वहुक्तर वायस्य वायस्य । ३५॥ वहुक्तर वायस्य वायस्य वायस्य वायस्य । ३५॥ वहुक्तर वायस्य वायस्

तत उदुम्बरावि—समित्तिलाज्यैः स्वतन्त्रस्थिष्डलेऽष्टाविश्वित-रष्टी वा मस्येकं तत्त्रप्ताममन्त्रेर्द्धत्वा बास्तोष्यत इति चतुर्भिश्च दुत्वा के बास्ताष्यतये इति मन्त्रेण पञ्चिवन्त्रफलानि हुत्वा स्विष्कुदादि-पूर्णाद्धस्यन्तं कुर्यात् । ततो भएडलदेवताभ्यः पायसविल दत्वा कृणुष्वपात्र इति त्रिस्कादिना मंडपं विस्व्या वेष्टिया बास्तुक्षलरोन यजमानमभिष्य पुत्रः सम्पूच्य यथाशक्ति वृक्षिणं दत्वा बाह्मणा-भोजयेदिति ।

शारदाविलके तु श्रोमो नोकः । विकाक्याविष्ट्रध्याखां विकल्प इति भन्थान्तरे । इति बास्तुपूका ॥ मारस्ये—जपोषितास्ततः सर्वे कृत्वैदम्धिनासन्मिति । पाणे—जपवासी भनेदेनमशक्तौ नक्तमिष्यत इति । सद्योऽधिनासनं चाथ क्वर्यायो निकलो नर इति सभैनोक्तम्॥

कृष्य मण्डपपूजा ॥ तत्राऽउदी संग्यपंत्रियस्तरभगूजनम् । सन्ये ईशानस्तरमे । पूढोशि विजेग्य ॥ १ ॥ इसपुरसमास्य ॥ १॥ आजा-इवास्पई वेदं ॥ १॥ विश्वस्य विराधार्यः ॥ १॥ अधिवासनं चैवं तव द्वारप्जा। पूर्वद्वारे द्वारिश्चये नयः। ऊर्ध्वे देहस्यै नमः प्रधः वामदित्त स्वस्तम्भयोगेणेशाय स्कन्दाय नमः। द्वार-स्थितकक्षशद्वये गंगाये यमुनाये। दित्तिण्द्वारे द्वारिश्चये नमः। ऊर्ध्वे देहस्यै अधः स्तम्भयोः पृष्णदन्तायः कपिर्देने क्षत्वशद्वये गोदावर्धे व क्ष्णाये इति। पश्चिमे द्वारश्चिये अर्ध्वे देहस्यै अधः स्तम्भयोः निस्त्ते धण्डाय नमः। कलशद्वये रेवायै ताप्यै नमः। उत्तरे द्वार-श्चिये कर्ध्वं देहस्यै अधः स्तम्भयोः महाकालाय नमः। अ्क्षिणे नमः। कलशद्वये वाएये वेदने नमः। इति द्वारप्जाः॥

क ब्रायक्तानं के भूः व्यापो नमः हति राज्यादिनिः पूजवेत् । प्रार्थवेत् । प्रार्थमा-वेदावाराच महाय० ॥१॥ कृष्णाविनाम्बरपर० ॥२॥ इति प्रार्थना ।

🕉 सावित्र्ये नमः । वास्तुदेवतायै०। बाह्मचै० । शङ्कार्ये० । स्तन्धमास्त्रभ्यः ।

🕉 कर्ष्य क्षुण इति अपः । स्तन्मिश्वरिक्ष मागमात्रे नमः।

ॐ कार्यं गौरिति शासावन्यनाचनुमन्त्रेष । यतो वतः इति मन्यनपः ॥१॥ धृदं सर्वत स्तब्भमानस्य अर्ध्व दशुन इति जपादिकं कुर्योत् ।

आधारनेयस्तरसे—आवाहवे तं ।। १ ॥ पद्मनाथ ह्वीकेश ।। १॥ ॐ इदं विष्णु ॐ सू • विष्णवे नमः । इति गन्धादिभिः सम्पूज्य । प्रार्थयेदः ।

प्रार्थना—नवस्ते पुरवस्तिकाक्ष० ॥१॥ देवदेव अगवाय० ॥१॥ इति सम्वार्थः । ॐ सक्ष्ये० । ॐ आदित्याये० । ॐ वेष्णध्ये० । ॐ वर्ष्यं वशुव० स्थम्मासम्बद्धि पूर्वदत् ॥ २ ॥

अथ नैज्यतिस्तरमे० —पद्यद्वि गीरीश । ॥ १ ॥ गङ्गाचर सहादेव० ॥ ६ ॥ ॐ मसः शस्त्रवाय च० ॥ ॥

👺 भू ॰ शङ्कराय नमः। इति गन्धादिमिः सर्भूष्य । प्रार्थवेत् ।

प्रार्थना—हमताहमदेनामः ॥ १॥ पद्मवनत्र मृशास्त्रः ॥ इति सम्यार्थ्यं ॥ ॐ गोर्व्यं समः । ॐ माहेश्वर्ये । ॐ शरेश्वराये । ॐ कर्ष्यं द्वपूणः ॥ इति स्तरमात्रस्यः ॥ ॥ ॥

आधा श्वायवयस्तरमे — एवाहि वृत्रष्ण । १ ॥ शासीपते महावाही • ॥ १ ॥ ॐ त्रासारमित्रमधिसा • ॥

कॅ सू० इन्हाय रामः । गम्बादिभिः सम्पूरुप । प्रार्थयेतु ।

प्रार्थना—पुरन्दर नमस्ते हु॰ ॥१॥ देवराज गजास्त • ॥२॥ इति सम्प्रार्थ । के इश्द्राज्ये • । के भारत्साये • । के विभूत्ये • । के कर्ष उतुन • ॥ इति स्तम्माकमाः ॥ ४ ॥ धव तोरण्यूजा—तत्र पूर्वे बहिर्दस्तमात्रे बहतोरण्माश्वरणं वा सुदृद्धनामकं सुशोधननामकं वा शंखाङ्कितमन्तिमीसे इति मण्येत् न्यस्य सम्यूज्य राहुवृहस्यती तत्र न्यसेत् पूजवेख। तत्रेकः कलकः स्वाप्यः। तत्र मही धीरिति भूपार्थना। स्रोषधयः समिति ववप्रसेपः। स्नाकः सशेष्विति कस्रश्रनिधानं। इमं मे मन्तर इति जसपूरण्य्। गण्धद्वारा-मितियनधं मिश्रपेत्। या स्रोपधीरिति सर्वौषधीः। स्रोपधयः समिति

वृत्रं सध्यस्थात् ध्रेशानादिकोणस्थात् चतुरः स्तम्मानस्यच्ये पुनर्याक्षे हैशान-कोणादारश्य द्वादशस्तम्भारन्युजयेत् ।

त्तराया-व्यथ वाह्यशानकोछे आवाह्यतं द्विमुर्ज दिनेशं ।।१)।एग्रहस्तमहाबाह्य ।। हैं शाहुरखेर । हैं भू वृद्याय समः । इति गन्धादिभिः सम्पूत्रय । प्राधियतः ।

मार्थना—मना सवित्रे । ११। पग्रहस्त स्थास्त्र । ११। इति सम्प्रार्थ । उँ सूर्यो । उँ भूसी । उँ सावित्र्येः । उँ सङ्ग्रहाये । उँ उस्ते सुबुव । इति स्तम्मासम्मा ॥॥।

ईशासपूर्ययोरण्तरासस्तरमे -- सावाहवेतं गणराजवैनं० ॥ ॥ स्राचीदरं भहाकाय० ॥ ॥ ॥ ॐ गणामास्त्रा० ॥ हैं॰ भू० सस्पत्रवे० ॥ इति गण्यादिभिः सम्प्रुव्य । शार्थवेत् ।

प्रार्थेना---वनस्ये अवस्पायक ॥ ॥ कम्बोदरमहाकार्यक ॥ २ ॥ इति संप्रार्थ्य ॥ ॐ सरस्वस्येक । ॐ विश्वदरायेक । ॐ कर्ष्यं समुख्यक ॥ इति स्तम्भाकम्भः ॥ ३ ॥

पूर्वासे कोरफारालस्तानसे —एवेदि दण्यापुरः ४१॥ कित्रमुसदिसंयुक्तः ॥ १ ॥ ॐ यमापः स्वाक्तिस्त्वते ॥ ॐ भूः यमायः नमः ॥ इति गन्धादिसिः सम्पूज्यः ॥ प्रायंतेत् ॥

प्रार्थमा —ईवस्पतिनमस्तेऽस्तुः ॥ १ ॥ धर्मराज सद्दाकःषः ॥ २ ॥ इति सस्यार्थः । वेंग पूर्वसम्भवावै ॥ अक्षण्यै ॥ कृरावै ॥ विवन्द्रे ॥ वेंग कर्ष्यं स्तुणः ॥ स्तम्मा ॥ ॥ ॥ द्वारामनेयकोस्युस्तमम् —प्रार्थे स्तान्यः ॥

आसीविष-समोपेत+ It ॐ कार्य गरै० 11 ॐ भू० शामराजायक II

यवान् । काण्डात्काण्डादिति दूर्वा । अश्वत्येव इति पञ्चपत्तवान् । स्योगापृथिवीति पञ्चमृदः । थाः पत्तिगीरिति पत्तम् । सहिरत्मानीति पञ्चरतानि । हिरण्यस्प इति हिरण्यम् । युवा सुवासा इति वस्तादिना वेष्ट्येत् । पूर्णादवीरिति पूर्णपात्रमुपरि निदण्यात् । तत्र श्रुवाधाद्दनं पूजनं च । ततो इत्तिषे छीतुम्वरं प्रास् वा सुभद्रं विकटं वा सक्तिक्षितं तोरणिमवेरवीरजेंत्विति निधाय । चन्दनादिवर्षितं कृत्वा सूर्यमङ्गारकं च तत्र न्यसेत् । ततः पूर्ववत्कलगं स्थापयित्वा तत्र धरामाबाह्य पूज्येत् । ततः पृथ्वेत्कलगं स्थापयित्वा तत्र धरामाबाह्य पूज्येत् । ततः पश्चिमे प्रास्ति दुम्बरं वा सुकर्मसुभीमं

हति गन्धादिसिः सन्युज्य प्रार्थयेतः ।

प्रार्थना — समः सेटकहस्तेम्य०॥ सञ्जूसेटघराः सर्वे०॥ इति सम्प्रार्थ्य ॥ ॐ मध्यमसन्द्र्यायै०॥ ॐ चरायै०॥ ॐ पद्मायै०॥ ॐ महर-पक्षायै०॥ ॐ अध्वे उत्तुष्ण० स्तम्भार०॥८॥

श्रायाग्नेयद्क्षिण्योरस्तराते ॥ अध्याह्यामि वेवेशं० ४१॥ सपूरवाहने शक्ति० ॥२॥ ॐ यदकन्दः प्रयसं० ॥

कॅ भू॰ स्क्रन्ताय नमः इति गन्धादिभिः सम्बुष्य 🛚 । प्रार्थयेत् 🗷

पार्थना —नमः स्कन्दाव शैवायः ॥ सङ्ग्रवाहनस्कन्दः ॥ इति सन्त्रास्यं ॥ कि पत्रिमसन्ध्यायै नमः ॥ अर्थ्व चतुन्नः हति स्तम्भासम्भः ॥ ५॥

ऋष दक्षिणुनैक्ष्युत्यान्तरालस्तरमे ॥ आवादयामि देवेश॰ ॥३॥ सम्रहस्त-महावेर्गं ॥२॥ व्या वोवेर्गं ॥

ॐ भू० वायने माः ॥ इति गन्धादिमिः सम्यूज्य पार्थयेत् ॥ प्रार्थना—मारो भरणिपृहस्य० ॥ भागभ्यरणिपृष्टस्य०॥ इति सम्मार्थ्ने ॥ ॐनाधस्ये०॥ ॐगक्नाये०॥ॐनायन्ये०॥ ॐनाध्यससम्बद्धये०॥ ॐ अर्व्यक्षयुग्य०॥१०॥

द्मारा नेष्ट्रास्यस्तास्त्रे---वावाहयामि देवेशं० ॥१६ श्रुवादरं हिन्नाणीशं० ॥२॥ क्ष्माच्यायस्य०॥

ॐ भू० सोमाय नमः ॥ इति तन्त्रादिभिः सम्पूश्यः है पार्धवेत् ॥ प्रार्थना---अत्रिपुत्र नमस्तेऽस्तु० ॥ अधिपुय निशानाय० ॥ इति सम्प्राप्ये ॥ ॐ सावित्रयै० ॥ ॐ नम्रतन्त्रकायै० ॥ ॐ विश्वयायै० ॥ ॐ पश्चिमसन्त्र्यायै० ॥

अर्थ्व अपूर्ण • ॥ इति स्तम्भास्तम्भवत् ॥३६॥

वा गवाद्वितं तोरणमन आयाद्वीति त्यस्य सम्पूज्य चन्त्नाविज्ञतितं कृत्वा श्वलं बुधं च तम न्यसेत् । तसः पूर्ववत्कलयं स्पापयिस्या तम वाक्ष्यस्यायाद्वनपूजमावि । ततः उत्तरे न्यग्रोधमाश्वत्यं पालाशं वा सुद्दोत्रं सुधमं वा पणाद्वितं तोरणं शमो वेशीरिति शिधाय पूजितं कृत्वा सोमं केतुं शनि च तभ न्यसेत् । ततः कलशं स्थापयित्या तम विक्रेशावाद्दनपूजनावि । ततः पूर्वद्वारशावाद्वये कलशह्यं दृश्यस्ता-विद्युकं पूर्ववत्स्थापयेत् । येरावतं कलशह्ये न्यस्यार्चयेत् । तश पूर्वस्मिन् अनुग्वेदिनावृत्विजी ही एकं वा शान्तिस्कापार्थत्व त्थामदैवतः ।

- श्चार नैष्प्रत्यपश्चिमयोर्मध्यस्तरमे—जानाइयामि देनेशं० ॥१॥ गम्भीरथस-मारूदं० ॥२॥ ॐ इमं मे बदल० ॥ ॐ भू० नहणाय जमः ॥ इति गम्भादिभिः सम्पूज्य धार्षयेत् ।
 - आर्थना-वदयाय नमस्तेऽस्तु । नमः स्कटिनवर्णामः ॥२॥ इति सम्भार्यः । वैं वाद्य्ये • । वें पश्चित्रिये • । वें वृहत्ये • । वें अर्थ्व अधुण • इति स्तम्भाक्षमः ॥ १२ ॥
- श्राप्त पश्चिमवाधस्यान्तरालस्तम्मे —शानाह्यामि देवेशान् ॥ १॥ शुन्न-स्फटिकः प्रश्न ६० वसोः पवित्रः ॥ ३० भू० भष्टवसुभ्यो वसः ॥ इति गन्धादिभिः सम्पूज्य प्रार्थयेत् ।
 - प्रार्थमा-नमस्करोमि देवेशरन् । दिव्यवसा दिव्यदेहाः ॥ इति सम्प्रान्ते ॥ के विनसायै ॥ के अधिमायै ॥ के भूत्यै ॥ के गरिमायै ॥ । - के ऊर्ध्य ज्युग ॥ इति स्तम्भात्तम्भः ॥ १३ ॥
- . अध्य बायव्यस्तरसे बाबाइयासि वेवेशं । ॥१॥ विस्पमालाम्बरधां । ॥२॥ के सोमी केर्नुं ॥ के सूर्व धनदाय नमः ॥ इति सन्धाविकि सम्पूरव वार्ययेश् ॥
 - मार्थना-यश्रराज नमस्तेऽस्तुः ॥ दिव्यदेहधराध्यक्षः । इति सम्प्रार्थः । ॐ छिमायै । ॐ सिमीवास्त्रै ।। ॐ सर्भ सपुणः ॥ इति स्तम्मानमः॥ १४ ॥
- अयो चरवायव्यान्तराख्यस्तरको—आवाहयामि देवेराँ ॥ १॥ शङ्खं च कसशी
 विषय ॥ १॥ व्या शृह्यस्तरेकाति ॥ व्या सूच ग्रुवि नमः ॥ इति गण्याविषिः सम्पूज्य आर्थयेत् ।

अशिगोत्रस्तु विमेन्द्र ऋत्विक् त्वं, में मखे भवेति धृश्वाऽशिमीस इति पूजयेत्।

एखेहि सर्वायरसिद्धसाध्यैरभिष्दुतो वज्रधरामरेश । संवीज्यमानोऽष्सरसां गणेन रचाव्वरं नो भगवन्नमस्ते ॥

भो रन्द्र रहागच्छ रह तिष्ठेतीन्द्रं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सग्र-किकं द्वारकलये बाबाहा प्रातासंभन्द्रभिति प्रवित्वाऽऽधः शिशान रति पताकां पोतं व्यवं चोच्छ्येत्। तत पेशमतस्थं पीतवर्षं सह-काक्षं दक्षिणवामहस्तस्थवज्ञोत्यक्षमिन्दं व्यात्वा।

इन्द्रः सुर्पतिः श्रेष्ठो वजहस्तो महावलः । शतयज्ञाथिपो देवस्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥

इति नत्वो इन्द्राय साङ्गाय सपरिवाशय सायुधाय सशक्तिकायै-तं माधमकवर्ति समर्पयामीति वर्ति इद्यात्। तत आवस्थाऽऽभी-यक्तोगो पूर्वयत्कवशं स्थापथित्या तत्र पुरुदरीकममूर्तं च सम्पूज्य--

पहाँ हि सर्वामशहन्यबाह सुनिधवर्येरियतोभिज्ञष्ट । तेजोवता लोकगणेन सार्द्ध ममाध्वरं पाहि कवे नमस्ते॥

भो भग्ने इहागच्छेद विष्ठेति साङ्गादिकमर्थि कत्तरी मादाह्य त्वत्रो अन्तेत्यनि सम्पूज्यन्ति दूतमिति रक्तां पताकां रक्तं पश्च जोज्छूयेत्। तत्व श्वागस्यं रक्तं द्विय्यामकरभूतशक्तिकमण्डलुं यद्योपवीतिनं स्वितं स्वात्या—

प्रार्थमा-त्रग्रद्धव नमस्तेऽस्तु । प्रतितोऽसि पयाशक्त्या । इति सन्तार्थ्यं ॥ ॐ पूर्णिमार्थे नमः ॥ ॐ साविश्ये नमः । ॐ कर्ष्यं कश्चवः । इति स्तम्भास्त्रमा ॥ १२ ॥

क्रथोत्तरेशान्यान्तरासस्तरमे —आवाह्याम देवेशी० ॥१॥ वैकोक्यह्न-प्रकर्तारं ॥१॥ ॐ विकक्रमेन् इविवाद ॥ ॐ भू विश्वक्रमेण ॥ इति सन्दादिमाः सन्युष्य । शार्थवेत् ।

प्रार्थना-नमामि विश्वकर्माणे ॥ प्रसीद विश्वकर्मस्त्वं ॥ इति सम्प्रार्थ्यः । ॐसिवीवास्यै ॥ ॐवास्तुदेशवायै ॥ ॐसाविभ्ये भ] ॐजर्ध्यं क्युण ॥ स्तमा ॥ प्रति स्वस्मपूता ॥ १६ ॥ नामेयः पुरुषो रक्तः सर्वदेवमयोऽध्ययः । भूम्रकेतु रजोध्यत्तस्मै नित्यं नगो नमः ॥ इति नत्वा ।

श्चाये साङ्गायक पतं माधमकर्गातं समर्पयामीति वर्षि द्यात्। ततः इतासमनो दक्षिणे गत्वा । प्रतिद्वारशास्त्रं पूर्वेषत्कलशद्वयं स्थापविस्था सामनं दिग्गजं तत्रार्च्यत्। ततो यजुर्वेविनी हावेकं सा दक्षिणुद्वारे शान्तिस्कजपार्थत्वेन त्यामधं वृण इरयुक्त्वा—

> कातराक्तो यजुर्वेदस्त्रैष्टुभो विष्णुदैवतः । काश्यपेयस्तु विभेन्द्र ऋस्विक् त्वं मे मखे भव ॥

इति प्रत्येकं सम्बाध्यं इवे त्वोवर्जे त्वेति प्रायेत्--

ततः—एहा हि चैवस्वत धर्मराज सर्वागरैरचिंत धर्ममूर्ते । शुभाशुभानन्दशुचामधीश शिवाय नः पाहि मखं नमस्ते॥

भो यम इहागच्छेह तिष्ठेति साझादि यममावाश यमाय सोम-भिति सम्पूज्य इत्यां पताकां कृष्णं ध्वजं चायं गौरिरयुच्छूयेत्। सतो महिवासकं धृतदच्डगाशं दिल्लागामकरमञ्जनपर्वततुच्यकप-मश्चिसमलोचनं यमं ध्यात्वा--

महामहिषमारूदं द्वडहस्तं महावलम् । ग्राबाह्यामि यहेऽस्मिन्यूनेयं प्रतिगृह्यताम् ॥ इति नत्ता ।

साहाय यमावैतं माध्यक्तवां समर्पयामीति वांतं व्यातः। श्रंत आध्यम्य नैत्रतस्यां पूर्ववस्तातरां स्थापयित्वा क्रुमुद्गरां कुर्जार्थं च सम्पूष्य--

वृद्धोहि रक्तोगणनायकस्त्र्यं विशालवेतालिपशाचसङ्गैः । मदाध्वरं पाहि पिशाचनाथ लोकेश्वरस्त्वं भगवञ्चपस्ते ॥

भो निम्नते रहागच्छेद तिष्ठेति साङ्गावाह्यासुन्धन्तमिति सक्यूज्य नीतां पताकां नीलध्यां च मोषुश्यमन्त्रेशेति एचस्येस् । एतो वराकतं सक्दस्तं नीलवर्शे महावसं महाकार्थे बहुराक्षसंयुतं निम्नतिं ज्यात्वा-- निऋति खङ्गहस्तं च् सर्वलोकैकपावनम् । श्रावाहयामि यञ्जेऽस्मिन्यूजेयं प्रतिगृह्यताम् ॥ इति नत्वा ।

साङ्गाय निःक्षुंतये एतं भाषभक्तविलं समर्पयामीति बल्तिं द्यात् । तत आचम्य पश्चिमे गत्वा प्रतिद्वारशासं कलशहर्यं निषा-याञ्जमिक्नाजं न्यस्थार्घयेत् । ततः सामगाद्वत्विजासुत्विजं वा सृत्या ।

सामवेदस्तु पिङ्गाचो जागतः शक्रदैवतः । भारद्वाजस्तु विभेन्द्र ! शान्तिपाठं मस्ते कुरु ॥ इति माध्ये । द्यान आयाद्योति पूजविस्था ।

ततः-पृद्धोहि यादोगणवारिधीनां गर्णेन पर्नेन्यसहाप्सरोभिः। विद्याधरेन्द्रामरगीयमान पाहि त्वमस्मान्भगवन्तमस्ते।।

इत्युक्ता भो प्रश्लेहागच्छेह विष्टेति वश्लमावाह्य तत्मा-यामीति सम्पृत्य स्वेतां पताकां स्वेतां ध्वजं चेमं मे वस्लेत्यु-चिक्कृत्य मकरस्थं पाशहस्तं (करीटिनं श्वेतवर्णं वरुणं ध्यात्वा ।

पाशहस्तं च वरुणमर्णसां पतिमीश्वरम् । स्रावाह्यामि यहेऽस्मिन्वरुणाय नमी नमः॥ इति नत्वा ।

साङ्गाय वरुणायैतं भाषभक्तविलं समर्पयामीति विलं द्यात् । ततोषस्पृश्य द्वायव्यां पूर्वभत्कलशं स्थापयित्वा पुष्पदन्तं सिद्धार्थे स तत्र पूजियत्वा ॥

एस हि यहे मम रच्नणाय मृगाधिख्दः सह सिद्धसङ्गैः । भागाधिपः कालकवेः सहायशृहाण पूजां भगवन्तमस्ते ॥

भो जायो इहागच्छेह तिष्ठेति साम्नं वायुमानाहा तब वायवृतस्य त इति सम्पूज्य वायो शतमिति धुम्नां पताकां धुम्नथ्यतं बोस्टिबृत्य सृगाकतं विकास्वरथरं युवानं वर्ष्यक्रथरं विद्याणवामहस्तं बायुं ध्यारण ॥

वायुमाकाशमं चैव पवनं वेगवङ्गतिम् । ध्यावर्हयामि यञ्जेऽस्मिन्यूजेयं प्रतिगृतताम् ॥ ध्यनाकारो महौजाश्च यश्चाद्यगतिर्दिवि । तस्मै पूज्याय जगतो बायवेऽहं नमामि ते ॥ इति नत्वा।

साङ्गाय वायवे एतं भाषभक्तवर्षि समर्पणामीति वर्षि द्यात् । तत भाषम्योत्तरे गत्था प्रतिद्वारशाखं कलश्रद्धयं स्थापित्या सार्ध-भीमं दिग्गजं म्यस्थ प्जिपित्वाऽयर्वविदानृत्विजानुत्तरहारे शान्तिस्कअपार्थत्वेनाऽद्दं तृण् इत्युष्शना ।

हरूनेत्रोऽपर्ववेदोऽनुष्दुभो सद्भदेवतः । वैश्वम्पायन विभेन्द्र शान्तिपाठं मखे कुरु ॥ इति प्राध्ये । शन्तो देवीरिति प्रायेद् ।

एक्कोहि यहरेवर यहरकां विधस्त्व नक्षत्रमधेन सार्द्रम्। सर्वोषधीभिः विद्वभिः सर्देव महाख पूजां भगवन्नमस्ते ॥

भो सोम इहागच्छेह तिष्टेति साझै सोममाबाह्य वयं सोमेति सम्पूज्य इरितां पताको हरितभ्वजं चाप्यायस्वेति व्यस्य । वरपुष्पकविमानस्थं कुण्डलहारकेयूरसंशाभितं वरदगदाधरदक्षित-वामहस्तं मुकुबिनं महोदरं स्थूलकायं हस्त्रं पिङ्गलनेत्रं पीतवित्रहं शक्ससायं सामं भ्यात्वा ।

सर्वनत्त्रभध्ये तु सोमो राजा व्यवस्थितः। तस्मै सोमाय देवाय नज्ञनतस्ये नमः॥ इति नत्वा।

साङ्गाय क्षोमायैतं मायभक्तशृक्षि समर्पयामीति वर्ति प्रधान्। तत् रेशान्यां गरवाऽऽधम्य पूर्ववरकत्तरां स्थापयित्वा सुप्रतीकनःभानं दिशाजं मङ्गलं च तत्र पूजयित्वा ।

एक्षेदि विश्वेश्वर नश्चिश्युलकपाललट्वाङ्गथरेण सार्द्धम् । स्रोकेन वद्येश्वर यहसिद्धन्यै दृहाण पूजां मगवसमस्ते ।।

र्श्यानेहायच्छेह तिष्ठेति तमाबाहा समीशानमिति सम्यूज्य श्वेतां सर्ववयां वा पताकां व्यजं वाभित्वा देवसवितरित्युच्छित्य । सूपाक्षं वरवित्रमूलयुसव्विव्यामहस्तद्वयं त्रिनेत्रं स्कृतिक-वर्षमीहानं व्याखा— हषस्क्षन्यसमारूढं श्रूलहस्तं त्रिलोचनम् । स्राधाहयामि यहेऽस्मिन्यूजेयं त्रतिगृह्यताम् ॥ सर्वाथियो महादेव ईशानः शुक्त ईश्वरः । श्रूलपाणिविरूपाञ्चस्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ इति नत्वा—

साङ्गःचेशानायैतं माषमकवर्षि समर्पयामीति वर्षि दशात्। तत स्नायम्य ईशानपूर्वयोमेष्ये गत्या पूर्ववत्कलशं संस्थाप्य सनन्तं पूजयेत्।

एक्षेहि पातालघरामरेन्द्रनागाङ्गनाकिन्नरगीयमान । यद्योरगेन्द्रामरलोकसङ्घरनन्त रचाध्वरमस्पदीयम् ।।

भो धनन्त इहायच्छेह तिग्रेति साम्मनन्तभाषाहार्थं गौरिति-स्थोना सम्पूज्य पृथिवीति मेघवर्णा श्रेतां वा पताकां भवजं सायं गौरित्युच्छित्य । श्रनन्तश्यनासीनं फरणसावकमिष्डतं । पद्म-शृङ्खशोध्यांचोद्विणकरहयं चन्नगदाधरोध्यांचो वामकरह्यं भीलवर्णमनन्त प्यात्वा—

योऽसावनन्तरूपेण ब्रह्माएडं सचराचरम् । पुष्पवद्धारयेन्मूर्मि तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ इति नस्वा---

स्तक्षाय स्वपरिवारायानश्तायेतं मावभक्तवितं समर्पयामीति वित्तं इसात् । तत आचम्य । इत्वारायणमते तु नैऋत्यपश्चिमयोर्मेच्ये गत्वा पूर्वदत्कलणस्थापनं कृत्वा ।

एग्रेहि सर्वाधिवते सुरेन्द्र लोकेन सार्द्धे पितृदेवताभिः। सर्वस्य धाताऽस्यमितमभावो विशाध्वरं नः सततं शिवाय ॥

भो ब्रह्मिन्द्रागच्छेत तिष्टेति ब्रह्माणमावाता ब्रह्मजङ्गानिर्मित सम्पूज्य । रक्तां पताकां भ्यजं भ ब्रह्मजङ्गानिमस्युच्छित् । चतुर्मुक्तं हंसाकडमच्यालाकुशमुष्टिघरोध्यांची चित्रग्यस्युचं स्रुचकमग्रद्रखु-धरोध्यांघोषामकरह्यं प्रमञ्जूनं अदिलं लम्बोदरं रक्तयर्थं ब्रह्मायं व्यास्था—

पद्मयोनिश्रत्भूतिर्वेदावासः पितामहः । यहाध्यत्तरचतुर्वकत्रस्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ इति नत्वा ।

साङ्गाय सपरिवाराय ब्रह्मणे पर्त भाषभक्तवर्ति समर्पयामिति वित वृद्यात् । सपमारायणमते नैन्नात्यपश्चिमाम्तराहिऽनन्तविव्दा-नमीशानपूर्वास्तराहे ब्रह्मपूर्णायित्वमानं चेति । ततः श्राचम्य भएडप-मध्येऽस्युबादएडो दशहस्तदीर्घाक्तिहस्तविस्तृतः पञ्चहस्तविस्तारो वा महाध्यजः किक्किएयाविशुकस्त इन्द्रस्य वृद्ध इति स्थाप्य।। तत्रैव महाध्यजः किकिएयाविशुकस्त इन्द्रस्य वृद्ध इति स्थाप्य।। तत्रैव महाध्यजः किकिएयाविशुकस्त इन्द्रस्य वृद्ध इति स्थाप्य।। तत्रैव महाध्यजः किकिएयाविश्यक्तममेषु सर्वोभ्यो देवभ्यो नमः। धंशेषु किन्नरेभ्यो नमः। पृष्ठे पन्नगेभ्यो नम इत्यर्चयेत्। ततः पूर्व-भागे उपलितसभूमावुपविश्य--

त्रैल्लोक्ये यानि भूतानि स्थावराणि चराणि च ।
प्रदानिष्णुशियैः सार्द्धे रत्नां कुर्वन्तु तानि मे ॥१॥
देवदानवगन्धर्वा यत्तरात्तसपद्मगाः ।
प्रद्ययो मनवो गावो देवमातर एव च ॥२॥
सर्वे ममाध्वरे रत्नां प्रकुर्वन्तु ग्रुदान्विताः ।
प्रद्या विष्णुश्च रहश्च त्रेत्रपालगणैः सह ॥३॥
रत्तन्तु मण्डपं सर्वे प्रन्तु रत्नांसि सर्वतः । इति पठित्वा ।

त्रेलीक्यक्थेभ्यः स्थायरेभ्यो भूतेभ्यो नमस्त्रैलोक्यक्थेभ्यक्षरेभ्यो भूतेभ्यो नमः। ब्रह्मणे विद्याचे शिवाय देवेभ्यो सावधेभ्यो गन्धर्वेभ्यो साईभ्यो पत्रतेभ्य ऋषिभ्यो सनुध्येभ्यो गोभ्यो देवमातृभ्यो नमः। इति प्रत्येकं संस्पृत्यं भूमी माष्मकवर्ति द्यात्। ततो यसमानः सर्वेद्धं तिविभः सद्धं प्राग्हारेण मण्डपं प्रविश्य दक्षिणक्षारपश्चिमदेशे उपविश्य गुर्वादयो यथाधिहितं कर्म कुरुष्वमिति द्येत् । प्रतिकुण्डमेकेकः कलश ऋत्विभः स्थाप्य इति केचित् । गुरुणा स्थाप्य इत्यन्ये । ततो ऋग्वेद्धविक्तमात्यागादिकुण्डेशु ऋत्यिकोऽनित्रं स्थापयेशुः । ततो गुरुर्यक्रमानःनिवतो प्रद्येद्यां सर्वताभद्दे सण्डल-देवताः स्थापयेदिति पितामहचरखाः।

यथा—ब्रधेहेत्यावि मण्डलदेवतास्थापनं कांरच्य इति सङ्कल्य स्थापयेत्॥ तत्र मध्ये ब्रह्माणं॥ ब्रह्मयहानं गीतमो ब्रायदेवो ब्रह्मणं॥ ब्रह्मयहानं गीतमो ब्रायदेवो ब्रह्मणं॥ विद्युप् स्थापने पूजने च विनियोगः॥ प्रमुच्चरञ्च॥ ॐ ब्रह्मयहानं॥ १॥ तत् उदीचीमारभ्य वायव्यप्यंनतं कुनेश्रवान्वाय्वस्तानशे लोकपान्तान् तत्राच्यायस्व गीतमः सोमो गावशी ॥ ॐ ब्राप्यायस्व ॥ २॥ क्षिश्वार्थायस्व गीतमः सोमो गावशी ॥ ॐ ब्राप्यायस्व ॥ २॥ क्षिश्वार्थायं हेवसंवितः ॥ ३॥ इन्द्रं वो मञ्चल्यो इन्द्रो गायशी ॥ ॐ ब्रह्मि दूर्तं वृणीमहे ०॥ १॥ व्याप्य सोमं वृणीमहे ०॥ ३॥ व्याप्य सोमं व्याप्य यमो व्याप्य सोमं व्याप्य सामं व्याप्य सोमं व्याप्य सोमं व्याप्य सोमं व्याप्य सोमं व्याप्य सामं व्याप्य सोमं व्याप्य सोमं व्याप्य सोमं व्याप्य सोमं व्याप्य सामं व्याप्य सोमं व्याप्य सोमं व्याप्य सामं व्याप्य सामं व्याप्य सोमं व्याप्य सामं व्याप्य सोमं व्याप्य सामं सामं व्

पूर्वमन्तिस्थापनं तरपक्षादव सर्वतोभद्गस्थापमम् । तदमन्तरमन्तरमायनिध-ति कमः । यञ्जीवेदानां शु सर्वतीमहस्यापनम् ॥ ततो प्रद्वेचां सर्वतीमहमयबर्ख विकिन्य वजमानान्वितो साचार्यो प्रदृषेद्यां सर्वतीसञ्चनक्छे देखताः स्वापयेत् । तराया ॥ महायज्ञानमिति प्रशापति व्हविः त्रिष्टुप्छंदः महाः देवता जहास्यापने विनिषीतः ॥ ॐ महावसानं • क्रिकामां महात्वन् ॥१॥ ववर्ठः सोमेत्यस्य बंधूक ऋबिर्गापत्री सन्दः सीमी देवता सोमस्थापने विनियोगः ॥ ॐ वयर्ठ' सोमेति वक्तरे बाच्यो ॥२॥ तसीशामसित्यस्य गौकस ऋषिः जगतो छन्दः ईशामो देवता ईशान-स्यापने विजि . ॥ चँँ तसीशार्ता ईशान्या छण्डेन्ही ईशान ॥३१। प्रातारमिन्स्मि-स्यस्य गर्ग ऋषि जिप्दुव्छन्दः इन्द्रो देवतः इन्द्रस्यापने विनियोगः ॥ ॐ त्रातार-मिन्द्रः पूर्वे वाच्या इंग्वं ॥ ॥ स्वक्षो अवन्ते सव देवेस्यस्य हिरपयस्तूप कान्तिरस ऋषिः कगतो सन्दः सन्तिर्देवता सन्तिस्थापने विविधोगः ॥ ॐ त्यसी इस्रने तव • भारनेयां क्रव्हेन्दी सर्वित • ॥ सु ॥ सुगम्बु पन्याभित्वस्य प्रमापितः ऋषिः क्रिन्दुप् सन्दो धमो देवता धमस्यापते विनियोगः॥ ३% सुगन्तु पन्था० विश्वियो बाव्यां वसं ।। ६ ॥ ब्रह्मुन्बन्दम इत्यस्य मनापति ऋषिः विष्टुप् छन्दः निक्तिवेदसा निक्तिस्थापने विनियोगः । ॐ ब्रसु-बन्तसः नैक्त्यां सण्डेन्द्री निक्सति ।। ७ ॥ सरवायामीस्यस्य श्रुनःशेष ऋषिः त्रिष्टुष्क्रन्दः बढणो देवता वकुमस्यापने 'विभियोगः ॥ 🕉 तत्त्वायासिक पश्चिमे वाष्यां बदर्शक ॥ ४ ॥ व्याची मियुद्धिरित्यस्य प्रजापति ऋषिः ज्ञिष्टुष्डन्दः वायुर्देवता वायुस्याधमे विनिमोगः॥ 🦥 भागो निवृतिः वःयध्यः ऋष्ट्रेन्द्री वायुं० 🏗 ९ ॥ वसोः पवित्रससीस्पर्स्य

षस्न उभया अत्र मैं बावस्तो विशिष्ठो वसविक्षिन्द्रम् ॥ ॐ जाया ध्रत्रः ॥ १० ॥ सोमेशानमध्ये पकादशब्द्रान् ॥ आस्क्षासः श्यावाश्व पकादशब्द्रा जगतीः ॥ ॐ आ दद्रा सः ॥ ११ ॥ ईशानेन्द्रमध्ये हादशादित्यान् ॥ स्थानुसां मदोमस्यो हादशादित्या गायत्रो ॥ ॐ त्यान्त्र स्वियान् ॥ १२ ॥ इन्द्राप्तिमध्येश्वना राष्ट्रगत्यो गौतमोशिवनाशुवित्यः ॥ ॐ अश्वनावर्षिः ॥ १३ ॥ अश्वियमभ्यये विश्वेदेवानस्यम् ॥ ॐ अश्वनावर्षिः ॥ १३ ॥ अश्वियमभ्यये विश्वेदेवानस्यम् ॥ अभास्त्रोमभुद्वन्दासि विश्वेदेवा गायत्रो छ सासः ॥ १४ ॥ यमित्रवृतिमध्ये सप्त यत्तान् । अभित्यं वामदेवः सप्त यत्ताः प्रकृतिः । अभित्यं वेदं सिद्यारमोश्योः कविक्रतुम्बामि सत्यसवं रत्नधानमित्रयं मति कवित्रः। अध्वायस्य मतिभा श्विद्युक्तः स्वामिश्वः दिरस्यपाणिरमिन्नीत सुकृतः हुप व्यः ॥ १४ ॥ विश्वतिः स्वत्यमिश्वः विरस्यपाणिरमिन्नीत सुकृतः हुप व्यः ॥ १४ ॥ विश्वतिः वृत्वनयान् ॥ आयं गौः सार्पराक्षा सर्पा गायत्रो । ॐ अप्तरसां गन्धर्वाः सर्पा गौः ॥ १६ ॥ वरत्यस्य स्वतः गन्धर्वाःसरसः । अप्तरसां गन्धर्वाःसत्यः ॥ अस्तरसां गन्धर्वाःसत्यः ॥ अस्तरसां गन्धर्वाःसत्यः सर्पा गन्धर्वाः सर्वाः गन्धर्वाः गन्धर्वाःसत्तः । अस्तरसां गन्धर्वाः

गीतम ऋषिः जगती सन्दः असवो देवता वसुस्यापने विशिधोगः ॥ 🤲 बसीः मस्त्रिक बायुस्रोमयोर्मध्ये भद्रे भटवसून् ॥ १० ॥ शमस्त्रे इद्य इत्यस्य परमेटो माबिः गायश्रीखुन्यः रुझी देवता सञ्ज्यापने विनियोगः ॥ ॐ नमस्ते सञ्ज-सामिशानयोर्सभ्ये भट्टे एकादशस्त्रान् ॥ ११ ॥ अदिविद्यौतिस्वस्य प्रशापनि मुर्विश्विष्ट्रप छम्दः चादित्वा दैवता द्वाव्शादित्वस्थापने विनियोगः ॥ अ-व्यवितिथीं । वृंशाने म्हयोर्मे व्ये भद्रे द्वादशादित्यान् ॥ १२ ॥ अभिना वेजलेत्यस्य परमेही हरिश्तुरहरहरहरदा समिती देवते भविती स्थापने वितियोगः॥ अन्यस्थिता वेजवा० इञ्हारम्योर्मध्ये भन्ने समिनी० ॥ १३ ॥ विश्वेदेवास उद्यागत इत्यस्य परमेष्ठी कृषिः गायजीकम्बः विश्वेदेवा देवता विश्वेदेवस्थापमे विश्वियोगः। 🕉 विश्वेदेशस अभागतः ॥ धागिएमयोर्मध्ये अहे विश्वेदेशम्सपितृत् ॥ १४ ॥ श्वभित्यं देवभित्यस्य प्रजापति ऋषिः श्राह्मकृतः सत्यक्षी देवता सत्यक्ष-स्थापने विभियोगः ॥ ॐ समित्यं देवर्ड- सविताः । यमनिक्ततिमध्ये अञ्जे संस्थक्षास् ॥ ३२ ॥ भूताय स्वेति पराशर क्षिः विराट् अन्दः नारासकी विवशा सूत्र । वा वसोऽस्तु सर्पेश्य इत्यस्य प्रकापवि ऋषिनुष्टुप श्रम्बः सर्पे हेश्या सपरवारमे विविधोगः ॥ ॐ मूताय स्वा- ॥ वा ॐ बमोऽस्तु सर्वेश्यो-निश्चतिबरुवधीर्मेक्ये अहे भूदवागान् का सर्पान् ॥ १६ ॥ गम्बर्क्स्वेति भौतम ऋषि। हिपका विराह्यन्तः गण्यवाँ देवता गण्यवंद्वापण विणियोगः ॥

णाम् ॥१०॥ ब्रह्मसोममध्ये स्कन्दनन्दीश्वरम्भानाः । कुमारस्कन्द्रसिष्टुप् ॥ ॐ कुमारं माताः ॥१६॥ ब्रह्मेशानमध्ये दक्षाः चीच्यो ज्ञ्यमोऽनुष्टुप् । ॐ क्ष्यमं मा ॥१६॥ ब्रह्मेशानमध्ये दक्षाः चीच् सस । ब्राद्मिकाँक्यो बृह्स्पतिर्द्रकोऽनुष्टुप् । ॐ ब्रद्मित-ऽर्ध्व जनिष्ठः ॥२०॥२१॥ ब्रह्मेन्द्रमध्ये दुगा विष्णुं च । तामप्रस्थर्थं सीमितिर्द्रुर्वा विष्णुः मात्र मेथातिथिविष्णुर्वायत्रो ॥ ॐ दश् विष्णुः ॥२३ ॥ ब्रह्मामनेयमध्ये स्वधाम् । उद्देशतां शङ्काः स्वधाम् । उद्देशतां स्वताः ॥ २४ ॥ ब्रह्मयममध्ये स्वधाम् । परं सृत्योः स्वताः ॥ २४ ॥ ब्रह्मयममध्ये स्वयुरोगान् । परं सृत्योः स्वताः ॥ २४ ॥ ब्रह्मयममध्ये स्वयुरोगान् । परं सृत्योः स्वताः ॥ २४ ॥ ब्रह्मविश्वताः ॥ २४ ॥ ब्रह्मविश्वताः स्वयुरोगाः स्वर्थे गण्यानाः ॥२४॥ ब्रह्मवायुर्वे गण्यानाः ॥३० श्रद्धां वर्षेष्यिध्वीपः स्वर्थे गण्यानाः ॥३० श्रद्धां वर्षेष्यसिध्वीपः ॥

के गरुवर्षस्थाव धहराबाबोर्सको अहं गरुवर्षप्तरसः ॥ १७ ॥ पदमन्त्रेत्यस्य भौतक्ष्यशीर्भवसारकन्द्र ऋषिः जिल्ह्यस्त्रन्दः स्कन्दो देवता स्कन्दस्थाममे विवि-कोगः ॥ ॐ वदकस्दः० ज**क्स**सोप्रशस्ते नाध्यां स्कन्दं० ॥ १८ ॥ काशुः शिकाने-स्परम अप्रतिरय ऋषि। त्रिप्युप्छन्दः इन्द्रो देवता नम्दीस्वरस्यापने विविधोगः ॥ ॐ भागुः ॥ स्कन्दोत्तरे मन्दीहवरं ० ॥ ६९ ॥ छत्रैव 👺 कार्षिरसीवि शुर्ल तथा सहस्कार्स । १० अ१ १॥ अदिति चौरित्यस्य दक्ष ऋषिः बातुष्टुण्डन्दः दश्चादि-समाणो देवता दशादि सहगयाम्स्थापने विनियोगः। 🦈 बदितियी । नहाँ -शावमध्ये न्यंत्रकायां इक्षाविसस्तर्यान् 🛭 २२ ॥ वस्त्रेऽकम्ब इस्पस्य मणायति क्रिका अञ्चरहुष्प्रस्तः दुर्गादेशका हुर्गास्थापने नितियोगः ॥ ॐ सम्बेद-अस्त्रिके ॥ अञ्चरेत्रमध्ये वाष्यो दुर्गाः ॥ २३ ॥ हर्ष विष्णुदिस्यस्य मेशाविधि क्षिः गावत्रीक्ष्यो विष्णुर्वेषता विष्णुस्थावने विमियोगः। 🍑 इवं विष्णु • अस्त्रिका पूर्वे विष्णुं ।। १४ || बद्दीरता इत्यस्य सङ्ख् ऋषिकान्दुःकान्दः विज्ञी-देवसा विज्ञास्थापमे बिनियोगः। 💝 वर्षारताः ब्रह्मानिमध्ये मह्बुकायां वितृन् ॥ १७ ॥ वरं सुरमो इत्यस्य सङ्गिक्षः व्हविः विष्टुच्छन्दः सृत्युर्देवता सृत्युस्या-वने निनियोगः ॥ उँ वरं सूत्यो । त जस्यसम्बन्धे वाष्यो सृत्युरोगान् ॥ १६ ॥ गनामास्त्रा इरवस्य शीनक ऋषिर्जनती छन्दो गरापविदेवता गमपरस्यास्यापने विनिधीतः ॥ 🦈 गुणामान्त्वा • महानिक्ततिसभी अञ्चलायां गणपति ॥ २ • ॥ शाली देवीदित्यस्य इम्मधर्वण महिना गायमीक्रमहः ब्राप्ती देवता प्राप्त स्थापने

गोत्र भीमः ॥ ३ ॥ तत ईशान्य बाणाकारे उद्दर्भुलं वुधं पीतपुष्पा-चतिरद्ववृद्यव्वं क्षुधः सीम्यो बुधिल्रान्द्रम् मगावदेशोद्भव आनेय-सगोत्र बुध ॥ ४ ॥ तत उसरती वीर्धचतुरस्रे उद्दर्भुखं इहस्पति पीतपुष्पाचतिर्दृद्धस्पते गृत्समदो बृहस्पतिस्निन्दुप् सिधुदेशोद्भव आंगिरसगात्र इहस्पते ॥ ४ ॥ ततः पूर्वं पञ्चकाणे माङ्मुखं सर्वं शृङ्गपुष्पाचतिः शुकः पाराशरः सुको हिपदा विसाद् ॥ भोजकट-देशाद्भव भागवसगोत्र शुकः ॥ ६ ॥ ततः पश्चिमे धतुषि मत्य-क्षुख स्वि इन्लपुष्पाचतैः समितिर्दिशितः शनिविष्णुक् सौराष्ट्रत काञ्चपगोत्र सनैश्वरः ॥ ७ ॥ ततो नैत्रद्वत्ये स्पर्धकारे दिश्वणामुखं राहं इन्लपुष्पाचतैः करानो वामदेवो राहुगायत्री राहाशहने ॥ राहित्रपुरोद्भव पैठीनसिस्योत्र राह्नो ॥ ८ ॥ ततो वामव्ये व्यक्ता-

क्षत्र भारद्र। बसगोत्र रक्षवर्ण भीम इद्दागरछेड् विष्ठ दक्षियदछे व्यक्तुके रक्षमध्छे दक्षिणमुक्त भौमं रक्तपुष्पाक्षतेः पूजयेत् ॥ ३ ॥ 🧈 त्रदुनुश्वस्वाक्ष प्रस्पस्य परमेष्ठी अर्थिः शिरहुण्करदः बुधी देवता सुधस्थापने विनिधीतः ॥ ॐ तहसुन्धस्त्रातने । रू भूमु व: स्व: सत्रवहेशोद्भव बालेयसगीत पीतवर्थ हुन इहमान्छेह तिह ईशानदके शासाकृती वीते चतुरंगुके संबद्धे व्दक्षुखं दुर्थ पीतपुष्पाक्षतीः पूज-षेत् ॥ ७ ॥ बृहरवते अतीत्यस्य गुरस्मत् पर्वेशः त्रिष्ट्रप्रस्यः भूमु[°]वः बृहस्पत्रे • बृहस्पतिस्थापने विशिवांगः 3% ã II. सिन्धुवैशोज्ञव अश्विरसयोत्र पीतवर्ण गुरी बृहायण्डेह तिष्ठ वजरदके ही बेचतुरले पीतदर्णयहरू पुरुषप्रवस्थे बदक पुत्रां हृदस्पति पीतपुरुपाक्षतेः पुत्रमेत् ॥५॥ अक्षास्परिस्तृतस्य अधिवसरस्वतीन्द्रा ऋषयः अविजनतीक्ष्मदः ग्रुको देवता शुक-स्थापने विभिन्नोगः ॥ ॐ प्रवास्परिणादः ॥ ॐ भूमु नः स्मः स्रोसंस्टतेशोज्ञच भागीवसगोत्र शुक्रवर्ण शुक्र इद्दागरहेट विष्ठ प्रुवंदके प्रमान्ने नवांगुरे सवस्के मान्मुखं कुर्क शुक्तपुष्पाक्षतेः पूज्येत् ॥ ६ ॥ शक्तो वेशोरित्यस्य दृष्पकायसँक् महानः गावत्रास्त्रन्दः शामिद्वता शामिस्थापने विशिधीमाः ॥ ॐ शासी देवो • भूत्र्वः स्वः सौराष्ट्रदेशोद्भव कश्यपमोत्र कृष्णवर्ण श्रमेवर इहागच्छेह तिष्ठं विश्वे इप्रज्युक्तम्बक्के कृष्णाक्ष्में समुचाहातिमण्डले प्रत्यक्शुकां शति कृष्णापुच्याः श्वतिः पूजनेत् ॥ » ॥ श्रवानश्चित्र इस्पत्य वासवेत श्रविः गायत्रीक्षम्दः राहुर्वेनदा राहुस्थाको विविधोगः ॥ 🥻 कवानशित्र । ॥ अभूर्युवः एकः राहितसदेशोस्त्र वैदियसनोत्र कुरणवर्ण राहरे इदाराष्ट्रीय शिष्ठ वैत्रहत्वे शूर्यकारे हृध्यवर्णे हृ।वृद्या-मुक्तानको एक्किन्युको राष्ट्रं कृष्ण्यानगरकति। पूत्राचेत् ॥ ८ ॥ वृद्धं क्रववं विश्वदेव

कारे विद्यासुखं केतुं धूम्रपुष्पाद्यतेः केतुं मधुव्हन्यः केतवो गायत्री अन्तर्वेदिसमुद्भवा जैमिनिसगोषा केतत्रो इद्दागच्छेद्द तिष्ठेति ॥ ६ ॥ सर्वे दा अवित्याभिमुखाः अधाधिदेवताः भ्वे तपुरपास्त्रहैः क्रमात्स्वीदीनां चास्रणतः स्थाप्याः ॥ त्र्यम्यकं वशिष्ठो सङ्गोऽसुब्दुप् विनियोगः सर्वेत्र हेयः ॥ ज्यम्बकं 🌮 मूर्भुवः स्वः ईश्वरं० 🛚 १ ॥ गौरीर्मिमाय दीर्घतमा छमा जगती सोमदत्तिये ॥ २॥ यदकस्दो वीर्यंतमा स्कन्दिकाष्ट्रप् ॥ ३ ॥ विक्लोर्वीर्धतमा जिल्छांसा-हुए ॥ ४ ॥ ब्रह्मयकार्न गीतमो कामदेवी ब्रह्म त्रिष्ट्य ॥ ४ ॥ एन्द्रे वी में मुद्धन्या इन्द्री गायत्रो ॥६॥ यमाय खोमे यमोऽमुद्रुप ॥ ७॥ मोजुगो घोरः करवः कालो गावशी॥ य॥ उपो बाजं मस्कण्यश्चित्र-गुप्तो बृहती 🛭 ६ ॥ प्रवमेव ग्रुक्तपुरपाक्षतैर्प्रहाणां वामे मन्त्राम्ते व्वाह-कीरिहागच्छेह तिष्ठति चोक्स्वा प्रस्यघिदेवताः स्थापयेत् ॥ असि कारको मेचातिथिरक्षिगाँयश्री ॥ ॐ अन्तिन्दूतं० ॥ १ ॥ अन्तु मे मेघा-तिथिरापोऽतुषुप् ॥ २ ॥ स्वोना मेघाविथिर्भूमिगांवशी ॥ ३ ॥ इवं विष्णुर्मेश्वातिः यविष्णुर्गायको ॥ ४ ॥ इन्द्रश्रेष्ठानि गृत्समद इन्द्रश्रि-

सञ्ज्ञाहरूद्र। साथि। यजिहका गायत्री छन्द्र। केतुर्देवता केतुरुपापने विनियोगः 🤲 केतु कृतवस अध्युर्धनः स्वः अवन्तिदेशोजन जैमिनिसनीत्र विश्ववर्ध सेती वृद्धा-गन्छेह तिष्ठ वायवये ध्वजाकारे विजयमें चयकुकमयदके दक्षिणमुखं केते धूजवर्ण-पुरवाश्चतैः पुत्रपेदः ॥ ९ ॥ केतृनां बहुत्वेऽपि पूजाही बहुत्वविशिष्टमेकदेशतास्वस् ॥ सर्वान् वादिस्यासिमुकान् स्थापवेदित्युक्तं शास्त्रवे ॥ अथाधिदेखताः सर्वे इवेत-पुष्पाक्षते। स्थापयेल्युमयेश्व ॥ ज्यस्यक्रमिति वशिष्ठ ऋषिः अञुण्डुण् छन्तः ज्यस्यकी इही देशता इद्रस्थापने विनियोगः ॥ 🕉 व्यम्बर्कं प्रभागदे - सूर्यादुत्तरही इद् इद्दाराब्द्रेड् विश्वेति कहं स्थापमेर् ४१॥ श्रीक तेस्यस्य वारायण कृषिः त्रिष्ट्यस्यः क्ष्मादेवता क्यास्थापने विनियोगः ॥ ॐ श्रीकृष ते क्युमी । क्येहागच्छेह विक्र इक्तिको समास् ॥ २ ॥ वदकन्देस्य भागवी असदिति-दीर्गतमावृशी विस्दुरक्षन्दः ुस्कादो वेदवा स्कृत्रस्थापने निनियोगः॥ 🕉 नश्कादः स्कृत्देशगच्छेत् विश्वः भौमदक्षिके स्कन्दम् ।। १ ॥ विष्णोरशस् इत्वस्व प्रजापति अन्तिः बनुष्टुप्छन्दः विष्णुर्देवता विष्णुस्थापने विविधोगः ॥ 🕉 विष्योरसाट् मश्रीत्यारम्य विष्णवे स्वेत्यन्ते पुत्रपश्चिमे विष्णोरिहताच्छेड् तिङ विष्णुम् ॥ ४ ॥ धानक्रकित्यस्य वजापहि ऋषिः वशुःकन्दः नद्मा देशता वहास्थावने विविधीगः॥ 🥙 मामझन् तुरो। पूर्वमाने अक्षनिहास्पेदेर तिष्ठ मद्याणे ॥ ५ ॥ सयोग इन्द्रेट्यस्य गोव भीमः ॥ ३ ॥ तत ईशान्ये वाणाकारे उदक्षमुल वुषं पीतपुष्णा-स्तिवृद्धुश्यश्वं बुद्धः सीम्यो बुधिक्वन्द्रम् मगधदेशोद्धव बाश्रेय-सगोव बुद्ध ॥ ४ ॥ तत उत्तरतो वोर्धश्वतुरको उदद्मुखं बृहस्पति पीतपुष्पास्तिवृद्धस्पते गृत्समक्षो बृहस्पतिक्विन्द्रम् सिधुदेशोद्धव भ्रांगिरस्वगात्र सृहस्पते ॥ ४ ॥ ततः पृष्ठं पञ्चकोणे भाक्नमुखं सुकं मुक्कपुष्पास्तिः सुकः पाराशरः सुको हिपदा विराद् ॥ मोजकट-देशान्द्रम् भागवस्योत्र सुकः ॥ ६ ॥ ततः पश्चिमे घत्रवि भत्य-क्रमुख स्रानि कृत्यपुष्पास्तिः सर्मामिरिरिविटः स्रानिविध्यक् सीराष्ट्रम कास्यपगोत्र स्रनेश्वरः ॥ ७ ॥ ततो नैत्रत्ये स्रणंकारे दिस्यामुसं राष्ट्रं कृत्यपुष्पास्तिः कयानो वामदेवो राष्ट्रगांपत्री राह्यावस्ते । स्राहिनापुरोद्धव पैठीनसिस्यगेत्र राह्यो ॥ ८ ॥ ततो वास्वये ध्वजा-

क्षत्र भारदाजसमोत्र रक्षवर्ण भीम इहागच्छे। तिक दक्षियदके ध्यकुछे रक्षमंबक्षे वश्चित्रमुख भीमं रक्षपुरुपाक्षतेः पूत्रमेत् ॥ ३ ॥ ॐ बहुतुश्वस्ताम इत्प्रस्य परमेश्ची महिका जिस्हुप्सन्दः सुधी देवता सुवस्थापने दिनियोगः ॥ ॐ वहसुध्यस्त्राग्ने० र्के भूमुंदः स्थः सगवदेशीज्ञय बालेयसगीत्र पीतवर्थ छूप ब्रहातक्छेड तिह ईशानदके वाबाहती पति चतुरंगुके संबंधे व्यवसूत्रकं तथं पीतपुष्पाश्चतै। पूज-बेत् ॥ ॥ महस्पते अतीत्यस्य गुल्समद् ऋषिः त्रिष्टुच्छन्दः मृहस्पतिदेवता बृहस्पते • ॐ भूभुंचा शृहस्वतिस्थापने विनियोगः مُرِّجُ क्षिम्बुदेशोह्नव बाक्सिसायेव पीत्रवर्ण पुरो इहामधीह तिष्ठ वत्रवके दी सैचतुरले पीतवर्णपडरु गुरुमग्रहके उदक्षुसं हृहस्पित पीतपुरपाक्षतैः वृज्ञयेल् ॥५॥ अवास्परिजुनस्य अधिवसास्वतीग्दा व्यवस्यः अतिजातीस्त्रन्तः हुको देवता शुक्र-स्थापने विनियोगः ॥ ॐ श्रकात्परिस्तृतः ॥ ॐ मूमु वः स्तः भोजहटदेशोजव भागांवसगोत्र शुक्षवर्थ कुक इहामध्येद विष्ठ पूर्ववृत्ते पद्यासे वर्वागुळे मस्डके माक्सक्षे छक्षं शुक्रपुष्याक्षते। पूजपेत् ॥ ६ ॥ शको देवोरित्थस्य दृश्यकावर्षक् कर्षिः गायग्राक्रन्तः शनिर्देवता शनिस्थापने विभियोगः ॥ ॐ शक्री देशी. 85 भूमु वः स्थः सीराष्ट्रदेशोग्नव कर्यप्यात्रित कृष्णवर्ण शनैवर हृहागन्छेड हिन्न पश्चिमे द्वाक्षुक्रमण्डके कृष्यावर्णे अनुवाकृतिसण्डके प्रत्यक्षुकां शवि कृष्यापुरणः स्ति: दुवनेत् ॥ » ॥ कपानिभित्र इत्यस्य बासदेव अविः गायत्रीसन्दः राहुर्देवदा राष्ट्रस्थाको विविधोगः । ॐ क्यानक्षित्रं । ॐ मूर्सुरः स्वः राहिनसदेशोस्त्रव वैदिमसयोग कृष्णवर्ण राही पृष्टागच्छेड शिष्ठ गैक्स्मे शूर्णकारे हां कवले हानुशां-मुक्तरकके दक्षिकसूत्र राष्ट्रं कृष्ण्य व्याधकी पूजियद ॥ ४ ॥ वेह्न कृष्य विश्वद् कारे दक्तिवामुखं केतुं यूजपुरपाद्यतैः केतुं मधुरुञ्जन्दाः केतवा गायत्री अन्तर्वेदिसमुद्भवः अभिनिसगोत्रा केतवो इहागच्छेद तिष्ठेति ॥ ६ ॥ सर्वे वा अविस्थाभिमुखाः अधाधिदेवताः भ्वे तप्रपास्तरैः क्रमास्त्र्वदि।नां विद्यालाः स्थाप्याः ॥ व्यम्बकं विशिष्ठो बद्रोऽनुब्हुप् विनियोगः सर्वत्र हेराः ॥ ज्यभ्यकं 🗗 भूभुकः स्वः ईश्वरं० 🛮 १ ॥ भी शिर्मिमाय दीर्घतमा छमा जगती सोमद्र्त्तिणे ॥२॥ वदकन्दो चीर्यंतमा स्कन्दस्मिन्दुए ॥ ३ ॥ विन्लोर्पेर्यनमा विन्तुर्गसन हुत्॥ ७ ॥ अहायकानं गौतमा वामवेवो अक्षा मिष्टुप्॥ ४ ॥ ६ न्द्रे चो में भुक्तन्या रुद्धी गावश्री ॥ ६॥ यमाय सोमं यमोऽनुषुप ॥ ७॥ प्रोबुक्तो बोरः कर्वः कालो गायश्री ॥ = ॥ उपो वार्ज प्रस्कश्वसित्र-गुप्तो बृहती ॥ ६ ॥ एवमेव शुक्कवुष्पाद्धतैर्घहाणां वम्मे मन्त्रान्ते व्याहः-तीरिहागच्छेह विष्ठेति चोक्त्या बल्यधिदेवताः स्थापयेत् ॥ वर्षि कावदो मेघातिथिरज्ञिगाँवत्री । ॐ श्रमिन्दूतं० । १ ॥ अप्तु मे मेघा-तिथिरापोऽनुषुप् ॥ २ ॥ स्वामा मेधातिथर्भूमिर्गावजो ॥ ३ ॥ इदं विच्लुर्मेश्वातियिवेंश्लुर्गायत्री ॥ ॥ इन्द्रश्रेष्ठानि गुरसमद इन्द्रश्चि-

अञ्चयनदा ऋत्वेः अनिवन्ता वायभी धन्दा केतुर्देवता केतुरधावने विशेषोगः 🏞 केतुं कुरवक अॅंग्रुर्भुंदः स्थः अवस्थिदेशोश्रय वैधिनिस्तातेत्र चित्रवर्धं केती श्रवा-गम्बोह तिष्ठ वायव्ये ध्वत्राकारे विषयाची वसमुज्यस्यको दक्षिणमुखं केते ध्रुत्तवर्ण-पुल्याक्षतीः पूजनेत् ॥ ५ ॥ केतृनां बहुत्वेडणि पूजादी बहुत्वविशिष्टमेकदेवतास्वाम् ॥ सर्वोत् क्षादिस्याधिमुक्ताम् स्थापवेदित्युक्तं मात्स्ये ॥ स्रथाधिदेवताः सर्वे स्वेत-पुष्पाक्षते। स्थावयेश्यूमवेष ॥ व्यासक्तिति वरिष्ठ ऋषिः अनुष्टुप् अव्यः व्यासकी इही देवता इहस्यापने विनियोगः ॥ 🕉 श्यम्बकं वज्ञामहे - सूर्यांतुत्तरक्षी अह इद्यागकोह तिहेति कहं स्थापयेश अ१॥ मोम शेश्यस्य नारायण प्रशिः त्रिष्टप्तन्यः क्रमादेवता बमारवापने विविधोगः॥ ॐ श्रीक्ष वे क्रथ्मी - वमेब्रागच्छेद विश्व इन्निये बमास् ॥ २ ॥ वदकन्देस्थ भार्यवो समरप्ति-दीर्धतमानुनी न्निस्टुप्कन्दः ्रकृत्वो देवता स्क्रम्बस्यायमे विभियोगः ॥ 🅉 यदक्रम्दः स्क्रम्देदागध्येषु चित्र भीमदक्षियो स्कन्दस् । १ ॥ विष्योरराय् बृत्यस्य प्रजापित प्रत्यः बातुश्हुप्कमदः विष्णुर्देवता विष्णुस्थापने विविधोगः ॥ ॐ विष्णोरराट् मक्षीस्पारम्य विष्णवे स्वेरपन्ते **बुध**पश्चिमे विष्णोरिहताध्येह तिष्ठ विष्युम् ॥ ॥ ॥ सामक्षणित्यस्य अजापति ऋषिः बञ्जःक्ष्यदः बङ्गा त्रेवता सहस्थापने विविधोगः ॥ 💤 चायहान् पुरो: पूर्वभागे बदाविदागरहेद तिह बदार्थं । । ५ ॥ सपीका इन्द्रेरपक्य ष्टुण् ॥ ४ ॥ इन्द्राणीं सृथाकिपिरिद्राणी पिकः ॥ ६ ॥ प्रजापतेर्द्विरण्य-गर्भः प्रजापनिस्त्रपुष् ॥ ४ ॥ कार्यं गौः लापराशी सर्णागा-यत्री ॥ २ ॥ ब्रह्मयद्वानं गौतमो नामदेवो ब्रह्मासिष्टुष् ॥ ६ ॥ ततः सुक्तपुष् गक्षतेर्विनायाकारोन् पञ्च गणानास्या सृश्यमतो गण-पति जमती ॥ राह्योरुस्यतो विनायकम् ॥ १ ॥ जातवेनसे कश्यपो तुर्गा विष्टुष् ॥ शतेरुत्तरतो तुर्गाम् ॥ २ ॥ तत्र वायसृतस्य ते व्यव्व-व्यक्तिरसा वायुर्गायत्रोहन्दः ॥ रवेरुत्तरतो वायुम् ॥ ३ ॥ पतानम-व्यान्यद्वन्ति साम्बद्यायिकाः ॥ तत्र केषु विन्यन्तेषु मूलं चिन्त्यम् ॥ ४॥ शादित्यक्तस्य वतस्य व्यक्ताकाशो गायत्रो ॥ राह्योदिक्षिणे आकाशम् ॥ ॥ एको उपायस्कण्याध्वनौ गायत्रो ॥ श्रश्विताविहाग्रुह्नतामिह

विश्वामित्र ऋषिः ऋष्टुः छन्दः **हन्द्रो दे**तवा इन्द्रस्थापने विनियोगः ॥ ॐ सयोषा इन्त्र अक्राप्त्रावयामिन्द्रहागकोह तिछ इन्हं ॥ ६ ॥ यसाय त्या इत्यस्य दुष्पकाधर्वण ऋषिः यजुरुक्ष्यः यमो देवता समस्त्रापने विनियोगः ॐ समाय त्वाक शनेरान्तेयभागे बसेदागम्ब्हेद तिष्ठ यमे । ॥ कार्चिरसीत्पस्य अजापति क्रियः सञ्जून्त्रस्यः काश्री देवता काकाबाहने विनिधोगः ॥ ॐ काचिरसी+ राहोरोशान्या कालेदागण्डह विष्ट कार्क ।। ४ ॥ चित्रावसो इस्यस्य यनुर्जगती हरूदः विश्वनुत्तो देवता वित्रनुत्तस्थायने विनियोगः ॥ ॐ चित्रावसो स्वस्ति दे० केक्षोर्ने करवां चित्रगुसहामच्छेह विष्ठ भित्रगुस ॥ ९ ७ अथ मत्यधिदेवतास्थाप-मम् ॥ श्रक्कपृष्याक्षतीरेव भहाभिदेशतयोमध्ये बावित्याविक्रमेण सन्ध्याचाः सर्वाः प्रस्यधिदेशताः स्थापयेत् ॥ तद्मया ॥ अस्तिन्द्रुतमित्यस्य विरुपाक्ष अस्त्रिगांवन्ती-हुन्दः स्राप्ति हें बता स्राप्तिस्थापने विभियोगः ॥ उँँ अभिगृह्वं • सन्ते हहागच्छेह तिष्ठ अभिन ॥ ३ ॥ त्रापोहिष्टस्यस्य सिन्युक्षीप क्वियः गामत्रीखन्तः स्रापो देवता . क्या स्थापने दिनिक्षेतः ॥ ओं खायो डिहा० बाप इहामध्येड तिष्टे ति भावः ॥ ॥ २ ॥ स्वोनापृथिवीरवस्य मेषातिथि ऋषिः गायत्रीक्षन्तः प्रथिवी देवता प्रथिकीः क्यापनै विशिष्योगः ॥ औं स्योत्राष्ट्रियतो । पृथिवि इहागच्छेह तिरहेति पृथिवी । ॥ ६ ॥ इदं विष्णुरित्यस्य सेवासिय अस्थिः गायत्रीक्षण्यः विष्णुर्देवता विश्लुस्थाः वने विविधोगः ॥ श्री इदं विष्णु • विष्यो इहागच्छेद तिष्ठेति विष्णुं • ॥ भ ॥ इन्द्र बाखी इत्यस्य अवस्तिरव ऋषिः विष्टुप्टन्दः इन्द्री देवता इन्द्रस्यापने विनियोगः ॥ भो इन्द्र आसं ० इन्द्रेइशम्बेइ विष्टेति इन्द्रं० ॥ ५॥ मी बादित्यैरास्नासोरवस्य दध्यकाथर्वेण ऋषिः वज्जिबस्द्रम् सं • इन्द्राणी देवतः - इन्द्रांशि स्थापने विनियोगः ॥ क्यों कदित्यै रास्का० इन्द्राशि इहसारकेंद्र तिस्त्रेति

तिस्तामिति केतोर्विज्ञणेऽभिन्नते ॥६॥ पतानि विनायकादि स्थानानि चिन्तामकौ ॥ विनायकादीन् पञ्च उत्तरत प्रवेति सम्प्रवायः ॥ एवं स्नार्त्रश्चेता इति स्थानारायणादयः ॥ हेमाद्रौ तु सोकपानारीना-भि सूर्यामिमुखानां विष्णु स्थापनमुक्तम् । तथया ॥ इन्स्रं विश्वो जेता माधुरस्थास इन्द्रोऽनुषुष् ॥ इन्द्रेद्वाणच्छेद्व तिष्ठेति पूर्वे इन्द्रम् ॥ १ ॥ पवमुक्तरत्रं ॥ अति मेधातिथिरसिर्यायत्रो ॥ २ ॥ यमाय सोमं यमो यमोऽनुष्य् ॥ ३ ॥ मोधुणो धोरः करवो निर्म्यातर्याः वश्ची ॥ ४ ॥ तस्वायामि शुनःशेषो वस्यक्तिष्ठपूष् ॥ ४ ॥ तव वायो स्यश्चीवाङ्गिरस्तो बायुर्यायत्री॥६॥ सोमो घेनुं गीतमः सोमस्त्रिष्टुप् ॥॥॥

इन्द्रश्नीम् ॥ ६ ॥ असापत इत्यस्य हिरण्यगर्भे परिषः विष्टुप् छुन्दः प्रजापति-देवता अनापतिस्थापने विविधोगः ॥ उँँ प्रशापतेम त्र्वं प्रतापतेहागच्छेह तिष्टेति प्रतापति ॥ ७॥ नमोऽस्तु सर्पेश्य इत्यश्य प्रजापति ऋषिः प्रशुर्द्ध्यन्दः सर्थाः देवताः सर्पस्थापने विविधोगः ॥ उँ नमोऽस्तु सर्पेश्यो० ॥ सर्थान् ॥ शा नद्यावक्षानिमत्यस्य प्रजापति ऋषिः त्रिष्टुपहन्दः वद्या देवता वद्यस्यापने विवि-सोगः ॥ उँ त्रह्मत्रज्ञानं । अद्यन् इद्रागच्छेह विष्टं वि वद्याणं ॥ ९ ॥ उत्तर्थः परिमहक्षाराव्यस्तु अद्याणां दक्षिणपाश्ये प्रस्विधदेवताः स्थाप्या इत्याहः ॥

श्राश्च पञ्चरतोक्षपालानां स्थापनम् ॥ गणानारखेरयस्य प्रजापति क्विः सञ्ज्ञस्त्रत्यः गवापित्वस्या गणपितस्यापने विनियोगः ॥ ॐ गश्चाप्तारस्याण् स्थापेतस्याः गवापितस्य ॥ १ ॥ सन्ये अभ्विके हृत्यस्य प्रजापित व्यपिः त्रिस्तुष् स्वरुदः तुर्गाविका तुर्गाद्धापने विनियोगः ॥ ॐ वायो यति क्वियोगः ॥ ॐ वायो वे ते० सूर्याद्वास्त्रत्यो सुर्गास् विनियोगः ॥ ॐ वायो ये ते० सूर्याद्वास्त्रत्यो सार्युरंगता वायुर्वयापने विनियोगः ॥ ॐ वायो ये ते० सूर्याद्वास्त्रत्यो सार्युरंगता वायुर्वयापने विनियोगः ॥ ॐ वायो ये ते० सूर्याद्वास्त्रत्यो सार्वाश्चरत्यापने विनियोगः ॥ ॐ व्ययो क्वित्रस्थापने विनियोगः ॥ ॐ स्वरं स्वप्तायानाः राहोर्विक्ष्यतः माकाशं० ॥ ॥॥ यावाञ्चरोरकस्य मेनातिथि वर्षाः गायत्रीस्त्रवः सहित्यते देवता सन्त्रिणे स्थापने विनियोगः ॥ ॐ वावाञ्चराण वेतोर्वक्षित्रस्यः सहित्यते देवता सन्त्रिणेतस्य ।। स्वर्थते विनियोगः ॥ क्वित्रत्यान्ति विनियोगः ॥ क्वित्रत्यान्ति विनियोगः ॥ क्वित्रत्यान्ति विनियोगः ॥ क्वित्रत्यान्ति स्थापने स्थापिति वास्त्रोध्यतिक्षाऽऽवाङ्गयेत् ॥ इत्येके ॥ निष्ति स्थापित्व विनियोगः ॥ ॐ महि स्थापिति वास्त्रोध्यतिक्षाऽऽवाङ्गयेत् ॥ इत्योक्षतिक्ष्यायने विनियोगः ॥ ॐ महि स्थाप क्रियान्तिक्षायति इद्याग्यस्य विद्वामित्र स्थाप क्रियाक्षत्र क्षेत्रामित्रते स्थापने विनियोगः ॥ ॐ महि स्थाप क्रियाक्षत्र क्षेत्रामित्रते स्थापने विनियोगः ॥ ॐ महि स्थाप क्रियाक्षत्र क्षेत्रामित्रते स्थापने विनियोगः ॥ क्वित्रते स्थापने स्थापने विनियोगः ॥ क्वित्रते स्थापने स्थापने

तमीशार्थ गौतम ईशानो जगती ॥ व ॥ सहस्रशीर्थ नारायचोऽनंतोऽ-सुष्प्॥ ईशानपूर्वयोर्मध्येऽनन्तम् ॥१॥ ॐ ब्रह्मज्ञानं गीतमो बामदेवो ब्रह्मा विष्यु ॥ नैक्क्स्यपश्चिमयोर्गभ्ये अहार्ष ॥ १०॥ तत उत्तरे क्षेत्रस्य वामदेवः क्षेत्रपालोऽनुपुर्॥ बास्तान्यते बशिष्ठो बास्तोन्यति-किष्ट्प् ॥ ततो लक्षद्दोमधोदिन्द्रं मित्रमित्यनेन ॥ सामध्वनिश्चरीरस्त्यं बाहुनं परमेष्ठितः ॥ विषयापहरो नित्यमतः शान्ति वयच्छ म इत्यनेन चोत्तरे ॥ ,गरुत्मनतमाबाह्य रवेः पूर्वे शेषं सोमस्याने वासुकि भौमाने तस्तकं बुधोत्तरे कर्कोटकम् ॥ मृदस्पतेरमे पर्म शनिपश्चिमे शङ्खपासं राहोः पुरः कन्नलं केतोः पुरः कुलिकम् ॥ पोडारधाच्यामध्यन्थादि-सप्तमक्षत्राणि ॥ विच्छुम्मादि-सप्तयोगान् ॥ वव बासवकरणे ॥ सप्त-हीपानि भ्रान्वेवना । बक्षिले पुष्यादि समनदाशायि ॥ पृत्यादिसमः योगान् ॥ कीवव रीतिवकरये ॥ सप्तसागरान् ॥ यतुर्वेदश्च पश्चिमे स्वात्यादिसप्तनश्चत्रासि ॥ वजादिसप्तयोगान् ॥ गर-विजकरके ॥ सप्तपातालानि सामवेदश्र ॥ उत्तरे-अभिक्रिदादिसप्तनक्षत्राहि साध्याविषद्योगान् विष्टिकरत्तम् ॥ भूरादीन् सप्तलोकान्। अयर्ववेद-श्रा ॥ वायव्ये भ्रवं सप्तर्थांस्य ॥ भय ययावकाशं महाविसप्तस्तरितः ॥ सप्तकुलाचलान् । ऋषी वसून् । द्वादशादित्यान् ॥ प्रकादश रहान् ॥ सरतः ॥ पोडशमात्ः ॥ पषृत्रः ॥ बादश मासान् ॥ वे भयने ॥ एअ-इश तिचीत् ॥ पष्टिसम्बद्धरात् ॥ छुपर्णात् ॥ नागान् ॥ सर्पान् ॥ यक्षान् ॥ गन्धर्वान् ॥ विद्याधरान् ॥ अध्वरसः ॥ रचांसि ॥ भृतानि ॥ मनुष्यानिति ॥ कोदिइमि तु वेदेः पूर्वे अझार्च मध्ये अनार्दनस् ॥ पश्चिमे बहुन् ॥ वस्तरे स्कन्बमिन्येतानध्यायाह्येत् ॥ वतोऽस्मिन न्कर्मन्ति देवतापरिप्रहार्थेय् अन्वाधानं करिष्य इति सङ्ख्य चञ्चयी शाज्येनेत्यन्तमुक्त्वा सूर्यादोस्प्रदादीम् समिदास्यनैवेदाशेषस्यस्थिरः इसङ्खाद्यताष्ट्रःविशृत्यद्यन्यतमसंस्थयाऽभिवेषतामस्यभिदेवतावि-नायकादीन स्रोकपालांभामुकसंक्यया एतैरेव द्रव्यैः केत्रपाला-दींबामुकसंस्थया सूर्याचाः सर्वा देवता दशसस्याकतिलाहुतिभिः

त्रिष्टुरक्रम्। बास्तोपशितर्देवता बास्तोष्यविस्थायने विविधीमा ॥ व्य बास्तो-व्यक्ति बास्त्रोष्यति हृद्यागकोइ तिष्ठ ॥ ७ ॥ एवं द्वात्रिशहेवता हृश्युक्त्वा बारा-बक्षात्वम ॥ हेमादी तु दिक्शकानामि पूर्वाभिमुक्तानां दिख्य स्थानवामुर्तः ते बाही स्वाप्ताः ॥2हति केचित् ॥ इशेति मश्वरते हति ॥ अथ विक्याक्त- स्रित वायुं स्यं प्रजापति च प्रत्येकं पञ्चिवशतिशतमिताभिक्तिलाहुः विभियंद्ये ॥ लक्षद्दामे पञ्चिवशतिसहस्रामिताभिः ॥ कोटिद्दामे पञ्चिवश्वितसहस्रामिताभिः ॥ कोटिद्दामे पञ्चिवश्वितसहस्रामिताभिः ॥ कोटिद्दामे पञ्चिवश्वितसहस्रामिताभिः । स्वाः श्रेषेण विष्णुकृतमित्यादियद्य इत्यन्तमुष्ठाय समिद्द्यमाधाय निर्वाणिदिकमेण गुहोदषायीत् नवान्यांका गुद्धांकायोविशितिमिति द्वार्तिशत् नवैद या चक्षत् अपिदिक्ष पञ्चिमः षोद्धशिभवेष्वारेः सम्पूजयेत् ॥ तत्र बस्ताणि प्रद्ववर्णात ॥ विश्वभौमयो रक्तवन्दनम् ॥ चनद्वशुक्तयोः श्वेतच्वत्वनं ॥ बुधगुर्वोः कुङ्क-मयुत्तम् ॥ श्विन-राहु-केत्नां दृष्णागुर्वं पुष्पाणि तत्तद्वणीनि ॥ यूपास्तु सङ्क्षकोनिर्यासम् ॥ श्वतक्तयवाः ॥ रात्तमगर्वं सिद्धकं विव्वयुत्तगृष्ठं गुग्गुलम् ॥ त्वाद्वाक्रमद्वापश्या व्यवः दृश्चः दृश्चित्वं सर्वेभ्यो दीपान् दृत्वा गुद्धोदनं पायसं भीवारौदनं चीरयुत्वपाष्ठिकोदनं दृष्योदनं पृत्वविद्यं तिल्नावयुत्तमोदन मांकीदनं चीरयुत्वपाष्ठिकोदनं दृष्योदनं पृत्वीदनं तिल्नावयुतमोदन मांकीदनं चिश्वीदनं चक्रमान्निवेदयेत् ॥ अधिदेवताविभ्यस्तु वासोगन्यपुष्पाणि श्वेतानि ॥ गुग्गुलुर्घूयः ॥ विद्ये पायसादिययालामम् ॥ सूर्योदिद्वािश्वतानम्येषां च सर्वेषां पृजापदार्थानुसमयेनेव ॥

ततो बेदीशान्यां कलशं संस्थाच्य तत्र बरुगुमाबाह्य सम्पूज्याधिः

मन्त्रयेत् ॥ तद्यथा —

कत्तशस्य मुखे विष्णुः कएठे कद्रः समाश्रितः । मृछे तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्वृताः ॥१॥ कृती तु सागराः सप्त सप्तद्वीपा बस्नून्यरा । ऋग्वेदोऽय यजुर्वेदः सामवेदो सथवणः ॥२॥

देसतास्थायसम् ॥ जाताश्मित्यस्य गर्ग ऋषिः त्रिष्टुष्कृन्दः इन्ह्रो देशता एग्ह्र-स्थायमै विभिन्नेतः ॥ ॐ त्रावाश्मित्रः । भावतां इन्ह्रं ॥ ॥ ॥ श्वास्त्रः अविश्वास्त्रं । प्रत्ये स्थाप्ते अविश्वास्त्रं । प्रत्ये स्थाप्ते अविश्वास्त्रं । प्रत्ये स्थाप्ते । प्रत्ये स्थाप्ते । प्रत्ये स्थाप्ते स्थाप्ते स्थाप्ते स्थाप्ते । प्रत्ये स्थाप्ते स्थापते स्थाप

अङ्गेश सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः । **श्र**त्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा ॥३॥ द्य(यान्तु यजगानस्य दुरितच्चयकारकाः देवदानवसम्बादे मध्यमाने महोदधौ इत्पद्मोऽसि तदा कुम्भ विष्टतो विष्णुना स्वयम् । त्वत्तीये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे श्वयि स्थिताः ॥५॥ त्विय तिष्ठन्ति भूतानि त्विय माशाः मतिष्ठिताः । शिदः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ॥६॥ श्चादित्या बसवी रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः। स्विध तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलपदाः ॥७॥ त्वरश्रमादादिमं यहं कर्तुमीहे जलोद्भव 1 साक्षिष्यं कुरु मे देव ! शसको भव सर्वदा ॥=॥इति॥ हतः फलपुष्पमालाशोभितं वितानं बृहस्पतिदेवतं सूर्योदिस्य इदं न ममेरयुरसूज्य प्रहवेद्युपरि अभायात् । ततसर्वासादनाद्याज्य-भागान्ते यजमातः सर्वा भावाहिताः सूर्यादिदेवछाः अग्निवाशु-सुर्यप्रजावतीं मोहिश्य समिदाज्यश्वदिलान् होतुमुत्स्को न ममेति स्यजेत्। ततो प्रहत्त्रिकः समिदाज्यनैवेदाशेषचस्त्र कमेणावाहित।भ्यो द्वतः।भ्योऽष्टसहस्राधःयतमसंस्ययाः समस्तन्याङ्गविभिन्नेष्यमावतः

स्विः जिन्द्रुष्कंदः निर्मातिदेवता निर्मातिस्थायने विनियोगः ॥ ॐ आवो नियुज्ञिक स्थायमा वार्युक्ताव्यव्यक्तं सोसेत्यस्य वंद्य ग्रंति गायश्री स्वन्यः खोसो देवता सोस-स्थायने विनियोगः ॥ ॐ ववर्षे सोसक ॥ व्ह्रीव्यां सोसंक ॥वव्रावसीशस्य स्थायस्य गीतस्य प्रित्योगः ॥ ॐ तसीशस्यं प्रेशास्या प्रेशास्या प्रेशास्या प्रेशास्य ॥ ॐ तसीशस्यं प्रेशास्या प्रेशास्या प्रेशास्य ॥ ॐ तसीशस्यं प्रेशास्य प्रेशास्य व्याप्य प्रतियोगः ॥ ॐ तसीशस्यं प्रशासिकं व्याप्य प्रतियोगः विश्वियोगः ॥ ॐ तसीशस्य व्याप्य प्रतियोगः विश्वियोगः ॥ ॐ व्याप्य व्याप्य व्याप्य प्रतियोगः विश्वियोगः ॥ ॐ व्याप्य विश्वियोगः ॥ ॐ व्याप्य विश्वियोगः विश्वियागः विश्वियोगः विश्वियो

सम्मन्त्रेनी हुःवा घृतास्त्रतिसैः ताभ्य यव देवताभ्यः प्रत्येकं दश-वशाहतीहुँत्वा सोमं राजानमिति स्विष्टकृतं हुत्वा व्यस्तसमस्तव्वा-इतिमिस्तितेरयुतं सर्चं कोडि वा शुहुयः । तव होमे भ्राग्वेदिनस्ता-बदाबाइमोक्तानेव मन्त्रान्यठन्ति । यजुर्वेदिनां त्रूच्यन्ते । बाह्यस्योव हिरस्यस्त्पः सविता विष्टुप् सूर्यशीतमे विकाल्यहोसे विनियोगः। 🎜 ब्राह्मणीय॰ पश्यन् स्वाहा इसं सुर्याप॰ ॥१॥ एवं सर्वत्र ॥ इसं देवा चरुका सोमो वज्ञः॥ ॐ इमं देवा० राजा ॥२॥ चन्निर्मूर्जा बिसपोऽहारको गायत्री ॥३॥ उद्रशुभ्यस्य परमेष्ठी बुभक्तिन्द्रुप् ॥ ७ ॥ बृहस्यते पुरसमदो बृहस्पतित्मिन्दुप् ॥४॥ आजारमजापति अभिवत-ररूवतीन्द्राः सुको जगती ४६॥ शबो दण्यक्राधर्वेष सनिर्मापत्री ॥॥॥ कयानो वायवेको राहुर्गायकी ॥=॥ केतुं मधुस्तृन्दाः केतको गायको ॥॥॥ • कथाधिदेवतामाम् ॥ ज्यम्बकं वांशको चहोऽतुष्टुप् ॥१॥ सन प्रवीतोदकं स्पृशेत् ॥ श्रीक्ष तेत्युक्तरनारायवा जमा विष्टुप् ॥२॥ श्चनक्रन्दो मास्कर-ममदम्नि-दोर्घतमा-स्कन्दिकास्टुए ॥३॥ विष्यो रराट-मुत्तव्यो विष्णुर्यकुः ॥ ॐ विष्यो रराड॰ वेरवः ॥४॥ मा मसन् प्रजाः पतिश्रीहा चञ्चः ॥ ॐ भा प्रहान्० बह्वता ॥१॥ स जीवा विश्वानिक इन्द्रक्षिन्दुप् ॥ ॐ सजोषा इन्द्रः ॥६॥ असिथमो मास्कर-जमबहि-दीर्घतमस्ते वमस्तिष्द्रप् ॥ अ अस प्रकोतोदसं स्पृशेत् । कार्विरिक्ष कृत्यक्कावर्षतः कालोऽतुष्तुप् ॥ व ॥ अजापि प्रकीतोदकं स्पृशेत् । चित्रावसाम् पर्याध्वत्रमुता बगती ॥ 🦥 चित्रावसोः ग्रीयः ॥१॥ अथ मत्यधिदेवतानास् अ अप्ति दूर्व विक्रपोऽग्नियाँयश्री ॥१॥ क्रव्यक्तर्बुहरूपतिरापः पुर उम्लिक् ॥ २ ॥ स्थोना मेधातिथिः पूर्यानी शायकी ॥३॥ इसं विज्युर्मेधातिधिविज्युर्गायकी ॥४॥ जातार गार्थ इन्ह्र्यक्रान्तुप् ॥॥॥ कविश्यै इष्वक्र्यायर्वेश इन्द्रापी क्ष्युः॥ व्यक्तिस्यै बाक्षातिक ॥६॥ समापते बदवः प्रजापतिक्रिन्द्रप् ॥॥॥ नमोऽस्तु वैवाः सर्पानुष्तुप् ॥८॥ महामकापतिमेहात्रिष्तुप् ॥६॥ अ सम विनायकादिः

संस्थापम् ॥ अयोक्तिहिति सूर्यास्थरनाम्सदेवता। सुपतिहिता वरक्षः स्थापिक वृति प्रतिकाण सन्भूष्य ॥ वक्षासमाधादारावास्थानाम्य भूरका सदस्द्रुवी क्रमांत् पूर्वनमानीक प्रति ॥ पूजारितक्ष्यवाष्ट्रत्व। वक्तिः पूजांहृतिस्तवा ॥ क्षेपीश्रानं शाक्ककंत्रनी दक्षारस्थानं सुदक्षिणायः ॥ कारवेदिभिषेकावीम् किसर्वनगतः। क्ल्ब् ॥ इत्यादि कर्म अर्थादिति ॥

पञ्चानाम् • ॥ गणानां प्रजापतिर्गेषपितर्यद्धः । ॐ गणानान्त्वाः मम् ॥१॥ अभ्ये प्रजापतिर्जुर्गाऽतुष्दुप् ॥ २॥ आतो या गन्धर्या पात दक्षिणुक् प्रमाणतः स्वादादने विनियुक्तानप्येतान् होमे पटन्ति । तत्र प्रहार्गो सप्रमासका एव ।

श्रम्येवां त्यम्ते । आवो राजामं वामदेवो व्यक्तिष्टुप् ॥ १ ॥ भाषो विद्या वाम्वरीयः सिन्धुद्वीप उमागायत्रो ॥ २ ॥ स्योना मेघा-तिथिः स्कन्दो गायत्री ॥ ३ ॥ ददं विद्युमेंधातिथिविद्युगांवत्री ॥ ४ ॥ स्वमित्समया गौतमो अहार ष्ट्रती ॥ ४ ॥ दन्द्राधिदेवता सय उक्त-सुगिन्द्रविद्यु ॥ ६ ॥ आयं गीः सार्पराची यमो गायत्री ॥ ४ ॥ अहा अञ्चानं गौतमो वामदेवः कालस्विद्यु ॥ ६ ॥ यदा हातं कीशिकः सित्रगुतोऽतुद्यु ॥ १ ॥ अस्तिव्यत्वे आपस्तिद्यु ॥ २ ॥ पृथिव्यान्तिरस्य विद्युः पृथिन्युव्यक्ति ॥ १ ॥ उद्यत्तमं गौतमो वामदेव आपस्तिद्यु ॥ २ ॥ पृथिव्यान्तिरस्य विद्युः पृथिन्युव्यक्ति ॥ ३ ॥ सहस्रशीर्या नारायणो विद्युरतुद्धप् ॥ ४ ॥ स्व्यापन्ते महस्वत उत्तानपर्णे सुभगे प्रजापते विद्युरतुद्धप् ॥ ४ ॥ सम्यापतिर्वाद्यु ॥ ३ ॥ सम्यापतिर्वाद्यु ॥ ४ ॥ नमोऽद्तु सर्पभ्या देवाः सर्वातुन्दुप् ॥ ६ ॥ एव अहार प्रजापतिर्वाद्या विद्यु गायत्री ॥ ४ ॥ आत् न दन्द्रः कुसीदः कारवरो गणुपतिर्वायत्री ॥ ८ ॥ जात्रवेदसे कस्यपो दुर्गा विद्यु ॥ ६ ॥ आदि-वृत्यस्य आकाशो वायत्री । काण्यत्रितो वायुवव्यक्ति । आकाशादिभ्यस्य स्थापनमन्त्रा एव ।

होवबासुक्याविश्यस्तु प्रण्याद्याः लाहान्तानाममन्त्रा एव । लचन्कोटिहोमयोरिग्द्रं मित्रमिरयनेन गठत्मद्रोमः । कोटिहोमे तु महा-क्षणार्दनस्द्र्रस्कन्देश्योऽपि नाममन्त्रेहोमः । ततो यक्षमानो भण्डपन्नागद्धारकलशसमीपे वातारमिन्द्रं गर्ग स्म्युक्तिष्टुप् । स्म्युवीरयर्थं बिल्यदाने विनियोगः । वातारमिन्द्रं स्म्युक्तिष्टुप् । स्म्युवीरयर्थं बाल्यदाने विनियोगः । वातारमिन्द्रं स्म्युक्तिष्टुप् । स्म्युवीरयर्थं कायुक्तिय सशक्तिकायाऽमुं सदीपमावभक्तवित्तं समप्रयामि नम स्ति सदीपमावभक्तवित्तं प्रश्चितकायाऽमुं सदीपमावभक्तवित्तं समप्रयामि नम सकु-द्वापमावभक्तवित्तं में सम्म्युक्तियां स्मयं स

द्वादशबारं नारिकेलादिफलय्काज्यं गृहीत्वा पूर्वाहुर्ति खुहुयात् ।

तत्र मन्त्रः समुद्रावृभिरित त्यस्य गीतमी बामदेबोऽप्ति-किन्दुण् पूर्णाहुती विनियोगः। प्रमान्नेऽपि विनियोगः। मूर्जानन्दिबो मरद्वाजो वैश्वानरिक्षपुष् । पुनरिक्षत्रं सुद्धम् दित्याक्षिष्ठपुष् । पूर्वा दिवे विश्वदेवाः शतकतुरत्वष्ट्ष् । सात ते सगते सप्तवानमिर्जगती। भामं ते वामदेव आयो जगती। भामं ते स्वादेति। यजमानस्तु इद-मन्त्रे वैश्वानराय वसुद्धदादित्येम्यः शतकत्वे सप्तवते सप्तयेम्यस्य न ममेति त्यजेत्। कातीयानां तु मूर्कानं विव इत्येव पूर्णादुतिमन्त्रः। सप्तय इदं न ममेति श्यागः। सामयानां तु प्रजापति ऋषिर्गायत्री-स्वन्द इन्द्रो देवता यग्रस्कामस्य यजमानस्य यजनीयम्योगे विनि-योगः। पूर्णद्दीमं यशसा सुद्दोमि योऽस्मै सुद्दोति वश्मस्मै ददाति। वरं वृष्णे वशसामानि सोकं स्वादेत्यनेन स्वृत्वेश्व द्दोमः। इन्द्रायेदं न ममेति त्यागः। ततो वसोर्कारया द्दोन्यामीति सङ्करूप्य यजमानो क्सोर्कार्त सुद्दुयास्।

मन्त्रास्तु—अग्निमीव इति नवानां मधुछन्दा अनिर्गायश्रीयसो-श्रीरायां विनियोगः। विष्णोर्गुकमिति वर्षणं दीर्यतमा विष्णुक्तिरहुप्। आ ते पिवरिति पश्रदशानां गुत्समदो ठहक्किन्दुप्। स्वादिष्ठयेति नवानां मधुन्छन्दः पवमानसोमो गायत्रो । महात्रैश्वानरसाम्नो महात्रैश्वानर ऋषिवैश्वानरो देवता पथ्याष्ट्रतीष्ठन्दः। ज्येष्ठसाम्बो मरहात्रो श्रृषिवैश्वानरो देवता विष्णुन्छन्दः वसोर्कारां छहोत्रित्यनु-वाकमपि पठन्ति शिष्टाः। एवं वसोर्क्कार्य हुत्वा पूर्णुवात्रविमाकादि च यथाशासं समाप्याऽऽचार्यसहिता ऋत्वित्रः सर्वोषधीभिरजुतिसाम् पक्षीपुत्रादिसहितं यजमानं स्वस्त्राखीवैर्मन्दैर्गवग्रद्विसमीपस्थ-कलशोदकेन सम्पातकलशोदकेन वाऽभिषिक्षेत्रः पौराणेश्व। ते च-सुरास्त्वामभिषिश्वन्तु 'ब्रह्म-दिष्णु-परेश्वराः।

वासुदेवो जगन्नायस्तथा सङ्कृषेणो विश्वः ॥१॥ प्रद्युम्नभानिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते । आखपरुतोऽग्निर्भगपान् यमा वै निश्वः तिस्तथा ॥२॥ वरुणः पवनश्चैत्र धनाध्यत्तस्तया शिवः । जञ्जणा सहिताः सर्वे दिक्षालाः पान्तु ते सदा ॥२॥ कीर्तिर्लक्ष्मीर्धितर्मेषा पृष्टिः श्रद्धा किया मितः ।
बुद्धिर्लक्षा वपुः शान्तिस्तृष्टिः कान्तिश्च मातरः ॥४॥
एतास्त्वामिमिषञ्चन्तु देवपत्न्यः समागताः ।
श्रादित्यश्चन्द्रमा भौमो सुध-जीव-सितार्कजाः ॥४॥
ग्रहास्त्वामिभिश्चन्तु राहुः केतुश्च तर्पिताः ।
देव-दानव-गन्धर्वा यत्त-रात्तस-प्रमाः ॥६॥
श्रापयो मनवो गावो देवमातर एव च ।
देवपत्न्यो द्रुमा नागा दैत्याश्चाप्सर्सा गणाः ॥७॥
श्रक्षाणि सर्वशास्त्राणि राजानो वाहनानि च ।
श्रीषयानि च स्त्नानि कालस्यावयवाश्च ये ॥८॥
सरितः सागराः शैलास्तीर्यानि जलदा नगाः ।
एते त्वामिषिश्चन्तु सर्वकामार्थसिद्धय इति ॥६॥

तरहं योरावृशीमह इति । ततो यजमानः स्नात्वा ग्रुक्षमाल्याम्बः रघर प्राचार्यादीन् सम्पूज्य तेभ्यो विश्वलां द्यात् । तत्राऽऽचार्याय धेतुम् । ब्रह्मणे कृष्णमनस्याहम् । पत्रं सदस्यत्विद्वारपासादिभ्यो यद्यात्रक्ति । तथा—

चेतुः शंखस्तथाऽनद्वान् देन बासो दयः क्रमात्। कृष्णा मौरायसं द्यागं एता वै दक्षिणाः क्रमात्॥

महानुद्दिस्य देयाः। ततः शक्त्या आहाणान्मोजयेत् , सङ्क्षयेद्वाऽ शकौ । ततो दीआभाग्रेभ्यो भूयसी एक्तिणो दृत्या मएद्ववदेवतामां मह्योठदेवतामां चोत्तरपूजां कृत्या पान्तु देश गणाः । सभ्यारमिष्-द्वो । असिष्ठ अहाणस्पत इति ता उत्याप्य विस्तृत्य भवज्याचीन् प्रतिमादीश्च सर्वान् सम्मारानाःचार्याय प्रतिपद्य, यस्य स्मृत्या च नामोक्तवा, प्रमादारकुर्वनामिति पठित्या कर्मेश्वरार्यस् कृत्याः विज्ञाशियो गृहीस्त ताम् नमस्कृत्य सुहसुतो भुजीतेति सर्वे शिवम् ।

इति श्रीभट्टशङ्करात्मजनीतकण्डलते शान्तिपरिमायःगयोगः।

इ.य. ग्रहयोगशान्तिः

यानसे दुर्भिकादि भयं चैवं चतुर्भहसयन्वये। महारोगमयं राष्ट्रद्रयो हिष्टिस्ताशनम् ॥१त पडवब्रहसमा थोर्गे दुर्पिलं संकरादिकम् । **जनक्त**यो नृपर्वेरं गभंनाशस्तु जायते॥२॥ ब्रहन्द्कसमायोगे मन्त्रिक्षो पर्या भवेत् । परवरवादि भर्य सर्वे सङ्करादि जनक्रयाः ॥३॥ पहराक्रीविनाशो वा महाभयमथाऽवि वा । सप्तप्रहसमायोगे जितीशमरणं भ्रुवम् ॥४॥ जनस्यस्यमेगाऽपि तदा निर्मातुषं जगत्। श्रत अर्ध्व महोत्पातनानादुःखमहाकुत्तम् ॥४॥ सूर्यः स्याड्ज्यतिरिक्तश्चेचदा योगी महाद्भुवः । विना चन्द्रेख योगोऽपि जगत्मलयकाररणम् ॥६॥ तहत्रजातजन्त्नां महारोगो महाभवम् । अर्थनाशः स्थाननाशो मानहानिर्देशीडनम् गाणा बातपित्तादिसम्भूतमहापीदा ू महद्भयम् समा योगग्रहा नृष्णं दोषान्कुर्वन्ति सर्वदा सदा। अवसासाभ्यन्तरे वाऽपि बायुद्दीनः श्रिवस्तथा । जनमाष्टद्वादशे राशी चतुर्थे पत्रावेऽभि वा सिंहा। पूर्वीकफलमेवात्र तस्मारुद्धान्ति अयत्नतः । कुर्याहीषाञ्चसारेख विश्वशार्व्य न कारयेत् ॥१०॥ ताचद्रेग्रहाकृतिं कृत्वा सौवर्धेन प्रयत्नतः। मुवर्षेन तदर्देन पादेनाऽपि कनीयसीम् ॥११॥ विच्याटां न कर्चन्यं कर्चन्यं शक्तितो नरैः। पूर्वोक्तलक्षरोनैय अहमूर्ति 🔻 कारयेत् ॥१२॥

ब्रहस्यैकैककलशं ब्रह्मोगभगरणतः। कारयेत्कुम्भमेकं वा निर्श्नेणं स्टढं नवस् ॥१२॥ ग्रहस्येशानदिग्भागे शुद्धदेशे समस्थले । कुर्एंडे दा स्थारिडले वाऽपि होमं कुर्याद् विधानसः ॥१४॥ तस्य पूर्वीत्तरे देशे पूजास्थानं प्रकल्पपेत्। **भ**तुरस्रं इस्तमार्च स्थिएटलं तएडुलेन तु ॥१४॥ लिखेड्ग्रहाकृति तत्र स्थापयेत्यतिमां ततः। भाषपत्यथिदेवादीन् दिल्लाकारतः विपेत् ॥१६॥ उक्तगन्धीस्तथाः पुरुषीस्तक्तन्मा≠यैः फलौरपिँ। तत्तद्वप्रहोक्तपन्त्रेण पूर्वोक्तेनैव पूजवेत् ॥१७॥ सस्तिवाचनपूर्वेण आचार्य ऋत्विजैः सह। प्रहणूनादिकं छत्वा नैवेद्यान्तं समर्पेयेत् ॥१८॥ ततो होमं मकुर्दीत स्त्रग्रहोक्कविधानतः। चतुर्ध्यम्तं प्रकुर्वीत कलशस्थापनं ततः ॥१८॥ पूर्वोक्तविधानेन शुद्धतोयेन पूर्येत्! पञ्चामृतं पञ्चसन्यं पञ्चस्त्रक् पश्चपञ्चकम् ॥२०॥ तत्र मन्द्रैविनिचिच्य श्रीषधानि विनिचिपेत्। तत्त्व प्रहोक्ति विवास्चान्यादाय निः श्विपेद्।।२१॥ भन्तिद्वैर्वास्पीर्वाऽपि कल्या पूरमेद्गुरुः। तत्तद्ग्रहोक्तविविधैस्तत्तन्यन्त्रेर्हुनेद्य ાારસા पर्वाज्ये जुहुपात्पक्षाचिलाहुतिमथाचरेत्। भथ स्विष्टकृतं हुत्वा होमशेषं समापयेत्।।२३॥ मद्रासनोपविष्टस्य यजमानस्य ऋस्विजैः। कलशस्योदकेनैवमभिषेकं समाचरेत् ॥२४॥ ्योगप्रहाकमन्त्रैयः अभियत्यविमन्त्रत्

नवग्रहोक्तमन्त्रैथ जातवेदादिपश्चक्षैः ॥२५॥ त्रियम्बकेन मन्त्रेश स्नेत्रस्य पतिना अपि । इन्द्रद्वयेनीव लोकपालाष्ट्रकैरपि ॥२६॥ मुरास्त्वा इति यन्त्रेण येन देवादयः क्रमात् । अन्यैश पुरुवस् क्षेत्र अभिषेकं समाचरेत् ॥२७॥ अभिवेकालुतं बक्षमाचार्याय निवेदयेत् । ततः शुक्कांम्बर्धरः क्वयादाज्यावलोकनम् ।।२८।। ऋत्विग्भ्यो दचियां दद्यादेतुं शङ्कादिकानिष । तदभावे यथाशक्ति हिरखयमपि दापयेत् ॥२८॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाययाविभवसार**तः** एवं यः क्रुरुते भक्त्या ग्रहदोषविवर्जितः ॥३०.। पूर्वोक्तसदेदोपैथ विमुक्तः पुत्रवान् मुस्ती। ब्रायुरैश्वर्यसम्बन्नो जीवेद्दर्यशतं नरः ॥३१॥ इइ होके सुबी भूखा परवाश्विवपुरं व्रजेत्। इति प्रदयोगशान्तिः ॥

ध्य श्रद्धानानि ॥ विष्णुधर्मीत्तरे— विष्णुष्टा-यदमातङ्गे कुङ्कुर्म रक्तवन्दनम् । पूर्णेकुम्भे कृतं ताम्रे सूर्यस्तानं विष्णेयते ॥१॥

सद्मातङ्गम् = गजम**द**ः।

उम्रीरं क शिरीपं क कुकुमं रक्तक्त्तम्। महन्यस्तिमदं स्नानं करदाविनाशनम् ॥२॥ स्नदिरं देवदारं च तिलानामसकानि च । पूर्णक्रम्भे कृतं रीप्ये भीमपीडाविनाशनम्॥३॥ नदीसम्भतोयानि तन्मदा सहितानि च । स्यस्तानि कुम्भे माहेये कुष्यिदाविनाशनम्॥४॥ शाहेये = मृग्मये ।

भौदुम्बरं तथा विन्तं वटमामलकं तथा ।

न्यस्तं तु कुम्भे सीवर्णे जीवपीटाविनाशनम् ।।४।।
गोरोचना भागभदः शतपुष्पा शतावरी ।
विन्यस्ता राजते कुम्भे शुक्रपीटाविनाशनम् ।।६।।
तिलान् मापान् मियकुं च मन्धपुष्पं तथैव च ।
न्यस्तं काष्णीयसे कुम्भे सीरिधीदाविनाशनम् ।।७।।
गुम्मुकं च माहिषे न्यस्येदाहुपीटाविनाशनम् ।।८।।
भूके च माहिषे न्यस्येदाहुपीटाविनाशनम् ।।८।।

शासम् = इरिशासम् ।

क्सहनिहर्ताः राजनः । पर्वताप्रमृदं तथाः । स्रागन्तीरं खदमपश्चि केसुपीटाविनाशनम् । १६॥ क्राहनिहरा – दशहोरसाता । सन्दर्गो – गण्डकः । सर्तः प्रहस्ताममिदं सर्वेपीटाविनाशनम् । इति प्रहस्तानानि ॥

श्राधाः ऽदित्यशास्तिः । भविष्ये ---

शादित्ववारं इस्तेन पूर्व गृश विषयणः ।

गन्त्रोक्तविधिना सर्व कुर्यात्यूनादिकं स्वेः ॥१॥

गत्यके सप्तमक्तामि कृत्वा भक्तिपरो नरः ।

गतस्त सप्तमे गाप्ते कुर्याद्वासणभोजनम् ॥२॥

भास्करं शुद्धसौवर्णं कृत्वा यस्तेन मानवः ।

गाम्त्रपत्रे स्नापयिका रक्तपुष्यैः मण्जयेत् ॥३॥

रक्तवस्तयुगच्छमं क्रतोपानधुगान्विसम् (

भृतेन स्नापयिका च लह्डुकान् विनिचेग च ॥४॥

होमं शृतित्वैः कुर्याद्रविनाम्ना च मण्यविस् ।

स्मिकोऽहोनारशतम्ह।विद्यातिरेकं च ॥४॥

होतच्या मधुसपिभ्यां द्धना चैव घृतेन च ।

गन्त्रेणाऽनेन विदुषे ब्राह्मणाय मदापयेत् ॥६॥
धादिदेव ! नमस्तुभ्यं सप्तसप्ते ! दिवाकर ! ।
त्वं रवे ! तारमस्वाऽस्मांस्तस्यात्संसारसागरात् ॥७॥
वतेनाऽनेन राजेन्द्र ! भवेदारोग्यमुत्तमम् ।
द्रव्य-सम्पत्मतप्तिरिति पौराणिका विदुः ॥८॥
ध्रिषे संवादिनो चेयं शान्तिः पृष्टिः सदा च्लाम् ।
स्वेपीदा स्वोरास कृता शान्तिः शुभनदा ॥

इत्यादित्यशान्तिः ॥१॥

अथ चन्द्रशान्तिस्तत्रैद---

शद्वचित्रासु संग्रह्य सेामवारं विवक्तणः। अनेनैवेक्कविधना कुर्यात्यू जादिकं विभाः ॥१॥ सप्तमे तु ततः माप्ते कुर्योद्याक्षणभाजनम्। कांस्थपात्रेज्य संस्थाप्य सार्वाहरूजतसम्भवम् ॥२॥ र्वेतवस्त्रपुगरद्धन्नं श्वेतपुरुपैः शपूर्णितम्। <u> शादुकोपानहच्छत्रं</u> भाजनासनसंयुक्तम् ॥३॥ होमं घृतंतिलैः कुर्यात्सोमनाम्ना च मन्त्र।वत् । ्र समिथे।ऽ**ह}त्तरशतपष्ट**ाविशतिरेव वह विश्वी होतच्या बधुसर्पिभ्यां दध्ना चैद घृतेन च । द्भ्यक्षशिखिरे कृत्वा बाह्यणाय निवेद्येत् ॥४॥ मन्त्रेणाऽनेन राजेन्द्र ! सम्बन्भक्त्या समन्वितः । ूर्महादेवजातिवद्वीपुष्पमीचीरपाएड्र 📑 भाम् । सौम्या भवाऽस्मार्कं सर्वदा वे नमा सम्मा इति चन्द्रशान्तिः ॥२॥

व्यय मञ्जलशान्तिः---

स्वारयायश्वारकं गृह्य ज्ञमायां नक्तभाजनम्। सप्तमे त्वथ सम्माप्ते हैमं ताझे निवेश्य वै ॥१॥

स्रमा = भूः ।

रक्तवस्त्रयुगच्छन्नं कुंकुमेनानुरुपितम् ।
निवेद्य भक्तकं सारं पुरुपभूपाक्तवादिभिः ॥२॥
देशं पृतिवर्धः कुर्यात्कुजनाम्ना स मन्त्रवित् ।
सिभेषेष्ठाचरशतम् प्राविश्वादिशतिरेव वा ॥३॥
देशव्या मधुसर्विभ्यां द्व्या चैव पृतेन च ।
मन्त्रेणाऽनेन तं दधाद्वासाणाय कुदुम्बिने ॥४॥
कुत ! कुमभवोऽपि त्वं मङ्गलः परिपठ्यसे ।
अमङ्गले निदृश्याद्य सर्वदा यच्छ मङ्गलस् ॥४॥
प्रवेकृते मौमकृतं दुष्कृतं शान्तिमामुगत् ।
कर्तव्यं भौमपीदासु तस्मात्मयतमानसैः ॥६॥
द्वि भौमशान्तिः ॥३॥

व्यथं बुधशान्तिः--

विशास्त्रासुर्धं गृश्च सप्तनकान् ययाऽऽचरेत् ।

शुधं देममधं कृत्वा स्थापितं कांस्यभानने ॥१॥

शुक्कवस्त्रयुगच्छकं शुक्कमान्य।तुलेपनम् ।

शुक्कवस्त्रयुगच्छकं शुक्कमान्य।तुलेपनम् ।

शुक्ष रितं बुद्धिजननो बोधवान् सर्वदा तृत्याम् ।

तस्त्रावबोधं कृष् ये सोमपुत्र । नमो नमः ॥१॥

दोनं वृत्तिलीः कृर्योद् बुधनान्ना च मन्त्रवित् ।

समिषोउद्देशिरशतमधाविश्वतिरेव या ॥॥॥

दोत्वया मधुसपिभ्यां दक्ष्मा चैव वृत्तेन च ।

शुक्षशान्तिरियं मोस्त्र वृथ्यकृतनाशिनी ॥४॥

भुषदोषेषु कर्तव्या तथा शान्तिकपौष्टिके ॥ - इति भुधशान्तिः॥

अथ गुरोः शान्तिः---

गुर्वे चैवानुराषासः पूजियक्रकितो नरः ।
पूर्वेकिविषयोगेन सप्तनकान्यथाचरेत् ॥१॥
दैमं हेममये पात्रे स्थापियत्वा बृहस्पतिम् ॥२॥
पीताम्बरयुगच्छक्षं पीतवज्ञोपक्षितिनम् ॥२॥
पादुकोपानहृष्क्षत्रकमण्डलुविभूषितम् ।
पूजियत्पीतकृश्वरेः कुङ्कुमेन विलेपितम् ॥१॥
धृपदीपादिभिर्दिच्यैः फलैरचन्दनतपञ्जलेः ।
खग्डखाद्योपहार्दश्च ग्ररोरम्रे निवेद्येत् ॥४॥
धर्मशास्त्रार्थत्रकत्र । ज्ञानविज्ञानपारम् ।
विषुधार्षिहराचिन्त्य देवाचार्य । नमोऽस्तु ते ॥४॥
होमं घृततिलीः कुर्योदगुकनान्ना च मन्त्रविष् ।
समिधाऽष्टोचरश्चतम्हार्विश्वतिरेव या ॥६॥

स्रक्षिधोऽत्राऽश्वस्यस्य'।

होतन्या मधुसर्पिभ्यां द्वना चैन घृतेन स् । एत्तृह्वतं महापुष्यं सर्वेशपहरं शिनम् ॥७॥ तृष्टिपुष्टिकरं नृशां गुरुवैकृतनाशनम् । विषयस्ये गुरौ कार्या महाशानितरियं तृभिः ॥८॥ इति बृहस्यविशान्तिः।

श्रथ गुरुपूजा ॥ स्कान्दे—

कन्याविवाहकाळे तु शुद्धिर्यस्या च विद्यते । ब्राह्मणस्योपनयने यस्य स्यादुत्यितो गुद्धः ॥१॥

इंटियतः 🏚 मासः 🎚

कृषिः पूजा सुरोः कार्या विधिवज्ञक्तिभावितैः । सदन्ती-कामपुष्वाणि पात्रं पानाशासर्वपाः ॥२॥ मदन्ती = यृथिका । कामो = मदनवृक्षाक्यः ॥

सुंड्यों वा संपामार्गे विदर्ज शक्विनी वंची र 'सहदेवी विष्णुकीता सर्वीवध्यः शतावरी ॥३॥ इष्टं मार्स इस्डि दे श्वरा शैकेयवम्दनम् िक्वा कर्युरमुस्तं च सर्वीवध्यः शकीर्तिताः शक्षा तथैवाऽयस्यभृष्ट्या च पश्चमन्यं कलं तथा। ं भूतनं सोदक्षम्भं च पीतवसासमन्दितम् ॥४॥ पञ्चरतीः समायुक्त बोशान्यां स्थापितेऽनलात् । या धात्रभाति मन्त्रेख सर्वास्त्रस्मिन्त्रनिचिमेत् ।।६।। कुम्यस्यापरि भागे तु स्यापयिता बृहस्पतिष् । प्रवर्णपान सौदर्खी मतिमां हु युधिष्ठिर ! । । ।। कार्येष्ट्र यथाशस्या वित्तशास्यविवर्जितः। मीसपद्गोपवीतिनीम् ॥**⊏॥** - श्रीतवस्रधुगच्छभां वृजवेद्दगन्वपुष्याचैस्तते। होमं समाचरेत् । स्मिथे।ऽरक्त्यहस्य हेतिव्याऽहोऽचरं शतम् अध। तिलाही दियवे। निवर्भ होतन्यं च यथा हरम् **बृहस्पतृति मन्त्रेण ऋषिकन्दः समन्त्रितः** ।।१०।। अन्त्रेखाः जोन जुहुयाद्धान्यपूर्वे **च चत्नतः** । वता हामावसाने तु पूजयेश वृहस्पतिम् ॥११॥ पीतगन्धैस्तया पुष्पैर्पदिषिश्च भक्तितः। इध्येदनं मु नैवेदं फलकाम्मूलसंयुवस् ॥१२॥ मन्त्रेष्टाऽनेन कौन्तेय ! समभ्यवर्थ पूनः पुनः 🕞 नगस्तेऽद्विरसां नाय । बाववतेऽध सूहस्वते ! ॥१.३॥

क्र्याहैः पीडितानाममृताय नमा नमः। पूजियत्वा सुराचार्य्ये पथादर्घ निषेद्येत् ॥१४॥ गम्भीरहटरूपाङ्ग ! देवेष्य ! सुमते ! मभा ! । नगरते क्रम्पते ! शान्त ! गृहाणाऽध्यै बृहस्पते ! ।।१४॥ अर्धमन्त्रः । अर्घ दस्ता सुरेशस्य जपहोमं समापयेत्। भक्तचायते सुराचार्य ! होमपूजादि संस्कृतस् ॥१६॥ प्रश्नं ग्रहाण शान्त्यर्थे बृहस्पते ! नमो नमः । **संकल्पमन्त्रः**-मन्त्रेखाऽनेन संकल्प्य पद्यात्सम्प्रार्थयेन्तृव ! ॥१७॥ जीवे। बृहस्पतिः सुरिराचार्यो गुरूरिङ्गराः बाचस्वतिर्देवमन्त्री शुभं क्रुयित्सदा मम ॥१८॥ प्रार्थनामन्त्रः-एवं सम्मार्थयेदेवमाचार्ये च मपूजयेत्। सर्वेषचारसंयुक्तां प्रतियां तां युधिष्टिर । ॥१६॥ मखस्य च गवा युक्तामाचार्याय निवेदयेत्। श्रथाऽऽचार्थस्तु नियतो वेदवेदाङ्गपारगः ॥२०॥ यजमानं सपरनीकं शान्तचित्रं जितेस्ट्रियम् । कुम्भोदकं ग्रहीस्वा तु मन्त्रेरेतीः प्रसिश्चयेत् ॥२१॥ इद्मापेश्यमन्त्रेश जामदन्निमृचा यां भोषधीरस्वावतीः कृष्मद्विशाभिषेचयेत् ॥२२॥ पश्चात्सम्भोजयेदियान् यथाशक्तवाः बुधिष्ठिरः ! एवं कृत्वा ग्रुरोः पूजां सर्वान्कामानवाप्तुयात् ॥२३॥ संक्रान्सावपि कौन्तेय ! तथा स्वाभ्युदयेषु च । कुर्वेन् बृहस्पतेः पूजावभीष्टं फलमाष्ट्रयात् ॥२४॥ संकारती ह गुरुसंकारती ।

इति गुरुपूजा ।

भय शुक्रशान्तिभैविष्ये— शुक्रं ज्येष्टासु संगृह्य श्वमार्था नक्तभे।जनम् । स्वयान्यः।

सुकतक्रममार्गेष दिजसन्तर्पणेन च ॥ १ ॥
सप्तमे स्वयं सम्प्राप्ते ग्रीच्यं शुक्रं तु कार्येत् ।
वंशपाने च संस्थाप्य पूज्येत्सितपंकजैर ॥ २ ॥
सदमाने सितैः पुष्पेस्ताम्बूलैश्वन्दनेन वा ।
श्रम्ने तस्य मदातन्यं पायसं श्वतसंप्तृतम् ॥ ३ ॥
दयादनेन मन्त्रेण जास्तणाय श्रुद्धन्तने ।
भागनो भगशुक्रस्य श्रुविः श्रुतिविशारदः ॥ ४ ॥
दित्ता प्ररक्तान्देशपानामुरारोग्यदे।ऽस्तु सः ।
होमं श्वतित्तैः द्वर्षां स्कुक्रनामना च मन्त्रवित्॥ ४ ॥
सिमधे।ऽष्टेशवरशतमञ्चाविशनिरेव वा ॥
होतन्या प्रधुसर्विभ्यां द्वा चैन श्र्तेन च ॥ ६ ॥

भव परिशुकादिशान्तिः। तत्रैव मात्स्ये---

अयाऽतः शृणु भूपाल ! मतिशुक्रमशान्तये । यात्रारम्भेऽवसाने च तथा शुक्रोद्ये सित ॥ १ ॥ शुक्रपूजा मक्ष्वेद्या तां निशामय भारत ! राजते वाज्य सीवर्णे कांस्यपात्रेऽय वा पुनः ॥ २ ॥ शुक्रपुष्पाम्बरयुते स्वेतत्रयञ्जलपूरिते । निभाय राजतं शुक्रं शुचिश्वक्ताफलान्वितम् ॥ ३ ॥ महारवेतसमायुक्तं सापगाय निवेद्येत् । ममस्ते सर्वेशकेश ! नगस्ते भृगुनन्द्व ! ॥ १ ॥ देव ! सर्वार्थसिष्ट्यर्थे गृहाणार्थ्वं निमेऽस्तु ते । दत्वैद्युर्धे कीन्तेय ! विणयस्य, विसर्वयेत् ॥ ४ ॥ एवं शुक्रोदये कुर्याद्यात्रादिषु व भारत ! ! तद्द्वाचरपतेः पूजां भवश्याम युधिष्ठिर ! ॥६॥ सीवर्णेपात्रे सीवर्णभगरेशं पुरोहितम् । पीतपुंच्याम्बरघरं कृत्या स्नात्वाऽय सर्पपैः ॥ ७ ॥ पाकामाश्वत्यभङ्गेन पश्चगव्यतिकेन द्व । मङ्गः≔पश्यवः ।

पीताङ्गरागवसने। घृतहोमं तु कार्यत् ॥ = ॥

मस्म्य तां यदा सार्छ द्वाह्मणाय निवेदयेत् ।

नमस्तेऽङ्गिरसां नाथ ! वाक्यते ते बृहस्पते ! ॥ ६ ॥

ऋर्ष्रहेः पीडितानामग्रुताय नमा नमः ।
संक्रान्ताविष कौन्तेय ! याचास्वभ्युद्रयेषु च ॥१०॥

कृषेन् बृहस्पतेः पूजां सर्वान् कामग्रुत् समस्तुते ।

अथवा मौक्तिकान्येव सुष्ठतानि बृहन्ति च ॥११॥

भागवाङ्गिरसी चिन्स्य तान्येव मतिषाद्येत् ।

६ति मतिशुक्रादिशान्तिः ।

माग शानि-राष्टु-केत्यान्तयः। भविष्ये -ग्रानेश्वरं राष्टु-केत् लोहपात्रेषु निक्तिपेत्।
कृष्णासुरः सम्यो भूषा दक्षिणा च स्वशक्तित्रशा १ ॥
चन्यामणं मुनीद्विक्तानां समित्रः सम्याः।
= सामने स्वय सम्मान्तेन वस्ति वाड्य कारयेत्॥ १ ॥

कृष्णवस्य गुन्वज्ञाने केषं कारपेट्युषः । गुन्नापक जनसम्ब कुम्मानिवनिवेश च ॥ ३॥ होमानकाने करसर्व आवासायोपपादकेड् । गुन्नेमर् । जनस्रेत्रह समस्ये राष्ट्रवे स्थाः ॥ ४॥ केतवे च नमस्युभ्यं सर्वे शान्ति स्वच्छह्य । व्यं कृते ववसस्य तकियोध स्पेरक्ष ॥ ॥॥ यदि भौमेः रितस्तो भारकरे राष्ट्रणा सह। केतृश्र मृत्ते तिष्ठन्ति सर्वे पीदाकरा प्रशः॥६॥ अनेन कृतमानेण सर्वे शास्यन्त्युपद्रवाः। इति शस्यादिशान्तिः।

मविष्योत्तरे-ततो मन्दस्य दिवसे स्नानमध्यक्कपूर्वकस् । कार्य देवं च विमाय तीलयभ्यक्रहेतवे ॥ १ ॥ यस्तु सम्बत्सरं यावत्माप्ते शनिदिने रतः। तैल ददाति विभाणां स्वशक्तचाऽभ्यव्यतेऽपि या ॥२॥ ततः सम्बत्सरस्यान्ते नाप्ते तस्य दिने पुनः । स्तोई घटापितं सीरिं तैलकुम्भे विनिश्चिपेत् ॥ ३ ॥ लौंडे वा मृत्मये बाड्य कृष्णवस्त्रयुगान्वितम् । कृष्णगोदिचिणायुक्तं कृष्णकम्बलशायितम् ॥ ४ ॥ ं स्वयमञ्चन्नतः स्नात्वा कृष्णापुर्व्यस्तमर्पयेत् । सुगन्धिगम्धपुष्पैश्र कुसरान्नैस्तिलोदनैः ॥ ४ ॥ वृज्ञियत्वा सूर्यपुत्रं ज्ञमस्वेति पुनः पुनः। कुष्णाय दिजञ्जूरूपाय तदभावे नराय च ॥ ६ ॥ देयः शनैश्वरी अक्तया मन्त्रेणाइनेत्र वै द्वित्र! क्रुरावके।कमवशाद्भवनं नामीति वे। ब्रह्मे वष्ट्रभा ७ ॥ तुष्टी वनकनकसुर्वं ददाति सॉऽस्मान् सनैवरः पातु । षः धुनर्नेष्टराज्याय - नरायः परितापितः ॥ = ॥ 1, **स्त्रमें ददौ निजं राज्यें समें सौरिः वसीद्**ह । कोर्छ नीखाञ्चनमस्यं मन्द्रचेष्टामसारिणम् ॥ ६ ॥ क्षावामार्तेयस्यस्युतं वयस्यामि शनैवस्यू । ं ममेरऽर्के दुवाय शर्ने बर्रोय नीहारवरा खिनमेचकाय॥१०॥ भारता रहस्य अन कामदस्तं फलमदो मे अन स्पेश्वा 🗜 वर्मे। असु . प्रेतराज्यस्य : इश्रहेशस्य : वै । वर्षः ॥११॥

श्रुनेश्वराय क्रुराय शुद्धबुद्धिपदायिने । य एमिनीमभिः स्तौति तस्य तृष्टि ददारयसौ ॥११॥ तदीयं तु भयं तस्य स्वप्नेऽपि न मविष्यति । इति शनिवतम् ।

स्कान्दे-श्रावणे मासि संजाते शोभने शनिवासरे !

केहरूपं शनि कृत्वा स्नाप्य पश्चामृतैनवैः॥ १ ॥
पुरुपैरष्ट्रविधेष् पैः फलैश्चैव विशेषतः ।
मन्त्रैः प्रपूजयेदेतैः क्रमेण प्रदृष्ट्रचमम् ॥ २ ॥
के।एस्सु पित्रके। वश्चः कृष्णा रौदो यमाऽन्तकः।
सौरिः शनैश्वरे। मन्दः पिष्पक्षादेन संस्तृतः ॥ ३ ॥
शक्तो देवीति सर्वत्र वैदिकेन च पूजयेद् ।
पूजियत्वा च नैवेद्यं नतः कुर्यास्क्रमेण दु ॥ ४ ॥
स्थाचभक्तं प्रथमे दितीये पायसं शुमस् ।
दृतीये स्वस्थिती कार्या श्रुष्टिनिस्तो केडाविक्षयः।

इति शनिस्तोत्रम् ।

सतः कु ताख्यितिभूत्वा स्तुति चक्री स बालका ।

पिष्मकादो दिज्ञश्रेष्ठः प्रशिष्टस्य मुहुर्मुहुः ।।

नमस्तै कोणसंस्थाय पिष्मकाय नमें।ऽस्तु ते ।

नमस्ते वश्रुक्षपाय कृष्णाय च नमे।ऽस्तु ते ॥

नमस्ते सदिदेहाय नमस्ते चान्तकाय च ।

नमस्ते यहसंद्राय नमस्ते सौरये विभा ! ॥ दे ॥

नमस्ते मन्दसंद्राय शनैक्षर ! नमे।ऽस्तु ते ।

नमस्ते मन्दसंद्राय शनैक्षर ! नमे।ऽस्तु ते ।

नमाई कुढ देवेश ! दीनस्य मणतस्य च ॥ ४ ॥

श्रानेश्वरखवाच-परितृष्टोऽस्मितं वतस ! स्तोत्रेणाऽनेन साम्पतस्।
वरं वरम भी वत्स ! येन यच्छापि बाध्यितम्॥ ॥ ॥
पिप्पलाद छवाच-अध प्रभृति ने। पौदा बालानां रविनन्दन !
त्वया कार्या महाभाग ! न स्वकीया कथश्चन ॥ १ ॥
यावद्रपष्टिकं जातं स्थ बाल्येन सूर्यज !
स्तेष्त्रिश्चाऽनेन योऽन्यस्त्वां म्यात्मातक्षरियतः ॥ २॥
शस्य पीदा न कर्पाच्या देया लामा महासुन !
आर्बाष्ट्रमिकया योगे वावके संस्थिते नरः ॥ ३॥

सार्देसत्तवर्षवर्षन्तं द्वादशजन्मद्वितीयराशिभर्यः शनैश्वरयोगः सोऽर्दाष्ट्रमिकसा दाग रत्युक्यते ।

तन यारे हु सम्मान्ने यस्तिलान होयसंयुक्तन् ।

शक्तिया इदाति हो। तस्य भीदा कार्या त्या विभो । ॥४॥

हुव्यां नां यस्तु विभाग समेश मेन सम्मिति ।

श्रद्धिक्षणा पीदा तस्य कार्या त्यमा न च ॥४॥

श्रमीसिमित्रियों होमं नवेश्व श्रेन निर्वेषेत् ।

श्रमीसिमित्रियों होमं नवेश्व श्रेन निर्वेषेत् ।

श्रमीसिमित्रियों होमं नवेश्व श्रेन निर्वेषेत् ।

श्रमीसिमित्रियों होमं नवेश्व श्रेन निर्वेष्ठ । ६ ॥

पूजां करोति यस्तुभ्यं भूपं वै ग्रम्युलं दहेत् ।

हुव्यावस्रोण संवेष्ट्य त्याच्या तस्य त्वया म्यथा ॥७॥

श्रम स्वाम-प्रमुक्तः शनिस्तेन वादिमित्र्यन्त्रम्य च ।

नारहं समञ्जूष्ठाय स्रमाम निजसंभयम् ॥ = ॥

इति शनैबस्यान्यः॥

अथार्कविवाहः ।

मयागरते बात्स्ये-

तृतीयां यानुषीं नैय चतुर्यी कः समुद्रहेत् । पुत्रपीत्रादिसम्पकः बुदुम्बी साऽग्निको बरः ॥ १ ॥ सद्देद्देतिसिद्ध्यर्थे तृतीयां न कदाचन । मे।हादद्वानतेर वाऽपि यदि गच्छेत्तु बानुषीम् ॥ २ ॥ नश्यत्येव न सन्देहे। गर्गस्य वचनं यथेति । तत्रैव संग्रहे तृतीयां यदि चोद्दाहेचहिं सा विषवा भवेत् । चतुर्योदिषिवाहार्थे सृतीयेऽकी समुद्रहेत् ॥ १ ॥

बादित्यदिवसे वाऽपि इस्तर्चे वा शनैथरे । शुभे दिने वा पूर्वाबे क्वयदिकविवाहकम् ॥ २ ॥

व्यासः-स्नास्वाऽलंकतवासास्तु रक्तगन्धादिभूषितम् सपुष्पफल्यात्वैकवर्षग्रन्मं समाश्रयेत् ॥१॥ सन्तव्यापेन संयुक्तमर्कं संस्थाप्य यवतः। धर्कसम्यामदानार्यमाचार्यं कन्पयेत्युरा ॥२॥ शर्कसमिधिमागत्य तत्र स्वस्त्यादि वाचयेत्। वान्द्राश्राद्धे दिरण्येन श्रष्टवर्गान्मपूजयेत्॥२॥ पृज्येन्मश्रुपर्केणं वर्दं विषस्य दस्तवः। सक्षेत्रस्य वस्तवः। सक्षेत्रस्य वस्तवः।। ॥ स्वश्रीप्रगन्भयाण्यादि वरायाऽस्मै मदाप्येत्। स्वश्रास्थाक्तम्भारेणं भन्नपर्कं समाचरेत्॥॥॥॥

जाक्षे∸प्रामात्माच्यामुदीच्यां वा सुपुष्यफलसंयुतम् । वरीक्षय यज्ञतेऽथस्तातस्थिएडलादि ययानिषि॥६॥

- कुर्यादिति **रो**क ।

कुत्वार्क पुरतस्तिष्ठन् शार्थयेचदृद्विजे।चमः । त्रिकेक्कवासिन्! सप्तास्य ! आयया सहिवा स्वे ! ॥ ७॥ हतीयोद्दाहर्ज देश्यं निवारय सुर्ख इव । तत्राऽध्यारोप्य देवेशं साय्या सहितं रहिस् ॥ 🖛 ॥ बस्नैर्वास्येक्तका गन्धेस्तन्यन्त्रेखेव पुजयेत् क्षप्रेव स्वेतवस्रेण तथा कार्पासतेन्द्रभिः॥ ६ ॥ गन्यपुष्पैः समभ्यवर्षे अन्तिन्तेरभिषिच्य च । गुडीदनं तु नैवेदां ताम्यूलं च समर्पयेत् ॥ १० ॥ व्यासः-अर्के मद्विती कुर्वन् अपेन्यन्त्रमिमं बुपः। मम मीतिकरायेथं गया सञ्चा पुरातनी ॥ ११ ॥ व्यर्कना सद्याणा सुष्टा व्यस्माकं मति रचतु । पुनः प्रदक्तिणीकुर्यान्मन्त्रे एवनेन मन्त्रनित् ॥ १२ ॥ नमस्ते पङ्गके देवि । नमः सवितुरात्मने ! त्राहि मां कृपया देवि ! पत्रीत्वं में इहागता ॥ १३॥ श्रकत्वं श्रद्धाणा सृष्टः सर्वेत्र।णिहिताय च । हुजालामादिभूतरस्यं देवानां मीतिवद्धेनः ॥ १४ ॥ हतीयोहाइजं पापं मृत्युं चाशु विनाशय। ततम कन्यावरणं त्रिपुरुषं इतामुद्धरेत् ॥ १६ ॥ ब्रादित्यः सवितः चार्कः पुत्री पौत्री च नश्त्रिका । गोत्रं काश्यव इत्युक्तं लोके लीकिकमाचरेत् ॥१६॥ स्वस्तिमुक्तमुदीरयन्। सुप्रहर्ते विरोचेत आशीभिः सहितैः कुर्यादाचायम्मुखौदिनैः।।१७॥ द्मथाचार्यं समाहृय विधिना तन्त्रुखादः ताम् । श्तिग्रम ततो होमं श्रमोक्तविधिना चरेत् ॥१६॥-व्यासः-वार्ककन्यामिनां वित्र ! वशाशकिविभूपिताम् । गोत्राय शर्मेखे तुस्यं वृद्धं विषु ! समाध्य ।।१६।।

अझम्यज्ञतकर्भाणि इत्या कङ्कणपूर्वकम्। यावत्पञ्चन्नता सूत्रं तावदर्क प्रवेष्ट्येत्।(२०)। स्वशाखोक्तेन मन्त्रेण गायच्या बाऽयवा जपेत् ! पश्चीकृत्य द्वनः सूत्रं स्कन्धे बध्नावि मन्त्रतः ॥२१॥ बुह्त्सामेति यन्त्रेण सूत्ररचा मकन्ययेत्। अर्फस्य पुरतः पथाइक्षिणोत्तस्त्रथा ॥२२॥ कुम्भांश निचिषेत्पश्चादारनेयादिचतुष्ट्ये । सदलं प्रतिकुम्भं च त्रिस्त्रेयेव बेष्ट्येत् ॥२३॥ इरिद्रा-गम्धसंयुक्तं पूरयेच्छीतलं जलम्। मतिकुम्भं महाविष्णुं सम्पूच्य प्रमेशवरम् ॥२४॥ पादार्घादिनिवेद्यान्तं कुर्वात्रास्तीव मन्त्रवित्। अत्र शौनकोक्तो होसमकारः-**त्**तीये स्त्रीविवाहे हु सम्माप्ते पुरुषस्य हु। अर्के विवाहं वश्यामि शौनकोऽहं विधानतः ॥ १ ॥ अर्फसमिषिमागत्य तत्र खस्त्यादि वाचयेत्। नान्दीश्राद्धं मकुर्वीत स्थिषिडलं च मकन्पयेह् ॥ २ ॥ अर्रमभ्यवर्ष सौरर्वा च गन्धपुष्पात्ततादिभिः। सौर्या = स्यंदेवत्यया । श्राष्ट्रव्होनेत्यनया । ख्यं वात्वं कुतस्तद्वत् वस्त्रमाल्यादिभिः शुभैः ॥ ३ ॥ अर्थस्योत्तरदेशे तु समन्वारव्य प्रतया। पतया = अर्ककश्यका । चम्छेखनादिकं कुर्यादाघाराम्तमतः परम् ॥ ४ ॥ **ब्राड्याहुति च** जुहुवात्संगोभिरनयैक्या। यस्मै स्वा कामकामायेत्येतयर्ची ततः परम्।। १।। ज्यस्ताभिश्र समस्ताभिस्तत्तश्र स्विष्ट्रहानेत्। **वरिषे वनपर्यन्तमयाश्चे**स्यादिकं क्रमात् ॥ ६॥

मार्थनामन्त्रादिविशेषपाह व्यासः---

पुनः मद्विणं कृत्वा मन्त्रमेतमुद्दिरयेत् । मया कृतमिदं कर्म स्थावरेषु जरायुणा ॥ ७॥ स्वर्कावत्यानि को देहि तस्त्रमें क्षम्तुमहिस । इत्युक्त्वा शान्तिस्कानि जप्त्वा तं विस्रजेत्युनः ॥ ६॥ गोयुगं दक्तिणां द्यादाचार्याय च मक्तितः । इतरेभ्योऽपि विष्रभयो दक्षिणां चाऽपि शक्तितः ॥ ६॥ सस्तर्वे सुरवे द्यादन्ते पुण्याहमाचरेत् ।

श्रध प्रयोगः ॥ दतीयोज्ञाहात्याग्दिनचतुष्ट्याविकथ्यविद्वतृ रवि-हारे श्रनिकारे हस्तनदात्रे सुभविनान्तरे वा प्रामात्याच्यासुदीच्यां वा पुष्पप्तसयुताकांघस्तात्स्थाण्डलं कृत्याऽकंपश्चिमत उपविश्य मास-पद्माद्युवित्तव्य मम श्रुतीयमानुवीविवाहं भदोषावनुस्थामकविवाहं करिष्य इति सङ्कल्य गरोशपूजा-स्वस्तिवाद्यन-मानुप्भत-वृद्धिश्चाद्यारं चार्यवरणानि कुर्यात्। तत्र वृद्धिश्चाद्यं हेम्ना । श्रथाव्यार्येण पूजितो वरः।

त्रिलोकवासिनः ! सप्तान्त ! द्यायया रहितो रवे ! तृतीयोद्दाहजं दोषं जिन्तारय प्रखं क्रुरु !! १ ॥

इत्यकें स्त्राद्यांकें । ग्राकृष्येनित चायासहितं रिवनावाहा रवेत-यस्मस्याभ्यामावेष्ट्य सम्पूज्याऽऽपोदिष्ठेत्यादिभिरिमिषिष्य गुक्कोद-नताम्बूकावि समर्थ्यं प्रदक्षिणीकुर्वन्—

मम मीतिकरायेयं मया सष्टा पुरातनी । स्मर्कजा ब्रह्मणा सष्टा अस्माकं मतिरत्ततः ॥ १ ॥ इतिपटेत् ब्रितीक्यविक्यवां सु--

नमस्त्री मङ्गळे । देवि । नमः सवितुरास्मणे ! आहि मां कुपया देवि । पत्नीत्वं मे इहागला ॥ २ ते। स्रकं । स्वं ब्रक्षणा स्रष्टः सर्वभाणिहिताय च कार्यः प्रजासामादिभूतस्त्वं देवानां मीतिकर्द्धनाः ॥ भिग तृतीयोद्दाहजं पापं मृत्युं चाशुं विनाश्य ॥ इति तत काचार्येण मासपसायुक्तिस्य काश्यवकोत्रामावित्यस्य पुत्रीं समितुः पीत्रीमकंस्य प्रपीत्रीममामकंकस्यामित्युके बरः 'स्वस्ति न रन्द्रो सुरक्ष्यवा' इति सूक्तं परुष्ठकं निरीचेत । तत बाधार्यो विमेः सहाशिषो स्त्वाऽमुक्योत्रामुक्यमंग्रे संप्रददे । स्त्यकंकस्यां द्वारा—

श्चर्यक्वन्यामिमां विष्ठ ! यथाशक्तिविभूषिताम् । गोत्राय शर्मणे तुभ्यं दत्तां विष्ठ! समाश्रय ॥ १॥ इति पठेत्—

वरस्तु यहाँ में कामः समृज्यतामिति प्रथमां घमों मे हित द्वितीयां यहामे हित द्वितीयाम् इति बीनश्चताञ्चलीनकीपरि स्तिप्ता मायत्रया परित्वेत्यादिना वा पञ्चामृता स्वेशार्थमाप्रेष्ट्य तत्स्वं पुनः पञ्चगुणं कृत्याऽर्कस्य स्कन्मे यथ्वा वृहत्सामेति रक्षां परिकः रूपार्कस्य दिग्विद्दिवधी कुम्मान् संस्थाप्य वद्योष विस्त्रेश चानेष्ट्रम् हरिद्वागन्थाद्यन्तः शिष्ट्या तेषु नाम्ना महाविष्णुमादाश्च योडशोपचा-दैः सम्पृज्य स्थण्डिलेऽति प्रतिष्टाप्य शाधारावाज्येनेत्यन्तमुक्त्वाऽत्र प्रधानं पृहस्पतिमिति वायुं सूर्यं प्रजापति बाज्येन शेवेशेत्याद्यक्त्वाऽऽन धाराग्वेद्यंगोभिएक्तिस्य बृहस्पविश्चिष्टुण् क्ष्विवाहहोमे विविद्योगः ॥

ॐ सङ्गीभिराङ्गिरसो नज्ञमार्खो भग इ वेदर्यमर्खं निनाय । जने मित्रो न दम्पती अनक्ति बृहस्पते वाजया स्ट्रिकाजी खाहा॥१॥

बृहरूपतय इदं न ममेति त्यजेस् । यस्मै त्या वामदेवोऽद्वित्रिन्दुप् सर्वेविश्वाहृहोमे विनियोगः॥

के यस्म स्वा कामकामास वर्ष संझाळवजातहे। सप्तस्मभ्यं कामं दृष्ट्रम यथेदेत्वं धृतं पित स्वाहा स २ ॥ आग्नय १दं न सम । तता व्यस्तस्त्रभरतच्याद्वविश्विद्वंत्था स्विद्य-इक्षावि कर्मशेषं समाप्याके मृद्विणीरुत्य ।

भथा कृतिमदं कर्म स्थावरेण जरायुणा। अर्कापत्थानि नो देहि वत्सर्वे चन्द्रमईसीति॥१॥

१ 🗳 बृहस्पतेति पशुर्वेदिशास् । ६ 🐃 श्राहिन्द्रुतिनति ।

प्रार्थ्यां वार्याय गोयुगममन्येभ्यक्ष विषेश्यो वयाशिक विद्याणां दत्वा शान्तिस्कं जप्त्या पूज्योपस्करानाचार्याय दत्वा दिनचतुष्ट्यमसि कुम्भांश्च रहेत्। कुम्भेषु महाविष्णुं पूजयेच पश्चमदिनकृत्यं साक्षेत्र

चतुर्थे दिवसेऽतीते पूर्ववत्तां प्रपूष्टय च ॥ विस्टब्य होमपन्नि च विधिना माजुर्थी पराम् । वद्वहेदन्यथा नैव पुत्रपीत्रसमृद्धिमान् ॥ १॥

इति श्रीभद्दनीलकएठछते भगवन्तभास्करे शान्तिमयूकेऽकैषिवादः। नारदः-कुलीर-४प-सापारत्य-सु-युक्-कन्या- सुला-घटाः।

राशयः शुभदः ह्रेया नारीखां प्रथमार्भवे ॥ १ ॥ कुलीरः = कर्कटः । चापम् = धनुः । क्रन्यः = मीनः । नृपुक् = भिष्ठनम् । घटः = कुम्भः ।

स्मृतिचिदद्यकायाम् —

शुक्रपत्ते स्थीला स्यात्कृष्णे पत्ते सा कुलटा भवेत्।
कृष्णस्य दशमी यावत् मध्यमं फलमादिशेत् ॥ १॥
सया तभेद-अमा-रिक्ताऽष्ट्रमी-वष्टी-द्रादशी-असिपत्स्विप ।
परिश्चस्य च पूर्वार्द्धे व्यतीपाते च वैश्वती ॥ २॥
सन्ध्यास्पन्नवे विष्ट्यामशुभं प्रथमाचेत्रम् ।
रोगी पतिव्रता दुःली पुत्रिणी मोगमागिनी ॥ ३॥
पतिव्रता क्रेश्युक्ता सूर्यवारादिषु क्रमात् ।
कश्यपस्तु-ध्रष्टमी-पष्ट्यमा-रिक्ता-द्वादशी-सस्क्रमेऽपि वा ।
वैश्वती व्यतीपाते च ग्रहणे चन्द्र-सूर्ययोः ॥ १॥
विष्ट्यां सन्ध्यासु निद्रायां दुर्भगा प्रथमाचेवा ।
विष्ट्यां सन्ध्यासु निद्रायां दुर्भगा प्रथमाचेवा ।
विष्ट्यां सन्ध्यासु निद्रायां दुर्भगा प्रथमाचेवा ।
धर्मयुक्ता व्रव्हानी च परसन्तानमोदिनी ॥ १॥
सुपुत्रा चैव दुःपुत्रा पित्वेश्यरता सदा ।
दीना प्रशावती चैव प्रशाव्या चित्रकारिणी ॥ २॥

साध्वी पतिव्रता नित्यं सुपुत्रा कष्ट्रचारिणी।
स्वकर्मनिरता हिंसा पुष्या पौत्रादिसंयुता॥३॥
नित्यं धनकथासकता पुत्रधान्यसमन्दिता।
मुकार्थां व्या धनवती दसर्चादेः क्रगत्फलम्॥४॥
स्मृतिरत्ने-शुभं चैव तु पूर्वाक्षे मध्याहे मध्यमं फलम्।
व्यवसक्षेत्र विभव्यं पूर्वरात्रे शुभं भवेत् ॥ ॥॥

मध्यरात्रे हु मध्यं स्यात्पररात्रे शुप्रान्तिता । करयपः-मिताना मन्दवारे हु रात्राविष तथैव चेति । स्मृत्यन्तरे-मध्याहे हु भवेद्देश्या निशीथे विषवा भवेत्॥ तथा-खमा-सङ्क्रान्ति-विष्ट्यां च न्यतीपाते च बैधृतौ ।

परिघस्य तु पूर्वार्द्धं षट् पट् गएडातिगएडयोः ॥ १ ॥ व्याघाते नवशुळे तु नाड्यः पश्च चतुर्दश । वैधव्यमर्थहानि च सुतनाशं महद्भयम् ॥ २ ॥ वैधव्यं शतुरुद्धि च दारिष्यं जोगाजीवनम् । तेजोहानि समायाति सदा पुष्पवती ऋषात् ॥ १ ॥

स्यर्जभेदे फलभेदपाह वशिष्ठः---

ग्रामाद्वहिः परग्रामे वाचेत्स्याद्वव्यभिचारिखी । पतिव्रता पतिस्थाने द्वशिक्षा गृहपध्यके ॥ ४ ॥ ग्राममध्ये द्व द्वद्धिय विधवा च दिगम्बरा । परागारे च दुःशोला ग्रायुष्यं जलस्रिष्यौ ॥ ५ ॥ वनपध्ये द्व कन्याया धनधान्यसमृद्धिदा ।

परागार इत्यनेनैव पिर्द्यक्षातृगृहे निषिद्धम् । तथा च शिष्ठांचारः। विशेषनिषेधस्तु न दश्यते । स्थाः । चम्द्रे सहगुणसंयुक्ते देवरातः मनाच्छुसम् । शाचाशीचेऽपि चाश्चामिति गुरवः । वक्षफलमाहं पशिष्ठः न मुभगा स्वेतवसा स्याइहडबसा परिव्रता । स्रोमबसा सितीशा स्याभवस्ता प्रस्तान्विता ॥ १ ॥ दुर्भगा जीर्णवस्ता स्याद्रोगिणी रस्तवाससा । नीलाम्बरधरा नारी विभवा पुष्पिता पदि ॥ २ ॥ मिलानाम्बरती नारी देख्या स्याद्रजस्त्वला ।

रजोविन्दुफलमाह स एव—

बस्ते स्युर्विषमा रक्तविन्द्वः प्रुत्रमाष्तुयात् । समाश्रेत्कन्यका चेति फर्ल स्यात्प्रथमार्थवे ॥ १ ॥ देवरातः-सम्पार्क्जनी-काष्ठ-नृष्णा-ऽग्नि-सूर्पान्

इस्ते द्धाना कुलटा तदा स्यात्। तन्योपभोगे तपसि स्थिता चेड् इष्टं रजो भाग्यवती तदा स्यात् ॥ २॥

नारदः-तिथ्युचनारा निन्छाश्चेत् शेषः वर्ष निवारयेत्।
दोषाधिके गुणान्यत्ने तत्त्वधाऽपि न कारयेत् ॥ १ ॥
दोषान्यत्ते गुणाधिवये शेषः कर्म समापरेत् ।
निन्धान-तिथिवारेषु यदि प्रुष्पं मदृश्यते ॥ २ ॥
तत्र शान्ति मकुर्वीत घृत-दूर्वा-तिलाचतैः ।
मरयेकं शतमधौ च गायच्या छहुयाचतः ॥ १ ॥
स्वर्ण-गो-भृतिलान व चात्सवदोषापत्तुत्तये ।
भरती तत्राभिगमनं वर्ष्णयेच्छस्तवर्शनात् ॥ ४ ॥

षशिष्ठोपि-प्रभूतदोषं यदि दृश्यते तत्पुष्पं सतः शान्तिककर्मं कार्यम् । विवक्तं यदेव तदेकश्रस्यां यावद्रजोदर्शनमन्यवस्रे ॥ ४ ॥ भातेवानां तु नारीर्षां शान्ति वक्ष्यापि शौनकः । विविधारकीयोगेभ्यो सन्तेशसनग्रीश्रकार्यः ॥ ६ ॥ भूदेभ्यो दुःस्थितेभ्यस्र क्षत्रोक्षयायः ॥ ।

अत्र पुत्रस्य लाभाय दम्पत्योरभितृद्धवे ॥ ७ ॥ पक्कमेऽद्धि चतुर्थे वा ग्रहभद्दपुरःसरः । तस्मित्रहनि कचन्यमृतुहोमं विधानतः ॥ = ॥ भ्राचार्थं वर्**वे**त्पातर्भ्वनेस्वसितुष्ट्ये । होमार्थे च जपार्थ च वस्येष्टत्विजो बहुन् ॥ ६ ॥ 'यजमाना द्विजै: सार्ज्य शान्तिहामं समाघरेत्'। पृहादीशानदिग्भागे देवतापूजनाय च ॥१०॥ द्रोखपगाणथान्येन द्रीहिराशित्रयं भवेत्। कुम्भन्नयं न्यसेद्राशौ तन्तुवस्तादि-वेष्टितम् ॥११॥ पृरवेत्तीर्थसित्तितैः प्रतिद्धम्भं पृथक् पृथक्। सुक्तीनाथ नवर्चेन प्रसूच आप इत्यथ ॥१२॥ ऋचायाः प्रवतस्तद्वदुगासञ्या च ततः क्रमात् । पच्यकुम्मे सिपेद्धान्यमीषधानि च हेम च ॥१३॥ सत्रव्य पश्चरत्नानि गन्धपुष्पाचरायुरान् । श्रीषधानि च वस्थन्ते मुनिभिः शान्तिकारणात् ॥१४॥ औदुम्बरं क्रुशा दुर्वो राजीवं चम्पविच्यकाः। विष्णुकान्ताऽथ द्वलसी वर्हिषं शङ्कपुष्टिपका ।(१४॥ शतावर्षस्वगन्था च निगुरुडी सर्पपद्वम् । श्चवाषार्गः पत्नाशञ्च पत्रसो जीवनस्तथा ॥१६॥ प्रिय**क्रवञ्च** कोष्ट्रमा क्रीहयोऽश्वत्य एव च ६ चीराष्गद्धिसर्पिश्च पर्छ चैव स्थोत्पताम् ॥१७॥ कुर्एटकथ गुञ्जा च वचा ग्रुस्तकभद्रका इति । द्माञ्जिशदौषधानीह गायण्या सर्वमाहरेत् ॥१८ः॥ गजाश्वरथ्यायस्मीकसङ्गमाद्धदगोञ्जलात् 💎 👌 राजद्वारपदेशाच मृदमानीय नित्तिपेत् ॥१६॥

क्रम्भस्थायनमित्याह तत्तम्भन्त्रेख कारयेत्। मृत्तिका औपघादीनि मन्त्रेख मन्त्रिपेत् क्रमात् ॥२०॥ कुम्भोपरि न्यसेत्पात्रं कास्यं वा ताम्रपेव वा । मृत्मयं वेग्रुशत्रं वा स्तस्वविशाज्ञुसारतः ॥२१॥ पाभोपरि न्यसेद्रझं प्रतिमां भ्रुवनेश्वरीम्। तन्मूलं वा न्यसेत्याचे इन्द्राणी च पुरन्दरम् ॥२२॥ ष्ट्राचार्यः पूजयेदेवीमङ्गाद्यावरणानि श्रन्यो वा पूजनं कुर्याद् गायत्र्या मन्त्रसास्या ॥२३॥ पुजयेदेवीमिन्द्राखीमासु नारिष्ठी क्रमेख पूजयेदिन्द्रं इन्द्रं त्वा द्वपभं वयस् ॥२४॥ विधिना चाय पूजयेद्देवतात्रयम् । आवाहनादिसकलैश्वचारैः पृथ**रु** पृथक् ॥२४॥ तन्मध्यमं स्पृशन् कुम्भं मन्त्रेण सुननेरवरीम्। **ज**पेदाचार्य ब्राहोपाच्छ्रोसक्तं च जपेत्रतः ॥२६॥ स्पृशन्वे दिन्तर्यं कुम्भमृत्विगेको जपेद्थ । पत्नारि खस्तानि चतुर्भन्त्रोचराणि च ॥२७॥ संस्पृशन्तुत्तरं क्रम्भं श्रीस्कं स्ट्रसंख्यया। शक इन्द्रापनीसूक्तं तत्र चैवं स्पृशन् जपेत् ॥२८॥ कुम्भस्य पश्चिमे देशे शान्तिहोर्यं समाचरेत् । अन्याधानं ततः कुर्याद्योगतन्त्रं समाचरेत् ॥२६॥ पूर्णेपात्रनिधानान्तं कृत्वा कार्यं द्विजीः सह। द्वीभिस्तिलगोधूमैः पायसेन घृतेन च ॥३०॥ पायसं अपयेशकं साविकं च इविश्व सत् । कुरबाऽऽष्ट्यभागवर्यन्तं इविरुद्वासनादिकम् ॥३१॥ तिस्रभिञ्जैष दृर्वीभिरेक्षैकावाहुतिर्भवेद् । आभिमन्त्रमशुक्ताभिर्गापत्री जुहुयात् क्रमात् ॥३२॥

ब्बद्वोत्तरसङ्सं तु शतमङ्घोत्तरं तु वा । तिलामिश्रेष मोधूमेर्द्रव्येणाऽज्याङ्कतीहुनेत् ॥११॥ जुहुयात्पायसेनैव आज्येन च हुनेरक्रमात् । इविश्रत्षष्ट्रयेनैव मत्येकं शासनंख्यमा ॥३४॥ गायञ्चेत तु हेरतन्यं इविश्त्र चतुष्ट्यम् । ततः स्विष्टकृतं हुत्वा रज्जुम्बरणं तथा ॥३४॥ अयारचेत्यादिभिहुत्वा समुद्राद्धिस्कृतः । सन्ततामाज्यधारां तां पूर्णाहुति स्थावचेत् ॥३६॥ परिषेचनपर्यन्तं है।मशोषं संगापमेत् । सहीपधिस्थितीस्तञ प्रतिक्रुम्भस्मित्रोदकैः ॥३७॥ ऋतुपत्याः खियाः शान्ति दम्पतीभ्य । सुखाव च । सथाऽभिषेकमन्त्रस्य शोध्यन्ते शौजकादिभिः ॥३८॥ भ्रापोदिष्ठेति नवभिः सुक्तते च वतः परम्। इन्द्रो अनुस्त्रेनैव पावमानीः इत्रेष हु ॥३६॥ जभयं शृण्यस नः एउस्ति दामिकश एकवा। वैयम्बकेन मन्त्रेख जात्तवेदस एकपा ॥४०॥ समुद्रुष्पेष्ठा इत्यादि चतुर्गिश्च पसिद्धकैः। बायन्तामिति गन्त्रीक त्रिभिशापि प्रथाक्षण्यम् ॥४१॥ रुमा व्यापस्त्रचेनीय देवस्य स्वेति पन्त्रतः । मन्त्रेगाऽय तमीशार्व त्यमन्त्रे ६३ इत्यय ॥४२॥ तशुष्दुदीति मन्त्रेश श्वनस्य पितुस्तथा । वा ते रुद्रेति मन्त्रेण शिवसङ्करणमन्त्रतः ॥४३॥ इन्द्र त्वा ब्रषमं वयं सन्देशचीवापियेवयेत् । सा च वस्नान्तरं पृत्वा शुनरचैवेष्पवासिनी ॥४४॥ उपदासोऽव समोपायस्यानम् । विमानभ्यवर्षे विधिवद्गन्धगुष्यातनादिभिः ।

धेतुं पयस्विनी दद्यादाचार्याय च भूषणीः ।।४४ ॥
सदिस्णमनद्वाहं भदद्यादुष्ट्रजापिने ।
श्रुत्तिनभ्यश्राय सर्वेभयो द्याद्वे दक्षिणां तत्।।४६ ॥
सहाशान्ति मयच्छा-४४ विश्वाशीर्वचनं सतः ।
ब्राह्मणन् भोजयेच्चैय गुज्जीयात्स्वजनैः सद् ॥४७ ॥
स्मृतौ-ब्राह्मणान्भोजयित्वा तु देवद्वं योजयेच्यतः ।
एवं यः कुरुते शान्ति शौनकोक्तमकारतः ॥४८॥
तदनिष्टं तु सकलं सर्वं चाऽपि दिनस्यति ॥ इति ।
इति शौनकोक्तरजोदर्शनदोषशान्तिः ।

अथ प्रयोगः -- कर्ता देशकाली स्मृत्वा सम परन्याः अध्य-रजोदर्शनेऽमुकदुष्टमासादिसूचिनारिष्टनिंरसनार्थे शासि इति सङ्कल्य । गरीशपूजन-म्बस्तियाचन-मातृकापूजनाव्युर विका--बार्यर्त्विग्बरगानि कुर्यात्। अयाऽऽचार्थो गृहेगान्यो प्रत्येकं जना---कृत्या पदार्थानुसमयेन कुम्भत्रयं स्थापयेत् । नदाथा । 🎏 ऋंगि घो।रति मध्ये तहिंक्षोत्तरस्य स्पृष्ट्वा । ॐ स्रोषध्य इति स्पर्खेकाराक्ष तेषु स्थानेषु द्रोणप्रमाणान् बीहीन् राशोइत्य तेनैव अमेण् शा क्रीविम श्राक्तंत्रशेषिति कुम्भत्रयं स्रोस्थाप्य मध्ये प्रसुव सार इति नीर्शिक्त तद्दित्यो या प्रक्त रृथुचा ततुसरे गायव्या कलं क्तियका । जिल्लिक गन्धर्तासमिति गन्धम् । या स्रोक्ष्मीरिति सर्वोदधीः। समिति यवान्दिप्तया । मध्यम एव थव-त्रीहि-तिल्माप-व्यक्तु-ः श्यामाक-मुद्रान् विरवोद्यस्य कुश-दूर्श-रकोत्पॅक-पश्चवित्य क्रियु कान्ता-तुलसी-वर्षिप-शञ्चपुण्यो शतावर्यभ्यगन्या -निर्मुष्डो १ स्ट्यपेत 🥆 सर्वेषा ऽपामार्ग-पस्नाश-पनर्स-और्श्वक मियङ्गु-गोधूम-श्रीद्यश्यक्षिणः हुन्ध-वृत-पञ्च पत्र-नीक्षारपस-स्तित र र्क्षपीत-कु रेंटके-गुआ-बच्चा-भाइन्सु 🎨 स्तकास्यानि क्षेत्रिशदीयमानि चथासम्मयं वा गायव्या चिन्तः।

[्]र'ओ।जिस्से कंडर्ं॰। ६ हैं॰ वहंगास्योत्तं॰। 'इ स्वर्ग गण्यार्थं॰ । 'के क्स-'--क्रमकः, 'प काले फूकवाके। ६ क्ष्यहरं। '॰ छा इक्ष्मकं । ६ विश्व व्यक्षाः ६ तोशहरा की भिष्यों या गिया बॉस वीसे फूकवाके।

विषु दूर्वा-पश्चपन्नव-सप्तमृत्तिका-फस-पश्चरल-सुववांति शिपवा । युवा सुवासा इति वाससा स्त्रेय वा सुरमकण्डान् वेद्रवित्वा ग-भारिमिरह्युंकत्व पूर्वाद्यांति यकाविपूर्यपात्राचि निधाय तेषुः साहदसं श्वेतं बसावयं श्वस्य मध्यमे गायड्यर विश्वामित्रो मुखनेश्वरी गावत्री भुवनेश्वयांवाहने विनियागः। ॐ । तःसनितुरिति भुवने-श्वरीम् । तद्दश्चिणुकुम्मे द्रश्याश्ची बृषाकपिरिन्द्रात्वी पांच्यः दृन्द्रादयाः बाहने विनियोगः। "श्रद्धाचीमास्त्रितीन्द्राचीम् । उत्तरकुरमे इन्द्र त्वा विश्वासित्र इन्द्री गायची इन्द्रावादने विनिधीगः । इन्द्र त्वेतीन्द्रं प्रतिप्रास्तु स्थाप्य चोडग्राभिः एश्राभयांपचारैरभ्यच्यं क्रथ्य-में इसहस्रमष्टरातं वा गायत्री भी सकं च अपेत् । तत एकस्विक् रिचिणकुम्मे "बद्रस्कानि अपत्। तानि च बदुहायेत्येकादश्यम्। इमा बद्राय तब स इत्येकादशर्थम् । इमा बद्राय स्थिरभन्वन इति पञ्चर्यम् । का ते चितरिति पश्चरशर्यम् । तमुन्द्रहीत्येका । भूवमस्य वितरिश्येका । व्यान्यधर्तिगुत्तरकुम्ये "वकादशावृत्तिमी कर्द्र शम्म १६म्द्रासीति पश्चवश्चमं अपेत्। चथाऽऽवार्यः कुम्मपश्चिमेऽस्रि मणीय सदोशास्यां प्रदृश्यापनादियुक्तानतं कृत्या तदोशास्यामेकं कृत्यां संस्थापा तथ वयवाबाहमानिपूत्रान्तं इत्वाऽभ्यात्। तथाःस्मि-भन्याहितेऽप्रश्वित्यादि चत्तुची आज्येनेत्यन्तमुक्त्वा भुवनेन्वरोमिन्द्रा-क्रीमिन्द्रं क मत्येकमभुकसंक्यया हुर्वा तिल्लीमध्रगोधूमपायसार्व्यमहा साध्यक्त अपना समित्रकांज्यैः शेषेत् स्विप्रकृतमित्यादि यक्त इत्य-न्तमुक्त्वा परिश्तरबाधावयमायान्तं कृत्वा यजमानेगाऽक्षमधानवेषता विद्रवेताभ्य इदं न महेत्युके ऋत्विमिश सहाम्बामानोकक्रमेश सुदू-यात्। अन्ये तु नायञ्येव तु होतव्यं हविरत्र चतुष्ट्यम् । ततः रिवहकृतं दुखेखबेग्द्राबीख्ययोद्दीमानमिधानाच तयोद्दीमोऽन्याद्याने चावीर्चा निकारवाहुः । तथा विवश्वक्रवाचि-वसिवानाग्तं कृतवा समुद्रावृमिदिशि क्षेत्र पृश्वंदुति दुःशा प्रकानविमीचं इत्या चुत्विभिन्नः सद्द समार्थे यज्ञमानं कुरमोवकरमिन्त्रोत् । तत्र मन्त्राः । ग्रापो हि हेति १ श्रामा व पक इक्रियं यत इति मिनिष्टुं देवेति ॥॥ श्रापा-उमर्थ म्युज्यक्षेत्रेति स्वस्ति बाविया यमिति। स्वश्वकर्मिति। जातवेद्व इति।

३ जानैशीमके । ६ अपित्यै राश्मा» । ६ प्रातारसिङ्क । ॥ नमस्ये १ म जेका । या नमस्ये ६६ सम्बार । ५ क्वेंबावृत्तियी । ६ सूर्य याण्या ।

समुद्र ज्येष्ठा इति ॥४॥ अनुषः । त्रायश्तामिति ३५२वः । इसर साप इति ३५१षः । देवस्य १वेति ३ सन्त्रैः । तसीशानं जगतः । स्वमन्ते रुद्र इत्येकं यज्ञः। तमुद्धद्दीति भुवनस्य पितरम् । या ते व्हेति। वजावत इति ६॥ यते याज्ञवाः । इन्द्र त्वा पृष्यं वयमिति ४७६ चः। सुरास्तामभिषिञ्चन्त्रित्यत्याचाः ६पौराखाः । प्रथमभिषिकः सुस्तातो भूतग्रक्षवासाः सपत्नीको यजनानोऽन्निमाचार्यादीस SSचार्याय घेनु अहारो मृत्विन्य्यम यथाशकिव्हिणां ठद्र आपिने सक्तिशाममञ्जाहं भूयसी च दत्वा प्रह्मीठदेवतानां भुक्तेश्वर्यादीनां चोचरपूजां कृत्वा । यान्तु चेवगणा इति विस्त्याऽऽवार्याय प्रतिपाच गम्ब गन्बेत्यमि विसर्जयेत् । ततो माहाखाः शान्ति परेयुः । तत्र स-न्याः। सानो भद्रा इति १० ऋथः। स्वस्ति भौमिमीतामिति १४ ऋथः । त्यमृष्टिकति ३ ऋषः । तपछं योरिति च । ततो यजमानो हादरामाह्य कार् भोजयित्वा सङ्खस्य वा विमाशिषोग्रहीत्वा सङ्ख्युवी मुखीत ॥ प्रथ चन्द्राकोपरागकालीनाधरकादर्शने विशेषः ! कर्चीककाले मासपद्माच्यालस्य मम पत्न्याक्षन्तस्य सूर्यस्य वा उपरागे प्रथमरकोः व्यानस्चितानिष्टनिरासार्थे शानित करिय्ये । दति सङ्ख्य मान्दत् म्बत्यिकपृत्रान्तं कुर्यात् । अधाचार्था गोमयोपसिते देशै पञ्चवर्षेट-इरलं इत्या तव श्वेतवसामुदग्दशं प्रसार्थ्य तत्र चन्द्रापरामे बाप्या-वस्त्रेति राजत्यां प्रतिमायां चन्द्रं सूर्योपरागे तु आरुम्ग्रोनेति स्रीवण्यां भा सूर्ये प्रतिमायामाबाह्य ततुत्तरतः स्वर्मानो इति सैस्यां प्रतिमायां राहुमाबाश्च यस्मिन् नक्षत्रे अद्दर्ण तक्षक्षत्रदेवतायां सौवर्णप्रतिमायां हत्तुस्थलोः प्रसदादिनमोन्तैर्नाममन्त्रेर्नाऽऽवाह्य काण्डानुसमयेन शोडशोपचारैः पूजयेत् । तत्र चन्द्राय नचुत्रदेवताभ्यका श्वेतानि गन्याचीनि । सूर्याय रकानि । राहवे कृष्णानि । ततः पश्चिमतोऽसि प्रतिष्ठाप्य वर्षे प्रद्वाबाहनादि-पूजान्तं क्रत्वाऽम्बादध्यात्। तत्र बचुपी काज्येनेत्यन्तमुक्त्वा बन्द्रं सूर्यं था राहुं नक्तववेश्तां पन्ने प्रहांश्चामु-कसंस्थया समिवाज्यचकातलाहुतिभिः शेवेग्रेत्याविसमित्सु विशेषः। चन्द्रचंद्रेयतयोः पाक्षासः, सूर्यस्याकः, राष्ट्रोर्तुर्या, ताम तिका पकाasgla:। सधाज्यभागाम्तं कृत्या यज्ञशानेन प्रच्ये त्यकेऽन्याधानकनेषः स्विन्धः सह हत्या स्वयक्षराविषुणांषुत्यन्तं प्रान्वत्कःवैकस्मिन्कुन्ने इतःप्रदेशमध्य-राजन्तकः,प्रवच-सर्वोवधी-क्षरकरूर्वा-कुशास् निक्वित्य

सर्तिक् इम्पती पूर्वदिशिषिश्चेत्। तत्र शन्भाः। आपो हिष्ठेति ३ ऋषः। इमं मे गङ्गेत्येका। तत्त्वायामीत्येका। अग्येऽपि समुद्रुज्येष्ठा सुरास्त्वामित्याद्यक्ष शेषं पूर्ववत्। इति दुष्टरजीदशेनशान्तिः भयोगः।

श्रथ गोसुसप्रसवविधिः।

गर्गः-पितरिष्टे स्रुतारिष्टे मात्ररिष्टे तथैव च। प्राथित्रं तदा कुर्यात्तस्य देवस्य शान्तये॥

तादशनक्षत्रोत्पत्था सूचिते पित्राद्यविष्टे प्राथक्षित्तप्रित्यश्रापि तत्त्रदित्यम्बेति देहसीदीपवत्। तत्तदोषशान्त्यै तत्तरथायक्षित्तं द्वर्योदित्यर्थः।

पूषान्विनोर्गुरी सर्पमघाचित्रेन्द्रमृत्यमे प्यु ऋतेषु जातस्य कुर्याह्गोजननं सथा ॥ १ ॥ जन्मर्चे वा त्रिजन्मर्चे शुभवारे शुभे दिने। कुत्नाऽभ्यक्वादिकं सर्वे गृहालक्कारपूर्वकम् ॥ २ ॥ गोमयेने।पलिप्याध्य गृहस्येशानभागके पक्कुर्ज कर्णिकायुक्तं रजोभिः श्वेतवर्णकैः॥ ३ ॥ मोर्गीस्तत्र विनिक्तिष्य यथाविशानुसारतः । नवसूर्यं हु सम्मध्ये रक्तवस्तं मसारयेत् ॥ ४॥ स्थापयित्वा शिशुं तत्र प्रुनः सूत्रेख वेष्ट्येत्। मार्क्षस्य त्मवाक्षादं विवागर्भ गतं शिशुम् ।। ५ ।। मोप्रुलं दर्शियस्वाञ्य पुनर्जातं ह गेप्रुखात्। विष्णुर्योनिभिति सुक्तेन गव्येन स्नएयेच्छिशुस् ॥ ६ ॥ गवामक्रीत मन्त्रेख गवामक्रेषु संस्पृशीत् । विष्णाः श्रेष्टेन मन्त्रेण गामसूर्तं ह बालकम् ॥ ७ ॥ आचार्यस्तु समादाय पथान्यात्रे द्वेत्तया । माता अधन्यभागस्या शिद्यपानीय ते हुखात् ।। द ॥

ततः पित्रे तदा दद्यासतो मात्रे बदापयेत् । वस्रे स्थाप्य विताऽस्थाऽथ ग्रुत्रस्य ग्रुखमीचवेत् ॥ ६ ॥ गे।म्त्रं गेामयं चीरं दिध सर्विश्व संयुतम् । थापो हिष्ठादिभिर्मन्त्रैरभिष्कचेत्रतः शिशुम् ॥१०॥ मूर्धिन चाघ्राय तत्शुत्रं तस्यन्त्रेण तदा पिता। ध्येङ्गादङ्गात्सम्भवसि इदयादभि जायसे ॥११॥ मात्मा वै पुत्रनामाऽसि सङ्गीव शरदः शतस्। मुद्दिन त्रिरवद्याय तं शिशुं स्थापयेश्वतः ॥१२॥ पुण्याई वाचयेत्पश्चाद्बाह्यासाँ चेंद्रपारगैः दरिद्रायाध्य विवाय तां नामभ्यच्यं दाव्येत् ॥१३॥ गो-वस्त्र-स्वर्ण-धान्यादि दद्यादकीदितः क्रमात् । यथाशक्ति धर्न द्याद्वासरोभ्यस्तदः पिता ॥१८॥ ववेर हेरमं मकुर्वीत स्वस्वशाखेरक्तमार्गतः वन्छेखनादिकं कृत्वा चाज्यभागान्तमाचरेत् ॥१४॥ होमस्यैशानदिन्भागे घान्योपरि शुर्भ घटम् । पश्चगव्यं घटे स्थाप्य तिसाँस्तत्र विनिन्निपेत् ॥१६॥ चीरिडुमकषायांय पश्चरत्नानि निक्षिपेत् । बस्रवुग्मेन संबद्धाद्य गन्धादिभिस्थार्चयेत् ॥१७॥ षिष्णुं वस्रणमञ्चर्य शतिमां च विधानतः । प्रतिमां यक्ष्मइष्णः भागे तद्देवत्यहोमविधानात् ।।१८।। चकाराच-यह इन्द्रादिभिर्मन्त्रैः इत्भं स्पृष्ट्वाडिभगन्त्रयेत् । द्धि-मध्वाष्ट्रवयुक्तेन् होमं कुर्याहिषानतः ॥१२॥ आणा हि होति विस्तिभ्रष्टु में सीम इत्यकः। विद्विष्णीः पुरमं पदमन्तिभ्या तेश्य सुन्तत्। [२०]

श्विगराभिः मत्यृषं बाञ्चाविद्यतिसंख्यया । भशक्तश्राष्ट्रसंख्यं वा द्वि-मध्याज्यसंयुत्तव् ॥२१॥ भादित्यादिप्रहाणां व होनं क्वयीत्समन्त्रकम् । हति गोष्ट्रस्त्यसनविभिः ।

श्रव प्रदेशमः-मासपद्माय्वितक्यास्य विद्योरमुकद्यारिवचित्रवृचिताsरिष्ठशास्त्रको गोस्काप्रसर्वं करिन्ये । इत्युक्त्वा गर्शेशपू क्रनांचार्यवरस् कुर्यात् । अधापार्यः स्वेताष्ट्रक्तं मोहिस्यग्र्ये रकवतां विम्यस्य तिला-न्त्रिकीयं तत्र माक्मुकं शिशुं संस्थाप्य स्वेणाऽऽवेष्ट्य गोमुकात् प्रश्नवं विकित्त्व विष्णुयोनिमिति श्केन पश्चगध्येन शिश्चं संस्ताच्य गबामहेरियति गां सम्बूष् विष्योः अष्ठेनेति शिशुं गुद्दीत्वा मात्रे वधात्। माता पित्रे बचात् । पिता च मात्रे दत्या ध्रम्मुखं समीदय पञ्चगव्ये-नाऽप्यो हि छेति तिल्भिरभिषिण्याक्राविति सूर्वित विरवद्याण मात्रे इत्या पुरवाई वाचित्वा गामानायांव बेरवा ब्रह्मीत्वर्थ गोवस-स्वर्ष-प्रान्याचि दस्या भूवसी दद्यात्। प्रयाऽऽचार्योऽप्रि प्रतिष्ठाप्य बश्चर्या क्राज्येनेत्वन्ते अप आरो हि हेति त्येन अप्तु म स्थ्या च विरुष्ट्र' तहिस्कोरित्यूचा यसम्ब्र्यमश्रीम्यामिति स्केन महास अस्येक्सप्रादिसंस्थया वैधिमध्यक्तिः शेपेव स्वित्रहतमित्याध्यत्ता-<u>ऽऽज्यकामान्तं इत्याऽभेरीशान्यां क्रम्मं संस्थाप्य तत्र पञ्चमध्य-तिल्रः</u> होहि-होर-हुम-क्यायान् जिप्दश वस्त्रयुप्तेगाऽऽवेष्टथ पूर्ववार्च म्यस्य पूर्ववात्रोपिट तक्किकोरिति विक्लास्तक्त्रायामीति वदवस्याचीभ्या-मिति यवमञ्ज्ञाक्षे प्रतिमा सभ्यक्यं इन्द्रेति पद्या अध्याऽन्याधा-नक्रमेख दुरवा कर्मशेष समाप्येषिति गोनुसाप्रसंबमधीगः।

श्रय संदन्तोत्त्वतिशान्तिः।

विष्णुवर्थोशरे-

रपरि मधर्म थस्य जायन्ते च शिशोद्विजाः। इन्तेर्बासह यस्य स्याङ्गन्य भागेरसध्य ।। १॥ विजाः= दण्ताः।

मातरं पितरं बाड्य स्नादेदात्मानमेत्र दा । तत्र शान्ति प्रवर्धयामि तां मे निगद्तः शृत्यु ॥ २ ॥ गजपृष्ठगतं वालं नौस्थं वा स्नापयेद्द्विज ! कद्रावे च सर्वेश ! काळाने च परासने ॥ ३ ॥ सर्वीषयैः सर्ववीजैः सर्वपुष्पैः फलेस्तथा। पद्मगब्येन रत्नैश्र मृतिकाभिश्र भागव्!॥४॥ सर्वोषधानि सर्वगन्धाश्च विनायकस्नपनविधौ दर्शिताः। स्थालीपाकेन धातारं पूजयेत्तदनन्तरम्। सप्ताहं चात्र करेंच्यं तते। ब्राह्मणभाजनम् ॥ ॥ ॥ अष्टमेऽहनि विभार्खा तथा देवा च दक्षिणा। काश्चनं रजतं गाथ भुत्रमागारमेव तु ॥ ६ ॥ दन्तजन्मनि सामान्ये शृशु स्नानमतः परम्। भद्रासने निवेश्यैनं मृत्रुधिन मृत्रीः फलीस्तया ॥ ७ ॥ सर्वोषधेः सनगन्धेः सर्वबीजैस्तयैन स्नापयेत्पूजयेचाऽत्र वर्कि सोमं समीरणम्।। =।। पर्वतांश्व तथा रूपातान् देवदेवं च केशवस्। एतेषामेव जुहुयाद्द्युवपग्री यथाविधि ॥ ६ ॥ जासणानान्तु दावन्या थथाशलया दु दिन्नणा । ततस्त्वलङ्कतं बालपासने चेापवेशयेत् ॥१०॥ ष्प्रासीनं सूर्यसन्तानवीजैः ग्रुस्नापयेचतः। सुविमधालकानां च तैथ कार्यं च पूजनस् ॥११॥ पुष्टवश्च निभिनाऽऽचार्यो त्राह्मणाः सुहदस्तया ।

इति सदन्तोस्पत्तिशान्तिः ।

अब कृष्ण्चतुर्दशीजननशान्तिः।

गरी:-कृष्यापसे चतुर्दश्या प्रसुतेः पद्विधं फलम् 🎼 'चतुर्देशीं च पर्यामां क्रमीदार्थ शुभं स्मृतम् ॥ १ ॥ द्वितीये पितरं इन्ति तृतीये मातरं स्मृतम्। चतुर्थे बातुलां इन्ति पश्चमे वंशनश्सनम् ो २ ॥ षष्ठे तु घनहानिः स्यादात्मनो वंशनाशनम् । तस्मात्सर्वेषयञ्जेन शास्ति छुर्योद्दिधानसः ॥३॥ **ञ्चाचार्ये वरवेद्धीमान् पुत्रदारसमन्वितम्** । स्वकर्मनिरतं शान्तं श्रोत्रियं वेदपारगम् ॥ ४ ॥ सर्वाजङ्कारसंयुक्तं सर्वजनणसंयुवम् व्यमे च समासीन वरदाभयपास्तिनम् । प्रा शुद्धस्फटिकसङ्काशं स्वेतमान्याम्बरान्वितम् । ज्यम्बद्धेन च मन्त्रेण पूर्जा कुर्योद्दिधानतः ॥ ६॥ स्थापयेचतुरः कुम्भाश्रतुर्देचु यथाऋमम् पुरावतीर्थं जलोपेतान् धान्यस्योपरि विन्यसेत् ॥ ७ ॥ तन्मध्ये स्थापयेत्कुम्भं शतस्तिद्रसमन्वितम् पश्चमृत्पश्चरवानि पश्च त्वक् पञ्च पन्तवान्।। 🖙।। क्षाधान्यं सुवर्णी च तत्तरमन्त्रैविनिचिपेत् । -सर्वोषधानि निचित्व रवेतवस्रोण वेष्ट्रयेत् ॥ ६॥ श्चरभीषि च पुष्पाषि श्वेतानि परिवेष्टयेत्। सर्वे समुद्राः सरिवस्तीर्यानि जलदा नदाः ॥१०॥ यत्रमानस्य दुरितत्त्रयकारकाः। आवाश वाक्योमेन्बेरनेन च विधानतः ॥११॥ इमम्बे दरुऐस्यनयाः सच्वायापि ऋचा तथा । त्वको अग्र इत्यनया सत्वक इति मन्त्रतः ॥१२। क्याग्नेयकुम्भमारभ्य पूजां कुर्याद्यशक्रमम् ।

आनी भद्रारूपसूक्ती च भद्रा अग्नेश स्कतः ॥१३॥ जप्त्यातुपौरुषं सूक्तं कहु-द्रंतु क्रमाज्जपेत्। ईचरस्याऽभिषेकं च ब्रहपूत्रां च कारयेत् ॥१४॥ पूजाकमें हु निवेत्य होगे कुर्याद्विधानतः । गृहादीशानदिस्मागे कुएडं कार्ये विधानतः ॥१४॥ विस्तारायामचातं च अरब्रिद्वयसम्मितम् । समिदाज्य-चरुश्रेव तिल-गावांश्च सर्पेपैः ॥१६॥ श्रन्तरय सन्त-पालाश-समिद्रिः सादिरैः शुभैः। अष्टोचरसइस्रं वा अष्टोचरशतं तुवा ॥१७॥ अष्टार्विशतिमेतैय होमं कुर्यात्पृथक् पृथक् । **बैयम्बकेत मन्त्रे**स विज्ञान् व्याहृतिभिः क्रपात् ॥१८॥ कृत्वा होमाश्च कर्त्तव्या श्रहमदुक्तविधानतः (एवं क्रमेण कर्त्तव्यं शमशेषं समापयेत् ॥१६॥ सर्वीलङ्कारयुक्तानां वयाणामभिषेवनम् । चक्षुभिः कलशैरद्रिष्ट्रंस्कुम्भसमन्वितम् ॥२०॥ त्रयाणाम् = माता-पित्र-शिश्रमाम् । घौताम्बराखि धृत्वाऽय क्वर्यादाज्याऽवलोकनम्'। पूर्णाहुति च जुहुयाद्यजमानः समाहितः ॥२१॥ तस्सूर्वे परमा भक्त्या ईश्वराय निवेदयेत् । सर्वीलङ्कारसंयुक्तां सबत्सां गा वयस्वनीम् ॥२२॥ मतिमां वस्त्रयुग्मं च श्राचार्याय निवेदयेव् ॥ अन्येषां चैव सर्वेषां कुर्यादुज्ञास्मणवाचनम् ॥२३॥ तस्मादेतेन विधिना विचशाळ्यविवर्जितः एवं यः कुरुते शान्ति सर्वपापैः अमुख्यते ॥२८॥ :सर्वान्कामानवामोति स्थिरजीवी झुली मवेतु । ्राति ऋष्णचतुर्दशौशान्तिः ।

श्रथ सिनीवालीकुहूशान्तिः।

गार्ग्यः-सिनीनाम्यां वस्रुता स्थाद्यस्य भार्या पशुस्तया । गजाऽस्वा महिषी चैव शकस्यापि श्रियं हरेत् ॥ १ ॥ ये सन्दि सक्लाः पश्चासत्प्रसादोपजीनिनः। वर्ज्जयेचानशेषस्ति पशु-पश्चि-मृगादिकान् ॥ २ ॥ **क्रहु**शस्त्रीत्रत्यर्थे सर्वदेशपकरी स्मृता । मस्तिरेतेषां तस्यायुर्धननाशनस् ॥ ३॥ सर्वेगएडसमस्तत्र देाषस्तु भवळा भवेत्। तत्र शान्तिविशेषेण परित्यामी विधीयते॥ ४॥ परित्यागातत्र शान्ति कुर्यादीमात्र विचच्नणः। 🗥 परित्यागाविति स्थप्लोपे पश्चमी। परित्यागं कृत्वेत्यर्थः। तत्वराद्धेन पुनरेवाऽनुलेपनम् ॥ प्र'॥ न त्यजेरपण्डितो मोहादर्यादकानते।ऽपि धा । तद्योगं नाशयेत्किञ्चित्स्वयं वा नाशमश्तुते ॥ ६ ॥ कम्योक्तशान्तिः कर्त्तव्या शीर्घ देश्यापनुत्तवे । कद्रः शक्रव पितरः पूक्षाः स्युर्देवताः क्रमात् ॥ ७ ॥ कर्षमात्रसुवर्णेन तदद्धिंदंन वा श्रयवा शंक्तितः कुर्याद्विकशाट्यविवर्शितः 🕸 🖘 🛚 कारयेण्डम्भाश्वर्श्वजसमन्त्रिवाम् । त्रिशुललङ्गवरदाभयदस्तां यथाक्रमम् ॥ ६॥ रवेतपुच्याम्यर्थरां रवेताम्बरह्यस्थिताम् । त्रियम्बक्षेत्र मन्त्रेण पूजां द्वर्याद्ययाविधि ॥१०॥ वजाङ्कराचायः स-सायकः। **इन्द्रबह**र्श्वना रक्तवर्णी गुजारुदेर यत इन्द्रेवि मन्त्रतः ॥११॥ .

पितरः कृष्णवर्णाश्च चतुर्हेस्ता विमानगाः। गदाऽत्तसूत्र-कमगढण्यभयस्यैव घारियाः ॥१२॥ ये सत्या इति मन्त्रेश पूजां कुर्यादनन्तरम् । आग्नेची दिशमारभ्य क्रम्भान् कोरोषु विन्यसेत् ॥१३॥ वे सत्यासो इविरद इत्याविमन्त्र ऋग्वेवे प्रसिद्धः । सन्मध्ये स्थापयेत्क्वमभं शतच्छद्रसमन्वितम्। निच्चिपेत्पञ्चगव्यादीस्तत्तन्यन्त्रैव निचिषेत् ॥१४॥ क्रन्योक्तशान्तिः कर्वव्या क्रुर्योद्धीर्घः स्वशक्तितः । गोदानं बद्धदानं च सुवर्खं वीर्वरां श्रुभास् ॥१४॥ दृशद्दानानि चेक्तानि द्वीरमार्ज्यं गुर्दं तथा। बाक्यावेदाणपात्रास्य तत्तन्मन्त्रेश कारवेत् ॥१६॥ सविद्युष्टं च होमं च तिल्होमं च छर्पेरैः व्यरवत्य-प्तच-पाखाशसमित्रिः खादिरैः शुभैः ॥१७॥ भ्रष्टोत्तरशर्त सुख्यं भत्येकं जुहुवाहद्विज्ञैः । , त्रैयम्बकेन भन्त्रेस तिलान् ज्याह्तिभः शुनः ॥१८॥ चतुर्भिः कतशैर्युक्तं बृहत्कुम्भस्मन्थितम् । शान्तिवत् सक्तं कार्यमभिषेकं च कार्यत् ॥१६॥ शास्तिवद् = पूर्वोक्तशान्तिवत् । सामा-पित-शिश्चनां च मिथिषश्चेतु चारुणैः। शर्रस्याऽभिषेकं च क्योंइआहाणभोजनम् ॥२०॥ ्र अन्वेषां चैव सर्वेषां ब्राह्मणानां च वर्षणस् द्विजवाचनपूर्वकम् यथाशक्तवज्ञुसारेख **काय प्रयोगः—तत्र चतुर्दश्याः वदंशेनु दिलीय-द्रतीय-पष्ठांशैनु** क्षमा चेहुगों सुमाससे ऽपि कार्याः। कर्ता मासपदार्ग् विल्ल्याऽस्य शियोश्रमुद्देश्याधमागाविषु सिनीवान्यां कुक्षां वोत्यस्या स्वितस्या-अस्तिक्षा निरातार्थे यास्ति करिष्य दक्षि सामूक्ष्य सामेग्रपृता-स्य- स्तिवाचनमात्पृजा-वृद्धिश्राद्धाऽऽचार्यादिवरकानि कुर्यात् । तत चा-बार्यः सर्वपविकिरणादि कृत्या पीठादी वरदाशयहस्तां वृषस्यां हैसीं बद्दप्रतिमा अ्थन्यक्रमम्बेच सम्युज्य ज्ञपेत्। सिनीवासोकुक्रोस्तु स्त्रेन्द्र-पितरः। तत्र बह्य ईशानोष्ट्यंकरकमात् । विश्वसम्बद्धवरदाभयद्दस्ता भूपस्यः श्यम्बक्यन्त्रेस् । इन्द्रो वजांकुराधतुःगरकरो रको गजस्थो यत । इन्द्रेति मन्त्रेण चित्ररः छण्डवर्णा गशाउन्त सूत्र कमण्डश्वमय-करा विशामस्था वे "सत्या इति सन्त्रेम पूज्या इति विशेषः। तत-हतत्वाच्यामीशान्यांमुद्दोच्यां बाऽऽन्नेयाचित्रु चतुरः कुम्मान् मध्ये च शर्ताहर्द संस्थाप्य तेषु पञ्चसृत्-पञ्चशक्ष-पञ्चरकष्-परसक्ष-पान्यानि छुवर्षे सर्वोषधीक्ष विदया स्वेतवस्त्रमाक्षाभिरावेष्ट्य सर्वे समुद्रा इत्यमिमृश्य शमक्मे वरुष शस्त्रायामि स्वजी सन्ने सत्त्रभी धन्न इति क्रमेश वदशमाबाह्य धन्युज्य क्रमेश्व कामी भद्रा भद्रा अन्ते सहस्रक्षीमं कष्टु दायेति स्कानि कमाआपना महावेषं ययायकि रुक्षाच्यायादिमाऽभिषिष्य प्रदानायाहा सम्पूत्र्य पृदेशान्यामहा संस्थाप्याऽम्बाद्य्यात्। तत्र चलुपी म्राज्येनेत्यन्ते चतुर्दशीशान्ती क्ट्रमस्वरण-प्रश्न-पताश-वादिश-समिद्रिशाज्य-चद-तित-माच सर्वपैः प्रत्येकमञ्जूकसंबर्धाः व्यस्तसमस्तव्याद्वतिभिस्तिलेखामुकसंबरया यवर रस्यादि सिनीबाल्यां क्रुक्षां च वहामन्द्रं फिलरबा मधानवेशता। प्रयम्बकमध्येषा 🗷 शकितस्तिबद्दीमोऽधिक इति विद्येषः । तत काञ्चमानान्तेऽस्काधानोकक्रमेन् होसः । सिनीवासी-इक्कोस्तु गो-बक्र-सुवर्ष-स्-क्षीराऽऽज्य-गुरु।न् दृत्वा गी भू-तिल-दिश्वया-ऽऽश्य-वका-धान्य-गुज-बच्च-सक्खदानानि च दश कृत्या होतः कार्य इति ततो विश्ववानान्ते कलकोयकैः शतस्त्रिवेशाऽच्येवस्य-मन्त्रीः पक्षी-शिशु-सक्षितोऽमिथिको स्त्रमान बाउरमध्येका पूर्णा-हति हुत्क शुरवे भेद्र बासोयुग्मं ऋतिबग्म्मस शंक्षयां शत्का स्थितवाचयक्रमेंस्थरार्थवं कुर्वादिति छन्त्रचतुर्देशीकिनीवालीकुत्रू-द्यान्तिप्रयोगः ।

^{. -} ६ वीचारनिष्णाः १ ५ विकृत्यः स्ववाधिकः। १ व्यापुर्तने स्थारते १६ सम्बद्धाः १ विकृते

अथ दर्शजननशान्तिः।

नारदः-स्थाऽतो दर्शनातानां मातापित्रोदेरिद्रता । तदोषपरिहारार्थे शान्ति वश्चामि नारदः ॥१॥ पुण्यादं वाचित्वाऽऽदौ ऋतुसङ्कल्पपूर्वेकम्। कुण्टं वा मण्डलं कुर्याचदेशे स्थापयेत् सटम्॥२॥ मण्डलम् = स्थापिडलम्।

तत्कुम्भे नित्तिपेडुगध्यं दिष-चीर-धृवादिकम् । न्यब्रोधेादुम्बराऽश्वत्याः स-चृताः प्लक्षकस्तथा ॥ ३ ॥ पतेषां ष्टचम्लानां त्वचादीन् पञ्चवांस्तया। पश्चरत्नानि निक्षिप्य वस्त्रयुग्मेन वेष्ट्येत् ॥ ४ ॥ सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः। आयान्तु यजगानस्य दुरितदायकारकाः ॥ ४ ॥ थापो हि होति तुचैनाऽथ कयानश्चित्र इत्युचा । यत्किञ्चेदुमृचा चैर सम्रुद्रउयेष्ट इत्यृचा॥६॥ श्रभिमन्त्र्योदकं पश्रादग्नेः पूर्वभदेशके। हारिद्रं रक्तकं चैव कृष्णं स्वेतं च जीरकम् ।) ७ ॥ प्रोपां तएइलीथीय सर्वताभद्रग्रद्धरेत्। दर्शस्य देवतायाथ सीम-सूर्यस्त्ररूपकम् ॥ ८॥ प्रतिमां स्त्रर्थजां नित्यं राजती ताजनां तथा। सर्वताभद्रमध्ये तु स्यापयेदर्शदेवताः ॥ ६ ॥ प्रहवर्णी वस्रयुग्मं तद्दर्ण गन्धपुष्पकम्। बाष्यायस्वेति मन्त्रेण सविद्या यसर्थेव च ॥१०॥ दपचारैः समाराध्य ततो होमं समाचरेत्। **इ**स्वा बद्धि प्रतिष्ठाप्य ऋतुसङ्कल्पमीदशम् ॥११।। आधुरारोग्यसिद्धचर्य सर्वारेष्ट्रमशान्तरे ।

पुत्रस्य द्रशंजननदोषनिर्हरणाय च ॥१२॥

मातापित्रोः कुमारस्य सर्वारिष्टमशान्तये।

तेषामायुः त्रियं चैष शान्तिहोमं करोम्यहम् ॥१३॥

समिषञ्च चरुद्वयं क्रमेण छुदुयास्कृती।

हुनेत्सवित्यन्त्रेण सोमो धेनुं च मन्त्रतः॥१४॥

एतेर्मन्त्रेश्व त्रत्येकं हुनेदृष्टीत्तरं शतम्।

दर्शस्य देवताहोम श्रष्टाविश्वतिसंख्यमा ॥१४॥

है। ममेनं तु कुलाऽथ कुर्याद्वाराऽभिषेचनम्।

श्रीसृत्तमायुमुक्तं च समुद्रुष्येष्ठ इत्यूचा ॥१६॥

एतेर्मन्त्रेरभिषेकं मातापित्रोः शिशोस्तथा।

ततः स्त्रिष्ठकृतं दयाद्वोभशेषं समापयेद् ॥१७॥

हेरवयं रजतं चैव कृष्णां धेनुं सद्विणाम्।

श्राह्मणान् भोजयेदत्र कारयेत्स्वस्तवाचनम्।

इति दर्शनननशान्तिः।

अत्र सिनीयालीकुद्वोर्देशें चौक्तयोः शान्त्योर्ध्ययस्योक्ता इन्दोगपरिशिष्टभाष्ये —

श्रुह्देश अन्त्योऽमायाश्चाऽद्यविति नवपहराश्चन्द्रश्चयकालः। श्रुह्दं रयष्टमे यामे जीयो भवति चन्द्रमाः। अमानास्याऽष्टमे यामे पुनः किल भनेद्युः॥इति वानयात्।

अत्रेन्दुरासे प्रद्रित तिष्टते चतुर्थमागेन कसावशिष्टः। तदस्य एव ज्ञयमेति इःस्ना उपोतिविद्शक्षिको वदस्तिति च वाक्यात्। अत्र चतुर्दश्यस्थाऽमास्यामयोरस्थानदः गासास्य चसुरोधां गोचरो मवति, स कालो दष्टवन्द्रस्वात् सिनीवासी । श्रमान्स्योपान्त्यया-मयोः मास्रवन्द्रशोरगोचर इति स्तिश्रान्द्रः स कालः कुद्वर्मध्यमाः पञ्चयामादशे इति व्यवस्थया शास्तिव्यवस्थेति । परे सु चतुर्दशीमा-त्रसुकेऽहोरात्रे वर्तिग्यमा सिनीवासी प्रतिपत्मात्रसुतेति कृष्टः। वार् त्रवस्पतिमध्यमाऽहोरात्रवर्तिभ्यमा वर्शः । स्विस्मन् च्लुक्र्ंसीवितः पहोरभावेनोभयसम्बद्धानाकान्तत्वात् । स्थाऽवमवती श्रामः इर्शः । केशसम्बतुर्दशी-केशकप्रियाच्यस्य।भाषात् । स्वतिक्रस्पर्शिन्यामवमस्यां वा सिनीवरती कुद्धशन्तिपाष्ट्यभाषाद्दर्शशन्तिप्रातिरितियुक्तमाहुः ।

स्य दर्शनननशान्तिषयोगः—कर्साऽस्य कुमारस्य कुमारां सः इर्शनसम्बितानिष्ठनिवृश्ययं शार्षित करित्य इति सङ्गल्य गर्गेशपूत्रा-स्वस्तिवानमाऽऽचार्याविवरण्यि कुर्यात्। सच्चऽऽवार्यः सर्वपिविकरण् प्रोक्षण्यि कृत्यः ग्रुद्धभूमी अस्तपूर्व पञ्चनक्य पञ्चन-स्वक्-रस्वयुतं वासोयुग्यवेष्ठितं कुम्मं धान्योपिट संस्थाप्य सर्वे समुद्रा इति वीर्थान्यावाद्याऽऽपो हि हेति द्वेन क्यानश्चित्र समुद्रा यत्तिश्चेरमित्यूचा समुद्रुज्येष्ठा इति द्वेन क्यानश्चित्र सन्य तन्तेश्वत्यवेशे पञ्चगक्रपितिस्ववृत्तेः सर्वेतोमद्रं कृत्वा स्ववंश्वतिमयोगं कृत्वास इति वितृत् तह्निक्षे कृत्यप्रतिस्वगामा-प्यायस्वेति सामे तदुत्तरे तास्वप्रतिमायां स्ववित्व प्रभातादिति सूर्यं चानाम् सम्पूज्य—

भाषुरारीम्यसिद्धचर्ये सर्वारिष्ट्रपशान्तयं । तेषामायुः श्रिये चैव शान्तिहोमं करोम्यहम्॥

इत्युक्त्वा तत्पश्चिमे कुण्डे स्थण्डिके वार्डोर्न प्रतिष्ठाच्य तदीशान्यां प्रहान् सम्पूज्याऽभ्वाधान साधाराधाज्येनेत्युक्त्वा पितृन् समिष्ठ-रूम्यामद्वाविशतिवारं सोमं स्ये बाऽष्ट्रश्चरशत्वारं क्षेत्रेणोत्पाद्यज्ञ्य-यागान्तेऽभ्वधानकमेख पृजामन्त्रेतुंत्वा सम्ता-पित्-विग्रुक् हिरद्यद-यामिति पञ्चदग्र्येनगुष्ट वर्षस्यामिति दश्येन समुद्रज्येष्टा इत्यृष्टाः च जलकारकाऽभिषिच्य दिवष्टक्रवादि स्थापयेत् । यजमानो बस्ति-दानपृणोत्त्यन्ते होम-इप्य-कृष्णधेनुराष्ट्रायांय श्वतिक्रम्यस्य यथाशिक योद्याणं दस्ता विश्वन् संसोज्य स्यस्तिवाधयं कृष्यदिति दश्रिशास्तिः।

श्रय ज्येष्ठाशान्तिः।

घटिकैका च मैत्रान्ते ज्येष्ठादौ घटिकाइयम् ।' र्त्योः सन्धिस्ति इयं शिशुगक्दं समीरिकम् ॥ १ ॥ . मथुमै च द्वितीये च क्येष्ठर्चे च तृतीयके । पादश्रमे जातनसे ज्येष्ठोऽप्यत्र भजायते ॥२॥ ठयेष्ठान्त्यवादकातस्तु पितुः स्वस्य विनाशकः। जायते नाम सन्देहो दशाहाभ्यन्तरे तथा ॥ ३ ॥ क्रयेष्ट्रचे कन्यका जाता इन्ति शीघं धवात्रजम्। तच्छान्ति तस्य वक्ष्यामि गरहदोषमशान्तये॥ ४ ॥ सुदिने शुभनक्त्रे चन्द्रतारावलान्दिते । सुतकान्ते तथा कुर्याङ्क्येष्टाशान्ति विधानतः॥ ४॥ वज्राङ्कराधरं देवं ऐरावतगजान्तितम् । क्रुयोच्छ चीपति एम्यं देवेन्द्रं छुरनायकम् ॥ ६ ॥ कर्षमात्रभुवर्णेन कर्षार्द्धेनाथ पादतः । तद्विधानं मकुर्वीत विचिशाट्यं न कारयेत् ॥ ७॥ शास्ति-तयञ्जलसम्पूर्णं क्रम्भस्योपरि पूजयेत् । इन्द्रायेन्द्रो महत्वत इति मन्त्रेण. वाग्यतः ॥ ८ ॥ · गन्धपुर्ध्येर्घूपदीपैनीना भस्यनिवेदनैः पूजवेदिधिना वित्र! लोकपालगणान्वितम्।। ६॥ रक्तवस्त्रद्योपेतं पूजयेत् झरनायकम् । तत्र संस्थापयेत् कुम्भांश्रतुद्धिः विशोषतः ॥१०॥ तन्मध्ये स्थापयेत् सुम्भं शतबिद्रसमन्वितम्। पुरुयोदकसमायुक्तान् वश्चयुग्मेन वेष्टिसान् ॥११॥ कुम्भेषु विन्यसेद्धीमान् पश्चगन्यं समन्वकस् । पश्चामृतं पश्चरत्नं मृशिकाः पञ्चसंख्यकाः ॥१२॥ **प**क्ष्वहत्त्वकषायांभ प्रव्यवस्त्वकांस्तथा । मुवर्ण-कुश-दुर्वाश शतीषधि विनित्तिषेत् ॥१३॥ .पूजयेद्वारुणैर्मन्त्रैः कुम्भान् भीमात् मधनतः ।

त्वन्ना अग्ने जपेदादौ सत्वजोऽपि द्वितीयकम् ॥१४॥ सप्रद्रज्येष्टा इति च इमं मे मङ्गे चतुर्थकम्। पूजयेद्वस्त्रयुग्माङ्येश्रत्रुरःकलशानि जपं कुर्युः पयस्नेन मन्त्रैरेभिद्विजेशत्तमाः । आनो भद्रा वर्ष चादौ भद्रा अन्ते द्वितीयकम् ॥१६॥ इन्द्रस्कः रुद्रजाप्यं जपं सृत्युञ्जयं ततः । इत्यं सम्पूज्य देवेशं वहणं क्रुम्भसंस्थितम् ॥१७॥ मुसङ्करपविधानेन होमकर्मे ततश्ररेत् । समिजिर्वसर्वस्य शतमञ्जानरं तथा ॥१८॥ सर्विषा चरुया चैव यूलपन्त्रेख बाग्यतः। हुनेब्बाप्यं च तेनैव यत इन्द्रभयेति च ॥१८॥ तिलान् व्याद्दतिभिर्द्धत्वा शतमद्वीचरं पृथक्। भार्या-शिशु-समेरपेतं यजमानं विशेषतः हिरा अभिषेकं प्रकृतीत श्वनतैविक्तासंहितै: 1 समुद्रज्येष्ठादिभिर्मन्त्रैरिमं मे दरुणस्तवा ॥२१॥ यौः शान्त्येत्यादिभिर्मन्त्रैरभिषेकं समाचरेत्। श्रभिषेकनिष्टचौ तु यजमानः समाहितः॥२२॥ शुक्राम्बराणि धृत्वाञ्च कुर्यादाज्यावके। कनम् । रूपं रूपेति यन्त्रेख चित्रं तक्षचुरेव च ॥२३॥ देवतापुरतः स्थित्वा धृपदीपनिवेदनम्। दद्याचाचमनं सम्यक् ताम्बृताऽध्ये सथैव च ॥२८॥ नमस्ते भ्रुरनाथाय नमस्तुभ्धं श्राचीपते ! मुहास्मार्थ्यं यया दत्तं गरहद्रोषप्रशान्तये ॥२५॥ कार्यं वत्पूनकादीनां कारितं घत्फलं शुभम्। सञ्ध्वा तु तत्फलं सर्व देवेन्द्राय समर्पयेत् ॥२६॥

द्याचार्याय च गां दवात् सुशीलां च पयस्विनीम् । वस्रयुतां सर्वाजङ्कारभूषिताम् ॥२७॥ रक्तवर्णी वस्रयुग्गाभिधानां यथाविभवसारतः । খ यन्त्र-गन्धर्व-सिद्धेश्र पूजितोऽसि शचीरते । ॥२८॥ दानेनाऽनेन देवेश ! गएडदोषं विनाशय। श्रष्टोत्तरशतं संख्यां कुर्योद्दशासराभोजनम् ॥२६॥ तेभ्योऽपि दक्षिणां दत्ना प्रशिपत्य चमापयेत्। इमां कुत्वा ज्येष्ठाशान्ति यथाविध्युक्तमार्गतः॥३०॥ गण्डदीषं विनिर्जित्य आयुष्पान् जायते नरः। इत्युक्तं बृद्धगार्ग्येख शौनकाय विशेषतः ॥३१॥ क्येष्ठानच्चत्रसम्भृतगण्डदोषप्रशान्तये ब्रह्मानाद्वाऽथवा ज्ञानाद्वेकल्पाद्वा घनस्य च ॥३२॥ यन्न्य्नमतिरिक्तं वा तत्सर्वे चन्तुभईसि। अय प्रयोगः —गोमुक्षप्रसर्वं कृत्वा स्रस्य शिशोज्येष्ठाजनन-

भाग प्रयोगः—गामुख्यस्य कृत्वा अस्य शिशान्यश्वातना स्वित्यस्य सान्ति करित्य इति सङ्घल्य। गण्पतिपृजन-पृश्याद्याचन-नान्दीआद्धाचर्यक्रिक्य-चतुष्ट्यद्यानि कुर्यात् । तत आचार्यः सर्वपविकिरणभूमिमोच्चणे कृत्या मदीद्यौरित्यावि विधिना शालितण्डलपूर्णे कुम्मं संस्थाण्य पूर्ण्पात्रोपि हैमीमिन्द्रविनां 'इन्द्रायेन्दा मदत्यत इति मन्त्रेख एकवल्लक्ष्ययेन गन्धादिभिक्ष वाग्यतः पूजयेत् । ततः इन्द्रभिज्ञान् लोकपालान् समन्तादावाद्य पूजयेत् । ततः पूर्वादिविद्य चतुरः कुम्मान्यस्ये शतिखदं पुण्योदकवल्लमाल्यशुतं संस्थाण्य विक्कुक्मेषु पञ्चगव्य-पञ्चास्त्व-पञ्चरत्न-पञ्चसृत्तिका-पञ्चश्चक्रकाय-पञ्चपह्नय-स्वाद्याद्य इत्यादक्ष्यमाल्यशुतं संस्थाण्य विक्कुक्मेषु पञ्चगव्य-पञ्चास्त्व-पञ्चरत्न-पञ्चसृत्तिका-पञ्चश्चक्रकाय-पञ्चपह्नय-स्वाद्यक्षेत्रक्षेत्र प्रविचित्र चर्चा पूर्वक्षये त्यक्षे अग्न इति स्वक्षेत्रे कृत्यान्यः स्वति स्वक्षेत्रे कृत्यान्यः स्वति स्वक्षेत्रे कृत्यान्यः प्रविचित्रः । तत्रक्षत्यारः ज्ञतिवजः । स्वत्रावादः कृतिवजः ।

⁽¹⁾ त्रावारमिन्द्र• । (१) वनसूक्तम् ।

श्राचार्यौ मूलमन्त्रौ १रन्द्रं विश्वा श्रवीवृधमित्यष्टर्च **१**रद्ध्कं रुद्धं सृत्युक्षयं १ व जपेत् । ततोऽक्षि ब्रहांश्च प्रतिष्ठाच्याऽम्बाव्ध्यात् ।

यत्र प्रधानमिन्दं पक्षाशसमिदान्यकरहन्यैरष्ट्यातसंख्ययाऽष्ट-सहस्रसंख्यया वा प्रजापति तिलदन्येषाऽष्टशतसंख्यया व्याह्नतिभिः शेषेण स्विष्टशतमित्यादियस्यन्ते पूर्णाहुति पूर्णणविष्योकं च हत्वा सभार्ये सिशशुं यजमानं वारुणैः सक्तेः समुद्रज्येष्टा दमं मे वर्ण चीः शान्त्येत्यादिभिरभिषिञ्चेत् । ततो हत्यं ह्यस्मत्याज्यमबलोद्य तत्यात्रं सद्दिण् ब्राह्मण्यं दत्वा इन्द्रं सम्यूच्य नमस्ते सुरनाधाय नमस्तुभ्यं शचीपते । गृहाणार्थ्यं मया दत्तं गण्डशोषणशान्तये । इत्यर्थे दत्वाऽऽचार्य्यत्वगादिभ्यः श्रेषो गृहीत्वा दृष्ट्राय समर्था-ऽऽचार्याय पर्यास्वनः गां रक्तवस्रह्ययं च दत्योत्तरपूजान्ते दृष्ट्रं विस्तृत्य मितमाम्—

यन्त-गन्धर्व-सिद्धेश पूजितोऽसि श्वीपते ! दानेनाऽनेन देवेश ! गण्डद्वांषं विनाशय ॥ १॥ प्रश्नानाद्वाऽथवा झानाद्वेशस्पाद्वा धनस्य च । यन्त्यूनमतिरिक्तं वा तत्सर्वे सन्तुमहेसि ॥२॥ इति मन्त्रेण प्राचार्यायेव दत्वा भ्रष्टत्विग्न्योऽपि प्रधाशकि दक्षिणां दत्वाऽक्ति विस्तुवाऽष्टरातं व्रक्षाणान् भोजयेत् ।

श्रथ मृतशान्तिः।

श्रीनकः अधाऽतः सभ्यवस्यामि मृत्तजातहिताय वै ।

माता-पित्रोर्धनस्यापि कृतकातिहिताय व ॥ १ ॥
त्यागो वा मृत्तजातस्य स्याद्याभ्दात्प्रदर्शनम् ।

श्रक्तम् त्रजातानां परित्यागो विवीयते ॥ २ ॥

श्रदर्शनाद्वाऽपि पितुः स त तिष्ठेतसमाष्ट्रकम् ।

पर्व दृष्टितिर योक्तं मृत्तजायां फलं सुषैः ॥ ३ ॥

⁽३) संयोक्ता इन्द्र । (२) व्यक्तकस् ६।

फन्यायां तु विशोषः---

न वाला इन्ति मृलार्चे पितरं मातरं तथा । मूलजा वशुरं इन्ति न्यालंजा च तद्द्रनाम् ॥ ४॥ मारेन्द्रजाञ्चर्ण इन्ति देवरं च द्विदेवंता। शान्तिर्वा पुष्कला चेत्स्यात्तिहं दोषो न कथन ॥ ४ ॥ मुख्यकालं मवध्यामि शान्तिहोमजपं ततः । जातस्य द्वादशाहे च जन्मर्जे वा शुभे दिने ॥ ६॥ समाष्ट्रके द्वादशान्दे कुर्याच्छान्तिकगादरात् । वर्दैव शान्तिकं कुर्यात् कर्म तत्र मचक्ष्महे ॥ ७॥ संस्कृते पुरायदेशे तु मरुहपं कारयेद्दुधः । पुरुविभर्मिन्त्रतेस्तोयैः मोत्तिवायां चितौ तवः ॥ ८॥ सत्रोदकुम्भं ग्रुश्लक्ष्यं रक्तं व्रखविवर्णितम् । सुवर्षु तं च निर्णिक्तं पूरयेनिर्मलाम्भसा ॥ ६॥ वस्त्रावग्रणिटतं क्रुयांत्पूरयेचीर्थवारिणा कूर्चे हेमसमायुक्तं चूसपन्तवसंयुतम् ॥१०॥ स्वस्तिकोषरि चिन्यस्य सन्तीरद्वमपन्त्ववैः द्रोर्ख बीहींय निचिष्य ईशाने च निधापयेत्॥११॥ प्रक्रवरत्नानि नित्तिष्य सर्वौपिशसमन्त्रिकम् । भवितं पुष्पमन्थायैः श्रीरुद्दं च पृथक् जपेत्।।१२॥ **पढ**ङ्गसहितं सम्यक् जपेदे स्ट्रसंस्थया। बद्रस्पतियां बन्देगारुद्रसामिशः ॥१३॥ **प**हतूमा स्कामि सामानि च बीएयेक। कविक्यसम्यायात्। क्काद्याधुः त्रिक्ष्यं बसंस्थयः सकितो उपेतुः।

[ः] व्यासका=भारकेणायासुराकाः । २ साहेण्युकां व्यवस्थाः क्रांताः । १ द्विहैः इता के विशासकायाः समुस्यकाः।

तत्राऽप्रतिरथं स्वर्त शतरुद्राज्ञुनाक्षकम् ।
रुद्राज्ञुवाकं तथा पुण्यं रक्षोध्नं च स्पृशक्षपेत् ॥१४॥
भैयम्बकं जपेत्सम्यक् अष्टोश्वरसद्द्रस्कम् ।
एकवारं तथा चाऽपि पात्रमानी स्पृशक्षपेत् ॥१४॥
जपस्य पञ्चकुम्भाः स्युर्दे यं ना तदलाभतः ।
श्रीरुद्रस्यैककुम्भन्न सर्वस्कानि वत्र तु ॥१६॥
तथाऽन्यं च शुमं कुम्मं पूर्वोक्तिलेक्षणीर्युतम् ।
चतुःमस्रदणां कुर्योत्पञ्चवन्त्रं तु तद्भवेत् ॥१७॥

श्रवाऽयं साम्प्रदाविकोऽर्थः । श्राव्यय्ते वट्युम्भाः । एको स्ट्रस्य तस्मिन् श्रतसद्दियं स्ट्रस्तानि सामानि वा जप्यानि । स्रिन् वेकार्य पञ्चकुम्भाः । तत्र पूर्वाविकुम्भयतुष्टे तत्राऽमितरधमित्यादिना क्रमात्युक्तवतुष्ट्यविधिः । मध्ये च त्र्यम्बकमण्डपाधमानीज्ञपविधिः । एवं पञ्चकुम्भाशकौ चतुःप्रस्नवस्य एक एव । द्रयमिति द्वित्वं तु स्ट्रकुम्भमादाय । अत एव श्रीस्ट्रस्येति स्रोकार्द्धेन स्ट्रकुम्भ एव पूर्वोको द्वित्यसंख्या प्रशायाऽन्यते । चतुःप्रस्वय् एव तु पञ्च-कुम्भस्याने विधीयते । एवं पञ्चवक्तं तु तन्द्रवेदिति पञ्चयक्त्रते।

वस्नावगुण्डितं कुर्यात् पूर्यचिथिवारिणा ।
पश्चरतः समादाय ताम्रपन्तवसंयुतम् ॥१॥
मजारवरथ्यावन्त्रीकात् सम्माद्भदगे।कुलात् ।
राजद्वारमदेशाच्च मृद्यानीय निचिपेत् ॥२॥
कुम्भस्य नैश्वते देशे होमदेशं मकन्यवेत् ।
गामयाकेपिते देशे कुर्यात् स्यणिडलम्गमम् ॥१३॥
कुत्वाऽप्रिम्रुखपर्यन्तमुण्डेलादि स्वग्रक्तितः ।
पूर्णपात्रनिधानानतं कृत्वा पूजां समाचरेत् ॥ ॥॥
भूभभवदेवतास्यं सुवर्धेन मयन्तः ।
भिष्कमानेण वाञ्चेन पादेनाज्य स्वग्रक्तितः ॥ ॥।

पतिमां सक्षायोपेतां कार्यित्वा विश्वद्ययः । षद्रा मृत्तं सुवर्धास्य स्थापयिस्वा मपूनयेत् ॥ ६ ॥ मूलं मृहाकारं मूल्यमिति कचित्पाठः। तद्यप्रतिमामूल्यमित्यर्थैः। सुवर्षी सर्वदैवत्यं सर्वदेवास्मकोऽनलः। सर्वदेवात्मको विमः सर्वदेवमयो हरिः॥७॥ संस्परेकिश्वितिं स्थामं सुग्नुखं नरवाहनम्। रचोधिपं सहगहस्तं दिन्याभरणभूषितम्।। द।। प्रतिमापूजनार्थाव बस्नुबुमां प्रकल्पयेत्। पङ्कुजं कारयेञ्जूमौ रक्ताभैर्वीहितगडुलैः ॥ ६ ॥ चतुर्विशदके।पेतं शुक्लैर्वा कर्णिकान्वितम् । तस्योपिर स्वसेत्वार्थं स्वर्ता वा रौप्यमृन्मयम् ॥१०॥ शुद्धरस्रेण सञ्जाद्य तत्र मृतानि निचिपेत्। मुलानि शतमूलानि तानि सर्वे च वस्यते।।११॥ स्वयमुत्राहयेत्याक्षी मृतानां च शतं पिता। मङ्गरपारच पविचारच छोषध्यः कथयाम्यहम् ॥१२॥ लक्ष्मणः शतमूला च शिरीयो वेतसस्तथा। सहाका खेतमूला च विष्णुकान्ताव्य शक्विनी ॥१३॥ सर्पाची योननेका च पुत्रपारी कृताखली । पालाशो विरुवकरचैव रोचना चन्दनदृषम् ॥१४॥ 😁 कृष्णामांसी भुरोशीरं बालकं च तथाऽऽमली । गोजिहा त्लसी ईव्या शतपुष्पी सलाङ्ग्ली ॥१५॥ ब्रह्मद्रयदी द्रोणपुष्वी विवद्गुः सितसर्पवाः। विष्यती काकजङ्का च भायमासा हुहूस्तथा ॥१६॥ ज्योतिष्मती च गन्धारी निर्मन्था पूर्णकोशिका। मनज्ञमा सुभद्रा च गुडूची सेन्द्रवारुणी ॥१७॥

अजम्बुकाऽस्दन्ती घ कदली केतकी तथा गोच्चरं शतपर्वा च अरिष्टिकाऽपराजिता क्षिमरुद्धा शतपर्या निकुम्भा च सुवर्षेला अश्वगन्था हस्तिकणी हरिदादितयं तथा चष्ट्रनो मधुकारश्च अन्तरधो बकुलस्तवा सर्वेचीरा सपामार्गी मन्दारश्राऽतिग्रुक्तकः ॥२०॥ बालती स्वर्णपुष्पा च श्रीपर्णी श्रीफर्ल तथा। दर्भमूलं करवीरं मदयन्ती विकङ्कृतः ॥२१॥ **अ**र्देस्ट्निकस्तया . पाटसा . सुरदास्थ फर्लं मन्मयदृत्तस्य पलाशस्य परत्नवाः स्था नदीष्टचमूखं सुरदारुविंदारिका रवेसवीर्या श्वेसपाका नीलोत्पर्त तथैव च ।)२३॥ ·नागकेशरमिन्दोरी कुमारी चैव निविषेत्। तीर्थाम्बु पश्चगव्यं च सर्वीपध्यश्च काञ्चनम् ॥२८॥ वशसम्भवता वाऽपि ब्राह्मं मूलं शतं शुभम्। वीरत्वचा समेतं च शतबिद्धे घटे न्यसेत्।।२४॥

गृंतम्ला=ग्रतावरी । वेतस्यक्ष् वेद्युतः । सहका⇒सहरेवी । इतेतमृता=पुनर्गवा । मोमनेत्रा=मस्त्याक्ती । पुत्रपारा≈पुत्रजीवा । कृताञ्जली
=शञ्जलिमी 'हाथा होता' इति प्रसिद्धा । विष्यः । सन्दन्द्रयम्=श्वेतं
पीतं च । सामला=भूम्यामलकी । गोजिहा=गंजिलभीति प्रसिद्धा ।
सामली=कितहारीति प्रसिद्धा । महादग्रही = स्वयःपुत्री । करम्बुकः ।
काकजहरूक्ताकाङ्गी । ज्योजिक्मती ⇒क हुका । गाल्यारी=देवगास्थारी ।
पूर्णकोशिका=कीशातकी । सगल्यमा=शिक्षः । सुभद्धा=सारिया ।
सत्यन्त्रका=मुख्यो । विशालपर्वा=स्वा । अरिष्ठिका = नागवद्धा । स्विककहा=पिक्यगुह्नी । शतपत्रा=कमित्रों । निकुक्त्य=पीतुः । मधुकारः=
मधुक्य । सर्वान्याकाः । द्वितकर्णा=परग्रहः । उष्ट्य=पीतुः । मधुकारः=
मधुक्य । सर्वान्याकाः । करियुक्तकः=माध्यो । मासर्ता=स्वाती ।

रवर्णपुर्वा⇔कुशली । श्रोफलम्≠विरुवम् । प्रदयन्ती⇒यूथिका । विककुतः=सुववृक्षः। अर्द्धसूर्वनिका=पातस्या । प्रन्मथवृत्तः=श्राप्तः । सुरदारः = वेवदारः । विदारिका = मृक्षभागळी । प्रवेतयोर्या = गिरिकर्णी । स्वेतपाका = गुक्षा । श्रेषाणि स्पष्टानि ।

विष्णुकान्ता सहदेवी हस्तसी हु शतावरी ! मृलानीमानि वृद्धीयाच्छताऽलाभे विशेषतः ॥१॥ . स्थापयेत्कर्शिकामध्ये वस्त्रगन्धाय ल**र्**कृतम् कुङ्कुभीषधिसंयुसम् ॥२॥ कूर्म हेमजलोपेतं कुम्भोपरि न्यसेदिदान् मूलं नत्तनदैवतम् । अधि-प्रत्यधिदेवी च द्विणोत्तरदेशयोः ॥ १ ॥ यजेदादी ज्येष्ठानश्चश्रदेवतम् । अधिदेवं डत्तराषाढश्दवादि श्रतुराघान्तपर्वयेत्े॥ ४॥ ऐन्द्रादीशानपर्थन्तं पूजयेत् स्व-स्वनामतः स्वलिङ्गोक्तैय मन्त्रैथ प्रधानादीन प्रपूज्येत् ॥ ४ ॥ पञ्चामृतेन संस्थाप्य आवाहात्य समर्चेयेत् । उपचारैः दोडशभिर्यद्वा पश्चोपचारकैः ॥ ६॥ रक्तवन्द्नगम्थाङ्यैः पुष्पैः कृष्णसिवादिभिः । मेषमृत्रादि-भूपैथ घृतदीपैस्तरीव मुरापोलिकमांसाचै ने वेद्ये रोदनादिभिः मत्स्य-मांस सरादीनि बाह्मणानां विवर्षयेत्॥ = ॥ मुरास्थाने मदातव्यं जीरं सैन्धनमिश्रितम्। पायसं ज्ञवरोषितं भांसस्थाने पकश्यवेत् ॥ ६॥ उक्तं गन्धाधलाभे ह यथालाभं समर्चेयेत् । बुष्पान्तं हु समभ्यक्षे हामं कुर्याद्यथादितम्।।१०॥ निर्वापमोक्तरादीनि वरोः कुर्यायथाविथि । इविर्श्व हीत्वा विधिवन्नै ऋस्यैव ऋचा हुनेत् ॥११॥

में भुष्याः परापरेति यचै देवीति वा पुनः याचसं घृतसंमिश्रं हुनेदृष्टोशरं शतम् ॥१२॥ समिद्दाज्य-चरून् पश्चाच्छान्तितः संख्यया हुनेत् । श्राधिदेवतयोत्रापि जुहुयात् स्व-स्वयन्त्रतः ।।१३॥ पतुर्थ्यन्तिर्नेमे।ऽन्तैथ स्वाहान्तैः स्व-स्वमन्थकैः। मर्खेबदेवताभ्यक्ष पायसेन तु हे।मयेत् ॥१४॥ कुणुष्वति एश्रदशर्मिर्जुहुपारकुशरं ततः । गायत्र्या जातवेदसे जैयम्बकमिति क्रमात्।।१४।। सीरा युद्धन्ति तामजिन वास्तोष्यत्यग्निमेव च क्षेत्रस्य पतिना गृखानापर्गिन दूर्त सथैव च ॥१६॥ श्रीसूक्तेन तथा विद्वान समिदान्यचसन् क्रमात्। ছান্তাদ্বংহারীর্রাভিদি অন্তাবিহারিদিঃ ক্রদার্ ।।१৩।। अष्टाष्टसंख्यया बार्डीप शुहुयाच्छक्तितो सुर्यः । स्वषः सोयेन पायसं जुहुवाचु वयादश ॥१८॥ चतुर्यहीतमाञ्यं च यातेबद्गीत मन्त्रतः सुवेण जुहुयादाज्यं महाव्याद्दृतिभिः क्रमाह् ॥१६॥ हुत्वा स्विष्टकृतं पश्चात्मायविशाहुतिहुनेत् । .प्रस्चार्यो यन्नमाने। वा प्रमनौ. पूर्णाहुति हुनेत् ॥२०॥ समुद्रादिति सूक्तेन पाजापत्यव्यक्षा तथा पूर्णीदर्वि सप्त वे एतैः पूर्णाहुति हुनेत् ॥२१॥ समाप्याध्य विद्यारीपयेद्बुषः । कुम्भाऽभियन्वस्यं क्वर्याद्वतिस्रोनाऽभियशेयेत् ॥२२॥ मृत्युप्रश्मनार्थाय जोत्त्रीयम्बकं शतम् बद्रकुम्भाक्तमार्गेखा इद्रमन्त्रं स्पृशन् जपेत् ॥२३॥ भूगं दीपं च नैवेचं कुम्भयुग्ये निवेदयेद् र **प्रसाद** येचते ह देवसभिषेकार्थमादरात्. . अ२४॥

तस्मिन् काळे ग्रहातिथ्यं कर्चन्यं भूतिमिच्छता । -पृथक् प्रशस्तं तेनैव मस्त्रोष्ट्या सहैव च ॥२५॥ अभिषेकविधि वक्ष्ये पूर्वाचार्येरुदाहृतम् । भद्रासनोपविष्टस्य यजमानस्य ऋत्विजः ॥२६॥ दारपुत्रसमेतस्य कुर्धुः सर्वेऽभिषेचनम् । अचीभ्यामिति सुक्तेन पावमानीभिरेव च ॥२७॥ आयो हि होति नवभिर्यत इन्द्रद्येन च। सहस्राचत्चेनाऽपि देवस्य त्वेति मन्त्रकैः ॥२८॥ शिवसङ्करपमन्त्रेश यहस्यपार्खेश पन्त्रकैः। मोऽसी वजधरो देवो महेन्द्रो गजवाहनः ॥ मृतजातशिशोदोंषं भाता-पित्रोर्क्यपोइतु ॥२८॥ योऽसौ शक्तिथरो देवो हुतभुद्धोपवाहनः । सप्तनिहः स देवोऽग्निम् तदोषं व्यपोहतु ॥३०॥ थोऽसी दण्डधरी देवी धर्मी महिषवाहनः । मृजनातशिशोदींपं व्यपोहतु यमस्तथा ॥३९॥ योऽसौ खद्रथरो देवो निर्ऋती राचसाधिषः। षशावयतु मूलोस्थं दोषं बालस्य शान्तिदः ।।३२॥ वोऽसौ पाशमरो देवो वस्याश्र जलेश्वरः । मक्रवाहः प्रचेताहो मूलोस्यायं व्यपोददु ॥३३॥ योऽसौ देवो जगत्माखा भारतो सुमवाहनः। प्रशासनतः मूलोत्यं दोवं गएडान्तसम्भवम् ॥३४॥ योऽसी निविपत्रिर्देशे गदामृक्षरवाहनः माक्षा-पित्रोः शिशोश्रीय मृजदोपं स्यपोहतु ।।१६॥ योऽसौ पशुपतिर्देवः पिनाकी द्ववशहनः। आध्येषा-मूल-गयवार्ग्सं दोषमाश्च व्ययोहतु । १६६ (१ विध्नेशः सेत्रपो देवा पिनाकी ध्रवाहनः।

ग्रार्हेषा-मृत-मग्हान्तं दोषमाशु व्यपोहतु ॥३७॥

सर्वदोषमश्मनं सर्वे कुर्वन्तु शान्तिदाः ।

तच्छं योरिषभेकं तु सर्वदोषोपशान्तिदम् ॥३८॥

सर्वकामप्रदं दिव्यं मङ्गलानां च मङ्गलम् ।

वस्नान्तरितकुम्भाभ्यां पश्चाचु तपयेद्वुधः ॥३८॥

ततः शुक्काम्बरधरः शुक्कमान्यानुहेपनः ।

थलपरनो दिन्यामिस्तोषयेद्दिनमादिकान् ॥४०॥

धेतुं पयस्विनीं दद्यादाचार्यय सवत्सकाम् ।

निर्म्हतिप्रतिमां वस्तं कुम्भं हेम च दापयेत् ॥४१॥

ग्रह्योखपु वापयेदिति कचित्याहः।

श्रीरुद्रजापिने देवः कृष्णोऽनद्वान् मयस्ततः ॥४२॥
तरकुम्भवस्त्रतिमां तस्मै द्यास्मयस्ततः ।
इतरेभ्योऽपि विमेभ्यः शनत्या द्याश्च दिव्यणम्॥४३॥
सक्ताऽलाभे ततो द्यादाचार्यः अस-ऋत्विजाम् ।
सक्तम्न्यं मदातव्यं शक्तया चाऽय मदापयेत् ॥४४॥
श्राचार्याय अस्रणोऽद्धे ऋत्विग्भ्यश्च तद्द्धेकम् ॥४४॥
सहस्याय अस्रणोऽद्धे ऋत्विग्भ्यश्च तद्द्धेकम् ॥४४॥
सहस्याय अस्रणोऽद्धे ऋत्विग्भ्यश्च तद्द्धेकम् ॥४५॥
सहस्याय अस्रणोऽद्धे ऋत्विग्भ्यश्च तद्द्धेकम् ॥४५॥
सहस्याय अस्रणोऽद्धे ऋत्विग्भ्यश्च तद्द्धेकम् ॥४५॥
स्वादसं पायसादि आस्रणान्भोजयेव्यतम् ॥४६॥
सर्वशान्तेश्च पठनं अस्रणार्थास्यवः ॥
सर्वशान्तेश्च पठनं अस्रणार्थास्यवः ॥४५॥
सर्वशान्तेश्च पठनं अस्रणार्थास्यवः ॥४५॥
सर्वशान्तेश्च पठनं अस्रणार्थास्यवः ॥४५॥
सर्वशान्तेश्च पठनं अस्रणार्थास्यवः ॥४५॥
सर्वशान्तेश्च पठनं अस्रणार्थास्यवितः ॥४५॥

गगडान्तेष्येवमेर्थं स्यात्युष्याद्येष्येवमेव हु । समाष्टके द्वादशादे क्वर्याद्वे शान्तिमादरात् ॥४६॥

व्यव मृतारकेपाशान्त्योः प्रयोगः—तत्र कर्त्वोककाले मास-पद्मायुद्धिक्य ममाऽस्य शिशोः कुमार्या द्या मूलायपादादिष्याश्ले-बायां दा जन्मना सूचितिपिकार्यारहशास्त्रयर्थे ग्रास्ति करिश्य, दरयुक्त्वा गर्थेरापुत्रम-स्वस्तिवाचन-मातुकापुजनाश्युवियकानि करवाऽऽजार्यन मझसदस्यान् ऋत्विजमाष्टी पद् चतुरो वा वृत्वा यथाविमव-मर्चयेत् । तथाऽऽचार्यं भाचार्यकर्मं करिन्य, इत्युक्त्वा । यवव संस्थितमिति सर्पपान्यकीयांऽऽपा हि हेत्यादिभिभुं वं मोस्पैशान्यां महोचौरित स्पृष्टुोषधयः समिति द्रोणपरिमितं बीद्यादि सिप्स्वा कलरोष्टिकति बद्रकुरमं संस्थाप्येमं गङ्गेत्युद्रकेशपूर्व्य गम्धद्वारा-मिति गन्धं या क्रांवधीरित्यीवधीरोबधयः समिति बदाम् काच्या-चिति दूर्वा अश्वत्ये व इति पञ्च प्रमुवान् रुवती भीम इति पञ्च रंबचः स्योगा पृथिवीति सप्त मृदो याः फलिनीरिति फलं स द्वि रक्षानी-ति पञ्चरकानि दिरएयक्कप इति द्विरध्य गायन्येति गोमूच पुनर्मनेति गोमयम।प्यायस्थिति पयः दिधिकाच्य इति दक्षि तेज्ञोसीस्याज्यं देवस्य स्वेति कौरां कुर्च मधुवातेति मधु स्वादुरिति शर्करां विषया युवा धु-भासा इति बश्त्रेण सूत्रेण वा क्रुस्मकण्डमावेच्टा पूर्वादविरिति पूर्व-पात्रेज पिथाय ततः शागुरम्था चतुरित्तु चतुरः कुम्मान् मध्ये वैकं इन्मं प्रत्येकं मन्त्रावृत्या पदार्यातुसमयेन अगार्थ संस्थाप्य स्वर् कुम्मे सीवर्षविमार्था ज्यम्बद्धं वशिहो बङ्गोऽनुष्टुए बङ्गाबादने विनियोगः। अवश्वकमिति क्यमाबाह्य पूत्रपेत्। वतो क्यकुरमं स्पृः है कर्तिक् वाञ्चकोत्रदेकावशिनी वहम् नक्षेत् मीवि वहस्कानि हु-न्दोगकोतुहसामानि तरेत्। स्कलासानेकद्विश्येकादगावृत्तिः गक्तिता बेया । कहुद्वाच घोरः कवनो कह्रो गायभी इमा बहाय इत्स बह् बादा नव जगत्योऽन्तेऽनुखुभी बाते पितयु रक्षमदो बद्धास्त्रिखु वर्षे विवियोगः । सामाविति बावो राजार्भ वामदेवो बहस्तिब्हुप् वसुः धृष्टि भौमो को कहरिसम्द्रुप् भुवनस्य वितरसृजिक्षावद्गरिसम्द्रुप् अपे विनियोगः । ततोऽस्य ऋतिकम् जपार्यकुरमपश्चके माक् करेस अपैत् । आद्याः शिशानेति अयोदशर्षस्येग्द्रोऽप्रतिरच ऋषिरिन्द्रो देवता चतुष्यां वृद्धस्पतिकिन्द्वप् अपे विनियोगः । त्वमाने वह इत्य-

नुवाकस्य इध्यवाद् रुद्धो जगती जपे विनियोगः। स्थमन्ने वामदेवो-ऽग्निक्तिन्द्वप् अपे विनियोगः। रच्चोइणमिति पश्चविक्वचरवाङ्गिरसः वायुरिन्नांस्मध्द्वप् अपे विनियोगः। ततो सध्यकुरसे अपेत्। स्वस्थकं वसिष्ठोऽनुष्टुप् अपे विनियोगः ॥ ११ ॥ भन्नेय प्रवसानमप्रि सङ्ख्यपेत् । यतं पट्कुम्भाशको रद्रकुम्मं चतुःप्रकावचं चेति कुम्भव्रयं संस्थाध्य रुद्रैकादशिष्यादि रुद्रकुम्भे जपवाऽप्रतिरया-कोनि भरतारि प्रस्तवर्षेषु स्यम्बकमन्त्रं पावसःनीश्च सञ्चमुत्ते जपेत् । भ्रथाचार्यो रुद्रकुम्भाग्नैश्चत्ये स्थविद्रक्षेऽग्नि प्रतिष्ठाप्य तदीशाम्यां नवमहस्यापनं इत्वाऽम्बाइष्यात्। तदाया । समिद्वयन मादायाऽस्थां मूलग्रान्ती देवतापरिश्रहाधमन्त्राघास्येऽस्मिक्तन्त्रान हितेऽझावित्यादि चश्चयो बाज्येनेत्यन्तमुक्त्वा नवप्रहानधिवेवताः प्रत्यांभदेवता-स्नाकपालान् विनायकादींश्च प्रत्येकममुकसम्बयमा समि-व्यवस्यिनिश्चति प्रतिद्रश्यमञ्जेतस्य स्वत्यस्य स्वत्यस्य शर्विद्यतिसंक्यया पुताकपायस-समिदाज्यव्यक्रिविश्वेदेशयासतु-विंशति-ऋचदेवता अवाष्टर्शक्यया पायसेन रचोहरां इत्युध्येति पम्बदराजिः करारान्तेन समितारं दुर्गा आतमेद मि ठद्रं ऋत्विक् भूति दुर्गा बास्तोप्पविमन्नि क्षेत्राधिपति मित्राबदवी प्रश्निमेखासाऽ-ष्ट्रा-प्रसंब्यया कुलराज्नेत भियन्तामित्रवर्णामित पञ्चवरासिः। मत्युचमद्यसंबदया समिवाल्यचर्यमा स्रोमं वयोदरावारं पायसेन षप्रं चतुर्वं हीतेनाज्येन बाझ बाबुं सूर्वं प्रकार्यते बृहस्यतिमिन्हं विश्वान्देशान्त्रक्षाव्याकृतिभिराज्येश शेषेक स्विष्कृतमित्याचि श्वयो वर्व इत्यन्तमुक्त्वा समस्तव्याइतिमिः समिद्वस्यमप्रावाक्त्र्यात्। भान्सेपामान्ती हु सर्पमधानदेवतामधिवेवता बृहस्पति मत्यधि-देवताम, पितृष् अगाधिरत्यक्षेत्रेवताक्षेति विशेषः । ततः परिस्नक् हमाविषुर्योपःविभिधानान्तं कत्वाऽभोः प्रागुवन्ता रक्तैः शक्केथी तबहुती-अतुर्वि ग्रह्सं पर्धं करवा तत्र प्रान्वतकुम्भं संस्थाप्य तस्मिन् वा माध्यारिति वतम्बानि तदबाये विश्वकारता-सहदेवी-तुबकी-सवावदी-क्रुग्रमुलानि विश्वा पूर्वापार्थ निभाव तथ सास्ट्रेस वासी मितस्य क्षत्कविकायां निषदः जवक्तियां निञ्जतिमतिमासस्य कारकः पूर्वमं पञ्चासुतस्मापितां मोजुवी। मीदा करके। निस्तिनांसकी मेख्न इति संस्कात --

संस्मरेशिश्वति स्यामं सुप्तुलं नरनाइनम् । रक्ते।थिपं खद्गइस्तं दिन्याभरणभूवितम् ॥

न्दिति श्यास्ता । तद्दित्त्वत इन्हं वे। मधुछन्दा इन्हो गायत्रीतीग्रद्ध तवृत्तरत्वाऽप्तु मे मेधातिथिरापोऽनुष्टुवित्यपां च सौवर्षग्रंतिमे सस्याप्य पदार्थानुसमयेत स्वस्थमन्त्रेस्ताः पृत्रयेत्। तत्र
नत्त्रयुग्मम् । रक्तवन्त्रमम् । कृष्णुवृत्पालि । मेथप्रह्मभ्यः धूपः।
ग्राज्यस्य दीपः । पालिको दनादि तैयेषं व्याद्यग्नां सुरास्थाते
सैन्ध्रयमिश्रं स्तिरं मांसस्थाते त्वत्रवृत्रुकं पायसम् । स्वित्यादीनां तु
सुव्यमेष ततः । चतुर्विंशहतेषु प्रागादितो विश्वेदेवाः । विष्णुः ।
वस्तः । वर्त्याः। मजैकपरत् । श्रदिर्युक्तयः। पूषा । श्रदित्रनी । यमः ।
श्रद्धाः । प्रजापतिः । स्रोमः । श्रद्धाः । श्रद्धाः । स्वपाः ।
प्रतरः । भयः । अर्थमा । स्विता । त्वस्त । व्ययः । इन्द्राप्ती मित्र
इत्येताश्रत्यंत्रत्वमोऽन्तिनांमिनः क्रमेशाऽऽवाद्य पूज्येत् । न्यान्त्रपान्
ग्रास्थी तु सर्पप्रितमां वमोऽस्तु सर्पभ्य इत्यावाद्य—

सर्पो रक्तसिनेत्रस द्विश्वजः पीतवस्तरः । फलकासिथरस्तीक्ष्णो दिन्यागरणभूषितः ॥ इति ध्यास्ता ।

तहिं स्थाने यह स्पते युत्समहो बृह स्पति सिष्ट्रिवित वृह स्पतिम्।
ततु स्पत्नश्चोदीरतां शृङ्गः स्वधा तिष्ट्रविति पितृनावाहा चतुर्विशितदलेषु प्रामादितो भगायदित्यन्तर्स् देवता भावाहा पृत्रयेष् । ततोऽश्वाधानक्षमेल पायस-श्वत-इस्तरान् धपियत्वाऽऽस्यभागान्तं इत्वा
यत्रमानेन सर्वदेवतो हे ये न द्रक्षे त्यक्ते सित्यगन्वाधानोकक्रमेण्य्वदेवतां
तत्त्वस्य व्यवदेवो रह्णोहा प्रव्युप् कसरहोमे विनियोगः । एवं
सर्वत्र । गायञ्चा विश्वामित्रः सविता गायत्री । जातवेदसे कश्यपो
दुर्गा विष्युप् । व्यव्यक् वसिष्ठो बद्दोऽतुष्टुप् । सीरा युक्षमति सुध
व्यति वसिष्ठो वास्तोष्पति सिष्टुप् । भगते नयानस्त्योऽगिवसिष्टुप् ।
क्षेत्रस्य वासदेवः होभपासोऽतुष्टुप् । भगते नयानस्त्योऽगिवसिष्टुप् ।
क्षेत्रस्य वासदेवः होभपासोऽतुष्टुप् । युवाना जमदिनिमेत्रावरुण् ।
क्षेत्रस्य वासदेवः होभपासोऽतुष्टुप् । युवाना जमदिनिमेत्रावरुण् ।
वायत्री । अग्वत दूर्वं काल्यो मेद्यातिथिरिनर्गायत्री । विरययवर्णामिति पञ्चदर्श्वस्य कर्द्मानंदिचिक्कितेन्द्रसञ्जता ऋष्यः श्रीदेवता

षाधास्तिकोऽतुषुमः तुर्या मस्तारपङ्किः पश्चमी-वष्ठयौ त्रिष्मी ततोऽशयतुष्ट्रभावनया प्रस्तारएंकिः प्रत्यृषं समिदाज्यवद्योमे विनिः योगः। त्यमः सोमेवि त्रयोदशर्थस्य प्रभायः सोमिकावृप् पायसहोसे विनियोगः। या ते रुद्रेति कस्यपो रुद्रस्वराजनुषुष् चतुर्वशीकाञ्य-द्दोमे बिनियोगः। सप्तमहान्याहतीनां विश्वामित्राहये ऋषयोऽस्था-बयो देवताः गायञ्यादानि सन्दांसि बाज्यहोमे विनियोगः । पर्व हुत्वा स्विष्ट्रह्मादिवायिक्षात्ताहुत्यन्तं इत्वा स्रोब्यास-नवप्रह्-विना-यकाविभ्यो निऋतीन्द्राङ्गयो रहस्रेत्रपालयोख बलीन् दस्ता पूर्णा-इति श्रुहुवात् । तत्र मन्त्राः । समुद्रादुर्मिरित्येकादरार्चस्य वामदेव मापस्त्रिष्यु । अन्याजगती प्रजापते हिरवयगर्भः प्रजापतिसिष्टुष् । पूर्णादर्थि विश्येदेवाः शतकतुरनुरद्भप् । सत्त ते बग्ने सप्तवानन्विर्जगती पूर्णांद्वतिहोमे विनियोगः । एवं सर्वत्र । ततो होमरोपं समाप्य विज्ञातः स्पृष्ट्या श्रुतवारं ज्यम्बक्सभ्यं जपवा प्रधानकुरमं 🏻 तथैव रजकुम्मं च स्पृष्ट्रोक्तरीत्या रज्ञैकावशिष्यादि अपना गन्धाः विभिः कुम्मद्वयगतनिद्धतिरुद्दावश्यच्ये सर्विशाकार्थः सर्वकुम्मो-वकैर्भद्रासनोपविष्टं सापत्यकलवं यजमानमस्विष्ट्वेत् । तत्र मन्त्राः। महीरणमिति परशां कश्यपो यक्तमहाऽनुहृष् समिषेके विनियोगः। एरमुत्तरमः। एथस्यविश्वचर्यम् इति चिश्चेह्य शतं वैसामलाः एव-मानसोमो गायत्री । मापो हि होति नवर्षस्याम्बरीयः सिन्धुद्वीप भाषो गायत्र्यंस्ये ब्रेड्युषुभौ पञ्चमीवर्जमाना सप्तमीप्रतिद्वा। यत इन्द्रेति इयोः सप्तर्थयो विश्वेदेवा अनुषुए सहस्राक्षेणेति तसस्य प्राजापत्यो यहमनाशनो यहमहा त्रिष्टुए प्रयोरम्स्यानुपुर्। देवस्य स्वैति त्रिभिर्यञ्जर्भिकः यज्जाप्रतेति पराणां शिकसङ्करमध्याणां प्रजापति-मैनिसपूर् । तत्तत्पुरायो।कमन्त्रः--

योऽसी वज्रथरी देवो महेन्द्रो गूजवाहनः । मूजजावशिशोहींषं माता-पित्रोध्येपोहतु. ॥ १ ॥ याऽसी शक्तिथरी देवो हुतश्रुक् मेषवाहनः । सप्तजिहब देवोऽग्निम् लदोषं स्थपोहतु ॥ २ ॥ योऽसी द्रव्हथरो देवो धर्मी महिषवाहनः । मूजजावशिशोहींषं माता-पित्रोक्ष्येपोहतु ॥ ३ ॥ योऽसौ खड्गधरो देवी निष्यती राचसाधियः ।
प्रशामयतु भूकोत्थं देवि गएडान्तसम्भवम् ॥ ४॥
पोऽसौ पाश्वधरो देवी वरुएाश्र जलेश्वरः ।
नक्रवाहः प्रचेतास्त्रये मुकेत्थाधं व्यपादतु ॥ ५॥
पोऽसौ देवी जगत्माणा पारुते स्गवाहनः ।
प्रशामयतु मूलेत्थं देवि बालस्य शान्तिदः ॥ ६॥
पोऽसौ निधिपतिर्देवः खड्गभुद्दाजिवाहनः ।
पाता-पित्रोः शिशोश्चैव मूलदेवि व्यपेतिद् ॥ ७॥
पोऽसौ पशुपतिर्देवः पिनाकी दृष्वाहनः ।
श्राक्ष्रोषा-मूल-गण्डान्तं देविमाशु व्यपेतिद् ॥ ५॥
विद्वेशः सेत्रपा दुर्गा छेत्रपाला नवग्रहाः ।
सर्वदेविपश्यमनं सर्वे कुर्वन्तु शान्तिदाः ॥ ६॥

भारलेपाशान्ती तु---भारलेपाऋश्वजातस्य माता-पित्रोर्धनस्य प्र ।

भातृ हाति कुल्स्थानां दे। चं सर्वे व्यपे (हतु ॥१०॥
यो इसी वागी श्वरो नाम अधिदेवी बृहस्पतिः ।
माता-पित्रीः शिशोश्चीय गण्डान्तस्य व्यपे (हतु ॥११॥
पितरः सर्वभूतानां रचन्तु पितरं सदा ।
सर्पन चात्रजातस्य विश्वं च हाति वान्यवान्॥१२॥ इति विशेषः
ततः तच्छं योः श्रंयुर्विश्वेदेवाः शक्तरी स्राभिके विनियोगः ।
ततो वक्तान्तरित निम्नृति वहकुम्भोदकेन स्रापितो यजमानो भृतधीतथासाः साऽपत्यकतनः कांस्यपात्रस्थाऽऽज्यं हपं रूपमित्यवेष्य
विभाग वस्वाऽइथार्यादी नभ्यच्यांचार्याय गां ब्रह्मणे वृषं सवस्थायऽश्यं
वृद्धाः पने कृष्णवृषं भेन्याच्छामे सत्तन्म्यूत्यं वा दत्या स्वश्वस्या
मृतिवश्यो भूयसीं च वस्वी सरपूजां हत्या यान्त्यिति विश्वज्याऽऽचाः
स्रार्विक्ययो भूयसीं च वस्वी सरपूजां हत्या यान्त्यिति विश्वज्याऽऽचाः
स्रार्वक्ययो भूयसीं च वस्वी सरपूजां हत्या यान्त्यिति विश्वज्याऽऽचाः
स्रार्वक्ययो भूयसीं च वस्वी सरपूजां हत्या यान्त्यिति विश्वज्याऽऽचाः

दश या वाह्यसान्योजयित्वा शास्याशीर्वाचयित्वा यस्य स्मृत्येत्या-सुक्त्या सन्द्यजनो भुक्षीत ।

इति श्रीभद्दनीसक्वरठकृते भगवस्त्रभारकरे शान्तिमयुके मुलाश्लेषाशान्तिमयोगः।

अय वैष्टति-व्यतीपात-सङ्क्रान्तिशान्तिः ।

श्रीनकः -क्रुंमार्जन्मकाले तु व्यतीपातश्र प्रैपृतिः । सङ्कंमथ् रवेस्तत्र जाता दास्त्रिकारकः ॥ १ ॥ दरिद्रार्णा महादुःस्वं च्याधिवीडासमुद्रदम्। अश्रियो मृत्युपाप्नोति नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ २ ॥ स्रींखां च शोकं दुःखं च सर्वनाशकरे। भवेत् । शान्तिर्वा पुष्कत्ता कार्या तस्य दीषा न कथन ॥ ३॥ 'मामुखनसर्वे कुर्याच्छान्ति कुर्यात्त्रयतनतः। जपार्वभिषेकदानैश्व हे।मादिष विशेषतः ॥ ४ ॥ नवव्रहमस्तं कुर्यात्तस्य देविशक्शान्तये । मथमं ग्रीमुखं जन्म ततः शान्ति समाचरेत् ॥ ५ ॥ मृहस्य पूर्वदिग्भागे गे।मयेनाऽनुत्तिप्य च। अलङ्कते सुदेशे तु ब्रीहिराशि मकन्ययेत् ॥ ६ ॥ पश्चद्रोणिमतं धार्म्य तद्द्वे तएडुळेन चो ं तदर्द तु तिलैः कुर्यादन्योऽन्यो परिकन्ययेत् ॥ ७॥ ंद्रव्यक्रितयराशी हु अष्टपत्रं लिखेड्बुधः। पुराधाहं वाचिषक्या तु आचार्य दृशुयात्पुरा ॥ ८॥ आचारवन्तं धर्मकं कुलीनं च कुटुन्विनम् । मन्त्रतत्वार्थतत्त्वज्ञं शान्तिकर्पणि कोविदम् ॥ १ ॥ ्रिश्चाङ्गभूषण् देशात्पद्दवसाङ्गुलीमकस् ... इति मतिहित् इस्थमद्रखं सुक्तोहरम् ॥१ ०॥

सङ्ग्रह्म समृदौषधिपञ्चवस् । **बीधोंदकेन** सगब्य-गन्ध-रत्नं च बस्रयुग्मेन बेष्ठयेत् ॥११॥ . तस्योपरि न्यसेत्पात्रं सूक्ष्ममत्रणसंयुतस्। मतिमां स्थापयेद्धीमान्साधि-मत्यधिदैवताम् ॥१२॥ चन्द्राऽऽदिस्याऽऽकृती पार्श्वे मध्ये वैष्टतिमर्चयेत् । एवमेव व्यक्तोपाते शान्ती सङ्क्रमसास्य तु ॥१३॥ भानीरुत्तरता रहमस्नि दक्षिणता यजेत्। निष्कपात्रेण घाऽर्द्धेन पादेनाऽपि खशक्तितः ॥१४॥ प्रतिशं कारयेद्धीयानः तत्तल्लचणलचिताम्। प्रतिमां पूजनार्थीय वस्त्रयुग्मं निचेद्येत् ॥१४॥ भवेत्सूर्यश्चन्द्रः प्रत्यभिदेवतम् । अधिदेवा ततो ध्याहृतिपूर्वेखा तत्तन्मन्त्रेख पूज्येत् ॥१६॥ त्रैयम्बक्तेन मन्त्रेखा प्रधानप्रतिमां यजेत्। तस्मूर्य इति मन्त्रेण सूर्यपूजां समाचरेत् ॥१७॥ न्त्राच्यायस्वेति मन्त्रेण सोमपूनां समाचरेत्। वे।दशभिर्यद्वा पश्चोपचारकैः । **उ**ष्मारैः **म्राचित्या गन्धपुष्याद्यैः फलं नैवेदाम**र्पयेत् सं१८०। मृत्युद्धयेन मन्त्रेया मधानमनिमां स्पृशेत्न-अष्ट्रीचरसहस्रं या अष्ट्राचरशतं तु त्रा ॥१६॥ अष्टाविशति वा चाञ्य पूजायां च खशक्तितः। सर्वसीरं मजप्याज्य सोमोज्य सोपमन्त्रतः ॥२०॥ भाना भद्रेति सूर्क्त च भद्रा अग्नेश सूक्तक्रम् 📗 क्रवेचु पौरुषं सूक्तं त्रैयम्बकमतः परम्।। २१॥ कुरभे स्पृष्टा चतुहिसु जपं क्षर्युस्त्वयर्तिजाः। क्रम्भस्य पश्चिमे देशे स्थापिडलेऽग्नि मकन्पवेत् ॥२२॥ स्रयुक्कोक्कविधानेन कारपेश्संस्कुताङ्गलाम् ।

त्रैयम्बकेन यन्त्रेण समिद्दालयचरून् हुनेत् ॥२३॥ अष्टोत्तरसहस्रं वा अष्टोत्तरशतं तु वा। अष्टाविंशति वा कुर्यात्स्वस्य शक्त्यनुसारतः॥२४॥ मृत्युक्षयेन मन्त्रेण विलहोमें समाचरेत् । ततः स्वष्टकृतं हुत्वा अभिषेकं च कार्यत् ॥२४॥ समुद्रल्येष्ठास्केन आपो हि हेत्यृचेन च । अज्ञीभ्यामिति स्कोन पावमानीभिरेव च ॥२६॥ वैयम्बकेन तत्सूर्य आप्यायस्वेति मन्त्रतः । स्वास्त्वामिति मन्त्रेण अभिषेकं समाचरेत् ॥२७॥ द्वरास्त्वामिति मन्त्रेण अभिषेकं समाचरेत् ॥२०॥ द्वरास्त्वामिति क्षात्रेण समाचरेत् ॥२०॥ द्वरास्त्वामिति क्षात्रेण समाचरेत् ॥ ।

ष्प्रभिषेकाप्खुर्त वस्त्रमाचार्याय निवेदयेत् भूत्वा भूषणायैरलङ्कतः **रवेतवस्र**वरो 11 2 11 पश्रमानः स्त्रिया युक्त श्राज्याऽवेद्यसमाधरेत् पूजयेत्पश्चाद्वस्रहेमाङ्गुलीयकैः ॥ २॥ गोदानं वसदानं च स्वर्णदानं विशेषतः क्षद्रोपश्रमनार्थाय आवार्याय प्रदावयेत् ॥३॥ मच्यादनपर्धं द्यासतः शान्तिभैनेदिति जापकेभ्यो बाह्मखेभ्यो दक्षिखाः मतिपादयेत् ॥ ४॥ दीनान्यकुपणेभ्यम भदयाङ्ग्रीदिव्याम् बाह्मणान् शतसंख्याकान् मिष्टाक्षेभीजयेच तान्॥ ४॥ बन्धुभिः सह भुञ्जीत यथाविभवसारतः। एवं यः कुरुते मस्यों नैव दुःस्वमबाष्त्रुयात् ॥६॥ मायुरारोग्यमैश्वर्षे माता शिक्षोः शिशोरपि । अय प्रयोगः -- कर्ता गोमुर्वप्रसर्वे छत्या भासवसायुक्तिस्याः Sea शिशोवें युती विवतीपाते सङ्कान्ती बोव्यस्था 'स्वितस्या दिन

इस्य निरासार्थं शान्ति करिष्य इति सङ्गल्य गर्वेशपृञ्चा-स्वस्तिः बाजन-मातृपृञ्चा-वृत्तिभाञ्चाकार्थावृत्ति वरवानि क्षयति । जयानार्थः सर्वर्षाविकरकादि करवा बाच्यां गोमयोपलिसभूवि पश्चद्रोकतदर्व-मित्रमीहि-तराङ्गक-तिकानम्बोन्योपरि राग्रीकृत्य तथाऽहरूलं चिरण्य सःकर्षिकायां कुम्मं संस्थाप्य तीर्थोर्केमाऽऽपूर्णं तथ ससमृत् पञ वर्तव-रक्ष-राज्याद्याच्य-सर्वोचयीः विचना वस्त्रयुग्मेशऽऽवेध्यः पूर्व-पार्च निधान तम वैभूतिकास्ती मध्ये प्रयम्बद्धमिति उद्गं तद्वित्वत बन्स्यं इति स्यंमुचरतकाप्यायस्येति सोमं स्वतीपात-सङ्कान्तिका-स्योस्तु मध्ये सूर्यं तक्षितोऽभि दूतमिस्यमिम्सरतो वहं तक्षत्प्रितः आस्वाबाह्य चोजरुमिः पश्चमित्रीपक है। सम्पूरक बहु सूर्य-सोमप्रतिमाः स्पृष्टाऽष्टस्यक्षाष्ट्रयभाष्ट्राधिकात्वन्यतरसंस्ययाः स्युव्ययमञ्ज्ञसुचयः द्येत्यादिसर्वसीरमञ्ज्ञानाध्यायस्वेति च अमाज्ञपत् । ब्यतीपात-सङ्क्रान्तराण्योस्तु पूर्वे सीरकपश्ततो सृत्युत्रपत्रपा। देशो प्रतिवाः आगापि विकार पुर्व क्रमेश आयो भद्रा भद्रा अस्मे सहस्रारोणी कड्-द्वारोति सुकाबि अपना साथार्थस्य कुरुशस्पश्चिमेऽन्ति र्मातकाप्य भद्रा-बाहनादि व्यनाम्सं इत्वाडम्याद्ध्यात्। तत्र बच्ची आओनेत्थन्ते स्यू-स्वंशोमान् समिवार्गाज्येस्तः सन्त्रमृत्युश्चयमन्त्रेष् च तिसाद्वति-मिरप्रसद्द्याऽप्रशतःश्राविशति अभ्यतरसञ्ज्यपाऽशेषेव लिएक्ट-नित्यादिष्पतीपातसङ्काम्तद्यानयोस्तु स्वाप्तिवद्रानिति विदेशः। वत जाज्यभागान्तेऽन्याधानोकक्षमेच हुत्या वसिदानान्ते कवछोद्कैः समुद्राग्येष्ठा इति ख्लेन साचे हि हैति द्वेनाऽचीम्यामिति ख्लेन पावमानीमिः प्रवानाधिक्रवधिदेवतामन्त्रेः श्वरास्त्वेत्वादिपौराच-मन्त्रीसामिविको वजनानोऽभिवेकवसामानार्थाय निवेचाऽऽस्थमवेदव पूर्वाद्वति द्वत्याऽऽकार्याय वेनुं वस्तयुग्माऽक्गुसीयवादि ऋत्विग्ध्यस विकार परवाडम्बेञ्बक्ष भूरिविकार परवा कर्त शक्ता वा आहाबाब भौजियित्वा वर्ष्युविः सह अबीत इति वैधृति-वर्तापात-सञ्जानिः कान्द्रवः।

षर्येकनचत्रजन्मशान्तिः।

गर्नः-एकस्थिन्नेय नथने आयोर्ना पितु-दुवयेः । वस्तिरवेत्तयोर्थस्युर्भपेदेकस्य निश्चयः ॥ १॥

तक्कोषनाशाय वदा प्रशस्तां शान्ति च कुर्याद्भिषेचनं च । सम्पूच्य ऋच्मतिमां तद्ये दानं च कुर्याद्विभवानुरूपम्।।२॥ सत्र शास्ति प्रवश्यामि सर्वाचार्यमतेम तु । शुभवारे च चन्द्र-ताराचलान्विते ॥ ३ ॥ रिक्ता-विष्टी विवर्णे तु मारभेद्रिभवे सुधीः। आचार्यं वरयेत्पूर्वं चतुरश्च द्विजासमाम् ॥ ४॥ पुरायाई वाचियत्वा तु शान्तिकर्म समाधरेत्। अपनेरीशानदिग्भागे नत्तत्रमतिमां ततः॥ ४॥ तम्बन्नोक्तमार्गेख श्रचेयेत्कलशो।परि रक्तनस्रोण सञ्दाद्य वस्त्रयुग्मेन वेष्ट्येत् ॥ ६ ॥ स्वशास्त्राक्तेन मार्गेण कुर्यादग्निमुखं ततः। व्यनेनैव तु यन्त्रेण हुनेद्रष्टोश्चरं शतस् ॥ ७॥ मत्येकं समिद्याज्यैः भायश्विशांतमेव च। अभिषेकं ततः कुर्यादाचार्यः पितृशुत्रये।: 11 = 11 चस्रालङ्कारगोदानैराचार्यं पूजयेत्पुनः क्टित्वां दिल्लां दयान्यापत्रयमुवर्णकम् ॥ ६॥ देस्तामतिष्राद्यानं भाग्यवस्मादिभिः सह । · वान-कृष्या-ऽऽसनादीनि दद्यासद्द(प्रशान्तवे ॥१०॥ भोजयेद् बाझसानसर्वोत्र विराशाञ्चविवर्जितः ।

स्थ भयोगः—कर्ता मास-पद्माद्यक्तिक्याऽस्य कुमारस्य वि-नार्द्यक्तंश्विस्विस्वित्तरिष्ठशास्त्यर्थमेकनदाशशान्तिं करित्य इति सङ्ग्य गणेशपूजन-स्वस्तिवाचनाऽऽभ्युव्यकाऽऽचार्यत्विश्वरणानि कृर्यात् । भयाऽऽवार्योऽन्तेरीशान्यां कुम्भं संस्थाप्य रक्तवसायुगमेना-ऽऽब्हाद्य तस्मिन् पूर्णपाचोपरि तत्त्वश्वकोक्तमध्येण प्रतिमार्था स्वा-सर्भ तद्वतां हाऽऽक्या सम्बद्ध्य अन्ति वसिष्ठाक्याऽभ्योक्तम् साम्ब-भागान्तं कृत्वा तत्त्वश्वभ्रवमन्त्रेण सम्बद्धांत्रसादि प्रस्कृतम्बोक्तरस्तं हुत्वा होमग्रेषं समाप्य शिशुं तरिवन्नादीश्चाऽभिविश्चेत् । ततः कर्ती-सरपूर्वा कृत्वा विस्तृत्य प्रतिमादिकं गयादि चाऽऽश्वायीय पत्या स्नुरिवन्भ्यश्च प्रत्येकं सीवर्णभाषययात्मकां यथाशक्तं विशेषां दश्या यथाविभवं यान-श्रव्यां-ऽऽसनादीनि च श्रवाः ब्राह्मशाम्मोअयित्वा ११यं भुश्चीत । श्रयेकम्बन्नशान्तिप्रमोगः ।

श्रथ प्रहणोत्पत्ती शान्तिः ।

शीनकः -- प्रहरो चन्द्-सूर्यस्य पस्तिर्यदि जायते । व्याधिपीडा तदा स्त्रीणामादौ तु ऋतुदर्शनात् ॥ १ ॥ इत्थं सञ्जायते यस्तु तस्य मृत्युर्ने संशयः ध्याथिपीढा च दारिष्टं शोकश्च कलहो भवेत् ॥२॥ शान्ति तेषां प्रवस्थामि नराखां हितकास्यया । यंस्थित ऋसे विशेषेण प्रहर्ण संमजायते ॥३॥ तहक्षांघिपते रूपं सुवर्शेन विशेषतः चन्द्रं चन्द्रग्रहे धीमान् रजतेन विशेषतः ॥ ४॥ राहुरूपं मकुर्वीत नागेनैव विचन्नराः शुर्ची देशे पयत्नेन गोमयेन पछेपयेत् ॥ ५ ॥ नारोन = सीसेन । 'तस्योपरि न्यसेद्धीयाश्ववन्तं सुशोभनम् । त्रयाणां चैकरूपाणां स्थापनं तत्र कार्येत् ॥ इ ॥ रक्ताकं ते रक्तगन्धं रक्तपुष्याम्बराणि च ! सूर्यप्रहे भदातन्यं सूर्यभीतिकराय च ⁽श्वेतवस्त्रं श्वेतमान्यं श्वेतगन्धात्ततादिभिः चन्द्रग्रहे शदातव्यं चन्द्रमीतिकराय च राहवे चैव दातव्यं कुष्णपुष्पाम्बराणि च। द्याज्ञचत्रनायाय स्वेतगन्धानुकेपने ॥ ६॥

- 6

सूर्यं सम्पूजयेद्धीपाद्माकुष्णेनेति सन्त्रतः चम्द्रग्रहे च पालाशैः समिद्धिर्जुहुपाश्वरः ॥१०॥ द्वीभिर्जुरुवाद्धीमान् राहोः सम्भीणनाय च । समिजिर्जनहत्तोत्यैभेशाय जुहुपाइबुषः ॥११॥ मेशाय = नदात्राधिएतये । चारुयेन चरुणा चैव तिलैश जुहुपाचतः। पञ्चगन्यैः पञ्चरत्नैः पञ्चलक् पञ्चपञ्चर्वैः ॥१२॥ जलेरीपधकल्कैश्र सहितैः कलशादकैः श्रीवधकरकैः = सर्वोषधिकरकैः । श्राभिषेकं प्रकुर्वीत यजमाने प्रयत्नतः ॥१३॥ मन्त्रेर्वरुणदेवत्यैरापो हि ष्टादिभिक्तिभिः इमें में गङ्के प्रितरस्तलायामीति मन्त्रकीः ॥१४॥ श्रभिषेके निष्टचे तु यजमानः समाहितः श्राचार्ये पूजयेत्पक्षात् छशान्तो नियतेन्द्रिय ॥११॥ तस्मै द्वास्थयकोन भक्तया पतिकृतित्रपम् । द्विणाभिश्र संयुक्तं यथाशकचत्रुसारतः ॥१६॥ ब्राह्मखान् भाजियत्वा तु प्रशिपत्य समापयेत्। तेभ्ये।ऽपि द्चिणां स्थायजमानः समाहितः ॥१७॥ ध्वनेन विधिना शान्ति कुरवा सम्यग्विशेषतः। श्रकालमृत्युशेक्षं च व्याघिपीढा न चाप्तुयात् ॥१८॥ सीख्यं सीयनसं नित्यं सीभाग्यं सभवे नरः। इत्यं प्रहराजातानां सर्वारिष्टविनाशनम् ॥१६॥ भागवेषोदं , शौनकाय महात्मने । , इति चन्द्र-सूर्यप्रहणप्रस्तिशान्तिः।

श्रथ विषघटिकाशान्तिविधिः।

तत्र दुद्धगार्ग्यः---

विवनासीषु सञ्जातः पिष्ट्-भ्रात्-वनात्मनास् । नाशकु द्विषशस्त्राधीः ऋरलग्नेऽष्ट मेऽपि वा ।। १ ॥ तदोषपरिहाराय शानितकर्प समारभेत् । रुद्रो यमे।ऽग्निष्ट्रंत्युश्च देवताः परिकीर्तिताः ॥ २ ॥ यथाशक्तवा तत्तन्त्वज्ञखसंयुताः **सुवर्**शन प्रतिमाः कार्यित्वा तु आहकत्रोहिभिः स्थले ॥ १ ॥ स्यरिहर्त्तं परिकरण्याऽय क्रुम्भमीविधसंयुतम् । जलैः सम्पूर्य संस्थाप्य मृदादि प्रचिपेशवः ॥ ४ ॥ बस्तद्वयेन संवेध्व्य पश्चरत्नानि निचिपेत् । कुम्भोषरि तु संस्थाप्य चतस्तः प्रतिमास्तथा ॥ ५ ॥ सत्तनमन्त्रीरच सम्यूच्य मन्धपुष्ये।पहारकीः । कदुद्रायेति मन्त्रेश यमाय सोममित्यथ ॥६॥ अमिर्मूर्देति मन्त्रेण परं मृत्ये। इति त्वथा। प्तेश्चतुर्भिमन्त्रेस्त क्रवादर्चेद्धुनेशया ॥ ७॥ समिच्चरुष्टतद्रव्यैः प्रत्येकं च यथाऋषम् मात्विग्भिरच सहाचार्यो हुनेदष्टसहस्रकम् ॥ ८॥ भ्रष्टोचरशतं बाऽय भ्रष्टाविंशतिमेव वा । ततस्तितौर्द्धनेदेवंदितरान्मन्त्रैश्च कल्पवित् ॥ ९ ॥ तताऽभिष्टिचयेहेनं मन्त्रैः पौराणिकैः क्रमात् । भाष्येतां भगवानीशः पिनाकी सर्वतामुखः ॥१०॥ मृतिंत्रदानेन समस्ताऽभीष्ठदे। भव १ ईवर्स्याना यमः काळा द्यहहस्तः मशान्तयोः ॥११॥ रक्तहरू पाशभुत्कृष्णे। महिषस्थः शिवं कुर्रं।

पिइत्रसभ्युकेशासः विक्रास्चत्ररोहणः ॥१२॥ छागस्थः साचसूत्रस्य सप्ताचिः शक्तिभारकः। त्व मृतिंपदानेन मम पार्ष जिनाशय DS 💵 दंष्ट्राकराज्यद्भा नीलाञ्जनसमाकृतिः 1 रूक खह्म-गदापाणिर्भृत्युमी पातु सर्वेदा ॥१४॥ इत्थमेवं विधेर्मन्त्रीपंथाविधिसमाहितः। गो-भू-हिरएय-बक्षेश्च श्राचार्य पूजयेत्सुधीः अ१४॥ पुर्व क्रुयरियदानेन विषदेशः मशास्यति ।

इति विषघटीशास्त्रिः ।

अय भ-गएडान्तशान्तिः।

गर्गे-अध्वनी मध-मृलादी त्रि वेद-नवनाहिका १ रेवती सर्प-शकान्ते यास स्द्र-रसाः क्रमात् ॥ १ ॥ श्रम्बनी मध मुलादी नाडिका द्वितयं तथा। श्रिनी-मूघ-मूलानां पूर्वाईं बाध्यते पिता ॥ २ ॥ पुषादिसर्पपश्चार्द्धे जननी चाध्यवे शिशोः ! पितृत्रथ दिवाजातो रांत्रिकातस्तु - मातृहा ॥ है ॥ श्रात्पहा सन्ध्ययार्गावा नास्ति गएडे निरामयः । सर्वेषां गण्डजातानां परित्याची विधीयते श्रुष्ट ॥ बक्तयेहरीनं यावद्वपे पारमासिकं भवेत्। तस्य शानिक प्रवक्ष्यामि सेम्प्यन्त्रेण भक्तिमान् ॥ ॥ -कास्यपात्रं मकुर्वीत पत्तीः पेरदशसिनेतृष् । अष्टभिश्व. वतुर्भिश्च दाश्यां, वा श्लोभनं तथा ॥ ६ ॥ . तम्मध्ये पायसं शुक्षं, अवजीक्षेत्र स्रितम् 🗤 🥫 राजतै , चन्द्रपर्चेश सित्युष्पसहस्रकीः शक्।।

दैवंद्राः सीमवासाध शुक्रमान्यास्यरावितः।
सोमोऽहिनितं सिक्षस्य पूजां कुर्यादतन्द्रितः॥ = ॥
स्पेत्साहस्रकं मन्त्रं श्रद्धानः समाहितः।
स्राध्यायस्वेति मन्त्रेण पूजां कुर्यात्समाहितः॥ ६॥
दैधाद्वे दक्षिणामिष्टां गण्डवे।वमशान्तये।
शुक्रं वागीव्यरं चैवं तास्रपत्तसमन्वितम्॥१०॥
गण्डदे।वे।वशान्त्यर्थं द्धाद्देववदे शुचिः।

इति भ-गण्डान्तशान्तिः।

अथ दिनच्चयादिशान्तिः।

गर्गः-दिनन्तये व्यतीपाते व्याघाते विष्टि-वैश्तौ ।

मुळे गएडेऽतिगएडे च परिधे यमघएटके ॥ १ ॥

कालद्यहे मृत्युयोगे दुष्ट्योगे सुद्दाक्षो ।

तिस्मन् गएडदिने माप्ते मस्तियदि जायते ॥ ६ ॥

श्रातदेश्वकरी मोक्ता तत्र पापश्चते सितः ।

विचार्य तत्र देवझं शान्ति करवा यथाविषि ॥ ३ ॥

यजगानेश देवताना प्रकाशा चैत पूजनस् ।

श्रीपे शिवालये भवस्या घृतेन परिदापयेत् ॥ १ ॥

श्रीपेवैर्क शृङ्गरस्य श्रस्वत्यस्य महन्तिग्रम् ॥ १ ॥

श्रीपेवैर्क शृङ्गरस्य श्रम्वत्यस्य महन्तिग्रम् ॥ १ ॥

स्वर्वदेवत-विश्राणा पूजनं गोस्थ वद्येनस् ॥

पृष्टचाश्रुस्तुष्टिशास्त्यर्थमभीष्टपालसिद्धमे ॥ ६ ॥

सर्वारिष्टरसर्वाय प्रदानं स्थाचरेत् ।

श्रिपास विभिन्तसक्तायां वीपद्रानं करेगति यः ॥ ७ ॥

सस्त्रपदे गोघतेनैव स वै स्र्यं अयेक्षरः ।

विष्णुमृतिं महापुष्यमश्वत्थं श्रीकरं सदा॥=॥

मद्त्तिणं नरे। भक्त्या कृत्वा मृत्युं जयेक्ररः।

सर्वसम्पत्समृध्यर्थं नित्यं कृत्याखुद्धये॥ ६॥

श्रभीष्टक्तिस्थर्यं कृर्याद्वाद्धार्यभोजनम्।

श्रभिषेकं शिवे शान्ति कृत्वा भक्त्या नरे।चमः॥१०॥

श्रक्षालमृत्युं निर्कित्य दीर्घायुर्जायते नरः।

गाखपत्यं पुरुषस्कां सौरं मृत्युद्धायं श्रुभम्॥११॥

शान्तिजाप्यं कृद्वाप्यं कृत्वा मृत्युद्धाया भवेत्।

मुक्ते वा सर्पगर्यके वा कृर्यादेतानि यत्नतः॥१२॥

श्रायुष्टदिकरार्थायं गर्यददे।पमशान्तये।

इति गर्गोकमध्डजननशास्तिः।

अथ त्रिकशान्तिः।

शान्तिसर्वस्वे---

शुतत्रये सुता चेत्स्यासस्यये वा सुतो यदि ।

गाता-पित्रोः कुलस्यापि तद्दाऽनिष्टं महद्भवेत् ॥ १ ॥

उयेष्ठनाशो धने हानिर्देश्वं वा सुमहद्भवेत् ।

तथ शास्ति मकुर्वीत विचशाठ्यविवर्णितः ॥ २ ॥

जातस्यैकादशाहे वा द्वादशाहे शुभे दिने ।

झाचार्यमृत्विजो द्वस्या प्रह्मक्षपुरःसरम् ॥ ३ ॥

सह वा प्रह्मकः स्थारस्यस्य विचातुसारसः ।

जन्न-विष्णु-महेशेन्द्रमतिमाः स्यर्णतः कृताः ॥ ४ ॥

पूज्येद्धान्यराशिस्य — कस्तशोपरि शक्तितः ।

पृज्येद्धान्यराशिस्य — कस्तशोपरि शक्तितः ।

पृज्येद्धान्यराशिस्य — कस्तशोपरि शक्तितः ।

पृज्येद्धान्यराशिस्य — कस्तशोपरि शक्तितः ।

द्विज एको जपेद्रोमकाले शुनिः स्माहितः॥६॥ ध्वाचार्यो जुहुयाचत्र समिदाज्यतिन्तांश्रहम् । ध्वाचार्यो जुहुयाचत्र समिदाज्यतिन्तांश्रहम् । ध्वाचार्यसम् । प्रह्युरःसरम् । प्रह्युरःसरम् । प्रह्युरःसरम् । प्रह्युरःसरम् । प्रह्यादि-मन्त्रेरिन्द्रस्य यत इन्द्रभजायहे॥ व ॥ ततः स्विष्टकृतं हुत्वा चित्तं पूर्णाहुति ततः । ध्वभिषेकं छुहुम्बस्य कृत्वाऽऽचार्य मपूज्येत् ॥ ६ ॥ हिरएयं धेनुरेका च घ्वत्विजां दिल्लाणा ततः । प्रतिमा स्वर्वे देया अपस्कारसमन्त्रिताः ॥१०॥ कास्यास्य वील्रणं दत्वा शान्तिपादं तु कार्येत् । कास्यास्य वील्रणं दत्वा शान्तिपादं तु कार्येत् ॥ शाह्याणान् भेजयेन्छवन्त्या दीनानाथांश्र विश्वीयते । एवं शान्तिविधानेन सर्वारिष्टं विश्वीयते ।

इति त्रिकशान्तिः।

अथ प्रसववैकृतशान्तिविधिरुच्यते ।

शकालभसवा नार्यः कालातीतमजास्तथा । विक्रतमसवारचेव युग्ममसवनास्तथा ॥ १ ॥ शमानुषा अलएखाय अजातव्यं जनास्तथा । शीनाङ्गा अधिकाङ्गांथ जायन्ते यदि वा ख्रियः ॥ २ ॥ पश्चः पश्चिणश्चेव तथेव च सरीस्रपाः । विनाक्षं सस्य देशस्य कुलस्य च विनिर्दिशेत् ॥ ३ ॥ विवस्तियेश्वां नृपतिः स्वराष्ट्रात्स्वयथ पूज्याथ ततो द्विजेन्द्राः। विकस्तिनेर्ज्ञाक्षाणुतपैर्णुक्ष ततोऽस्य शान्ति समुपैति पापम्॥४॥

अथ यमलशान्तिविधिः ।

श्रत्र ब्राह्मर्थं तदाहुर्यं श्राहितासिर्यस्य भार्या गीर्वा यमी जन-चेत्का तत्र प्राथिश्चित्तिरिति ! सोऽसये मक्त्वते वर्योदशक्षपालं पुरो-ढाशं निर्विपत्तस्य याज्यानुवायये मक्तो यस्य हि स्थित १ वेद चरमा श्रद्धे वेद्याहुर्ति वाऽऽहवनीये ह्युद्धयादसये मक्त्वते स्वाहिति सा तत्र प्राथिश्चिरिति ।

कारिका-अथ यस्य वधूर्गी वा अनयेष्वेद्यमी ततः । ' समरुद्भ्यक्षर्कं कुर्यात् पूर्णाद्वतियथापि वा ॥ १ ॥ इति भाग मध्यमविकाविषु वेशोगृहीतवालकरक्षणम् ।

मदनरत्ने योगसागरे —

मध्यमेऽहिन गुञ्जाति वासकं वास्तिनीः प्रही । वासिनीस्थाने वाधिनीमहीकि नारायखीके पाटः । गन्धिनीति गुणोसरे ।

तया गृहीतमात्रस्य चेष्टितान्युपलक्षयेत् ।
गात्रो द्वे गोनिराहारो खालाग्रीवानिवर्तनम् ।
लिम्पेत घातकी-लेष्ट्र-मञ्जिष्टा-ताल-चन्दनैः ॥१॥
धूपयेन्महिषाक्षेण ततो मुखति सा ग्रहीं ।
लेपनधूपने वालस्य नाटायणीये बलिदानग्रमुक्ती-मत्स्य-मांस-सुरामस्य-गन्धा-ऽस्यक्ष्य्य्य-दीपकीः ।
विलिद्याक्ति रोषा।

पित्रमन्त्रः प्रयोगसारे--ॐ नप्रधामुएउँ भगवति विद्युविज्ञे हाँ २ हीँ २ मधसरम्बु दुवपहः हुँ ॥ तद्यवा--गच्छन्तुः यातान्यतः स्थाने कहो बापकवि स्त्राद्धा विद्युविकक्षे हाँ हीँ हुं हुं सुक्री हुन्न स्थाने कहो बापकवि स्त्राद्धा विद्युविकक्षे हाँ हीँ हुं हु सुक्री हुन्न

शासप्रहाणाँ विश्वयं शस्ता विस्तिनिर्वदर्ने । एसिस रवेयदयेऽस्ते हिलाओं वा देयः।

पित्रवानानि मयागसारे-

कदरमध क्राइस्य दिनीते। निम्य एव च । . झर्वस्थ्रोद्वस्त्रस्यम्य रहेष्मान्तकः वदी तथा ॥ १ ॥ साह्यस्यः क्रमेणेकाः पूर्वादीमान्तदिग्गताः । नोषाभेकं समाधित्य वर्ति दचायथे।दितम्॥ २ ॥ मतिस्यूसं मत्सुदकं मतिद्वसम्याऽपि मा ।

क्र्यूलम् = तरम् । क्ष्मचितु कुलमित्येष पाढः ।

अत्राशायाम्हुक्तायां भाष्मोक्ताबाह्यसारतः॥ ३ ॥ यत्र दा रेश्यते अत्र भाष्यणां यक्तिमाहरेत् । कुरुवा तीराजनान्तं पक्तिमिति विधिवद्वालमाह्य संस्कृत्या-

्राह्मस्तरसर्वभावं शिरस्ति सङ्गुस्मैरस्वतैक्षीप्रयित्वा । शिप्त्वाओं देवताया विधिवदुपहितैस्तव गीतैः सुधन्त्रैः

क्रुयोद्रत्तां समीक्ष्य च्रायमिव वित्तयं याति दुष्ट्रद्रहासिः॥ नीराजनमन्त्रोद्धारो नारायणीये—

ं ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्ध्य स्कन्दो वैश्ववसस्या। रक्षन्तु त्वरितं वालं मुख्य मुख्य कुमारकम् ॥ १ ॥ कालगुणे।चरेंंं

पश्चाशाः-उस्वत्य-कवित्य-विश्वीदुव्यत्-वश्वाः । पञ्चयक्षाः स्मृता हाते बालानां वितकारकाः ॥ ३ ॥ स्नापितं भूषितं वालं क्षा ग्रुञ्चति सा प्रही । भयोगमाहे अपि

पत्ताशोदुम्बद्धाः ऽश्वत्यः विकव-न्यप्रोधं-पञ्जवाः । इथितेन कम्पयेन परिविञ्जेत्प्रप्रान्तये ॥ परिविञ्जेत् = खावियेविति सदनः । अस्य मन्द्रभ्य-कृतं नसम्बद्धापुरिके श्रव्यामियं किन्नते पूर्वसुकः । रज्ञामन्त्रः प्रयोगसारे-

रच रच महादेव ! भीलाप्रीव ! जटाघर ! प्रदेश्य सहितो रच ग्रुश्य मुख कुमारकम् ॥ १॥

अमुं मन्त्रं भूर्जपत्रे विकिक्श तत्पत्रं भुजे बश्नीयादिति मदमः ! बातकशिकास्वर्शपूर्वकं जपे मन्त्र उक्तः प्रयोगसारे—कृ सर्वमातर इसं त्रदं संदरन्तु हुरोदय २ स्कोदय २ स्वाद्वा २ यन्त्रं २ स्वर् युद्ध २ सामर्दय २ दिम २ हन । एवं सिक्ति बज्ञो क्राप्यति स्वाद्वा । अत्र होमोऽपि प्रयोगसारे—ॐ कूल्माविक भगवति ! सुरागिणि ! संमु-पिकते ! मुश्च २ दह २ एक सर् २ सच्छ स्वाद्वा २ ।

कृत्वा चतुष्पथे क्रुग्रहं मन्त्रेगाऽनेन मन्त्रवित् । त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा सहस्रं जुहुयासिलैः ॥१॥ यान्ति दुष्टग्रहाः शान्ति बलिना चाऽतुमे।दिताः ।

बाहरोदनपरिद्वारार्थं यम्त्रमुक्तं प्रयोगसारे—पढसं मध्ये ही-कारसम्बद्धे श्रिशोनीम विहित्य पटसु ग्रस्नेषु ॐ सुंजुव स्वादेति मन्त्रस्य पडक्तराणि विहित्य तह्न्दिमिव द्वितयं विहित्य तहि-हिरघोमुस्तरर्द्धचन्द्रैरावेष्ट्य पञ्चोपथारैः सम्पूच्य वासहस्ते बभ्नी-धादिति ॥

श्रथ बालग्रहरूतवः ।

मयोगसारे-मणम्य शिरसा शान्तं गणेशाऽनन्तमीरवरम्।

बालग्रहस्तवं वक्ष्ये समस्ताऽभ्युद्यभदम् ॥-१॥

तपसा पशसा दोप्त्या वपुषा विक्रमेण च।

निविष्टो यः सदा स्कन्दः स ने। देवः पसीद्दुः ॥ २॥

रक्तमाम्याम्बरघरे। रक्षगन्धानुलेपनः ।

रक्तादित्योज्ज्वलः शान्तिः स ने। देवः भसीद्दुः॥ ३॥

थो नन्दनः पशुपतेर्भातृष्णां पायकस्य च।

गक्रोमाकृत्तिकानां च स ने। देवः शसीद्दुः॥ ३॥

देवसेनापरिवृतो देवसेनाऽर्चितः सदा ! . देवसेनापतिः श्रीमात् स ना देवः मसीदद् ॥ ॥ म्राक्तिः शक्तिधराष्ट्रः कुमारः शिखिनाहनः। सुरारिहा महासेना स ना देवा प्रसीदतु ॥ ६॥ प्रकृत्या सुन्दरे। दान्ता देवैश्वयोदयान्वितः । नानाविनोदसम्पन्नः स ने देवः प्रसीदद्व ॥ ७ ॥ वबाधा सुप्रवाधा च बाधना, सुप्रवाधना । पदुदा च प्रवेशा च सुपीता सुपनास्तथा ।। द ।। मनाम्मजीति विख्याता योगिम्यः पान्तु बालकम् । सुवता रुविमणी चैव मन्द्रवेगा विभीषणा ॥ ६॥ विद्युजिहा महानासा शतानन्दा तथाअपरा ! बालदा ममदा चेति योगिन्यः पानतु बालकम् ॥१०॥ इरिंगी चाध्य वाराही वानरी क्रोध्हकी सथा। कुषेरी कोटरान्ती च कुम्भकर्णा च चयिदनी ॥११॥ वलाहिकारिणी चेति योगिन्यः पान्तु वालकम्। शुद्धा विशुद्धा श्रद्धा च योगासिद्धा पितम्बदा ॥१२॥ द्धभगा ग्रुभदा गौरी वलाविकरिखीति व । नानाविज्ञानविख्याता योगिन्यः पान्तु वात्तकम् ॥१२॥ सम्बा प्रसम्बा च तथा सम्बक्त चि सम्बक्त । ज्वालाकराली कालिन्दी कालिकेति वधेदिताः ॥१४॥ इवकब्दाऽऽचारसम्पना योगिन्यः पानतु बालकम्। मणीता सुपर्णीता च यात्रिनी विश्वपात्रिनी ॥१॥। निमला कमला माली केला रौदी च विरवदा । विवरन्त्यो यथा कार्म ये।गिन्यः पान्तु वालकम् ॥१६॥ बायुवेगा महावेगा सुवेगा वेगवाहिनी।

श्रानी हंसिनी हुष्टिः दुष्टिः पौद्यिकसिदिदां ।।१७॥ ' दिव्याञ्चभाषाबांहिन्यो योगिन्यः पान्तु वालकम् । भ्रमिनी भाषिनी निस्था निभिन्ना सुभगा ग्रहा ॥१८॥ ै क्लेंदिनी द्राविखीं वस्मा योगिन्यः पान्तु वालकम् । रुद्रशक्तिविनिष्कान्तमेकाशीति-क्रमोदितम् ॥१६॥ " योगिनीष्टन्दमेतद्धि सिद्धविद्याधराऽचितम् । स्कन्दग्रहाभिदेवं तद्वालकं पातु सर्वदा ॥२०॥ शङ्कनी रेनती देवी शिला च मुलमण्डिका। प्रसम्बा पूतनारूया च कटपूतनिका पुनः ।।२१।। विजया से:मुखी भूमा मुण्डमाला तथाऽपरा। अधीलम्बा च पद्मा च कुमुद्(ऽप्यथ चाऽम्बिका ॥२२॥ भानिनी चैत्र काली च देवी मेलंगुली तथा ! ऐन्द्री मार्जास्का भूवः कुरुणी च शुभाक्रशा ॥२३॥ महालराधिक्ष माया च छे।हिता पिलिपिञ्चिमा । भोतारणी चक्रवादा भीषणा दुर्ज्जवापरा 🏿 २४ ॥ शापनी फटकोली च ग्रुक्तकेशी महाबला । श्रहङ्कारी जया तद्ददजमेषा त्रिदण्डिका ॥२४॥ ंरेहिनो सुकुटाभिक्या शासाटा पिङ्गला तथा। शीतला .बालिनी .चैव तापसी पापराचसी ॥२६॥ मानसा धनदा देवी धलानावर्षिनी तथा। 🎺 यमुना जातवेदा च मानिनी कलहंसिनी ॥२७॥ बालिका देवद्ती च बायसी यक्तिणी तथा। स्वच्छन्दा पालिका चैव वासिनी चाम्बिकेति चगरदा। पश्चाशचु कुळे(स्पन्नाश्चतुष्पष्ठि समीरिताः । 🕡 ये।गिन्या निस्यसन्तृष्टाः ६कन्दाऽवस्मारदेवताः ॥३६॥

. नानारचापिकारस्या वालकं पान्तु सर्वदा । महालक्ष्मीरमेहातङ्का भहासेना महावला ।:३०॥ महाकम्पा महाभीमा महावेजा महात्सवा महासेना महाचएटा मोहिनी बीशनायका ॥३१॥ एकवीरा विशालाची सुकेशी सुमनास्तया। भुकेशिनी च सन्तुष्टा दखिडनो च विल्लम्बिनी ॥३२॥ भामिनी षाज्य सौवर्णी सिंहवनता कटक्किनी । भ्रमरा चश्चला चम्पा सिद्धिदा च तथाऽपरा ॥३३॥ ' शाते।दरी ष्टतिः स्वाहा स्वधारूया च सनातनी । शम्बरा च तथा देवी नीलग्रीमा तथाऽभ्विका ॥३४॥ वितला गन्धिनी वामा क्रीडन्ती चैव वाहिनी। कर्षिणी मालती फुन्ला कालकर्णी च चरिटका ॥३५॥ चित्रानसा ग्रहा चेति पार्वती सङ्गतिर्गता दैवतमिया ॥३६॥ पश्चाशस्त्रवसम्पद्मा शङ्कनी थे।गिन्यः कामरूपियये। बालकं पान्तु सर्वदा । विश्वन्तवा मभावज्ञा सर्वज्ञा सर्वगा ग्रहा ॥३७॥ दुर्गा सरस्वती ज्येष्ठा श्रेष्ठा पद्मा पराऽपरा प्रमद्रा रे।हिस्सी शीता पडी पडादिनी विका ।।३८।। मीतिः विभूतिर्विततिः मकुविमम(तेर्यया वता भगवता सृष्टा योगिन्यो योगसिद्धिदाः ॥३६॥ शक्तिगेददा । पश्चविश्वतिराख्याता रेवती जगदाप्यायनकरा बालकं पान्तु^र सर्वदा ।।४०)। *ॅनन्दश्चैबोपनन्दश्च गोमितः* सुमतिस्तथा । विद्यालिही गहाकालः करालस्तिमिकेश्वनः ॥४१॥ ित्रेज्ञहोहर विरुपाची गोग्रुली बदवाग्रुलः।

कालानमः कशलय शङ्ककर्णे विभीषणः॥४२॥ एते शकुम्द्रभोत्पना चीराः वेदश राश्वताः। पूतना देवता शुष्टा पालकं पान्तु सर्वदा ॥४३॥ पंजियो शक्तिनी चाट्या द्विटनी खद्रिनी तथा । पाशिनौ ध्वजिनी देवी गदिनी श्रुलिनी परा ॥४४॥ भविनी चकियी चेति सर्वाकारा भवपदाः। एता दिख्निर्मिता देख्या यागिन्या देवकी सिताः ॥४४॥ अधिभूतप्रधाना या पायात्सा शान्तपूतना। शसका मातरः सर्वी बालकं पान्तु सर्वदा ॥४६॥ . अधंकी जलकी भूमा छा। एकन्द्रभ की चितः। बीरेशाः पिरुभिः एष्टा नैजमेषाधिदेवताः ॥४७॥ 'भश्रद्यासिमधानास्ते. बालकं पान्तु सर्वदरः। आदित्या पसवा रहाः पितरा परतस्तथा।।४८॥ **श**नये। मनदः काला ग्रहयोगाः सनातनाः। सिद्धाः साध्याव गन्धर्या देन्यवा ब्प्सरसा वराः ॥४६॥ विचाधरा भहादैत्या बालकं पाम्ह सर्वदा। सहना बेरगजा चैव वीरजा मन्त्रजा तथा हरू। थे।गिन्यो श्रीगवनिता नामाविभवगोवए।ः। भवानी नाम सन्द्रष्टा बासकं पान्तु सर्वदा क्षेत्र क्षेत्र भूतोंके च धुवर्त्तोके खलोंके याश्र मातरा। भाष्योध्वं च तिर्यक् च क्रीटन्त्याज्नन्तमूर्चयः ॥४२॥ **मसभा**क्षेत्रसम्बन्धाः । दिन्यैश्वर्यसमन्विताः । स्यद्यन्द्रपद्सम्भूतैर्भैरदैः परिवारिताः ॥५३॥ . ९सान्तु बाह्यकं भीताः शान्तिर्भवतुः चेतसा 1 दिव्यं स्तेष्त्रमिदं पुर्णं वालरकाधिकारकम् वाध्रशः।

जयेत्सन्तानरसार्थः पालद्रोहोपशान्तिदम् ॥ इति पालस्तवः ।

इसं था क्तवान्तं छत्यमाद्यमासवर्षयोद्धितीयावि विनन्तास-वर्षेध्यपि कार्यं विशेषस्त्रस्यते — कुमारतन्त्रे-मधमे दिवसे मासे वर्षे वा योगिनी तदा । स्रयवा नन्दिनी नाम्ना पूर्वनाऽऽक्रमते शिशुम् ॥ १ ॥ तद्वग्रहीतस्य वालस्य व्यदः क्यात्प्रधमं ततः ।

गात्रशासभ नैवर्णये नाऽऽहारेस्वा धरां भवेत् ॥ २ ॥ वर्षि-र्मृच्छी च कम्यभ हीनव्यरयुतस्तथा ।

विधानं तत्र वक्ष्यामि येन मुखति पूतना ॥ ३ ॥ नदी प्रतिकदा क्रवीच्छे।भनां पुत्रिकां ततः।

शुक्रीदनं शुक्रमन्थस्तया शुक्राऽनुहेपनम् ॥ ४॥

शुक्रपुर्ववाणि वै पञ्च ध्वजाः पञ्च पदीविकाः । स्वस्तिकाः पञ्चपूर्वामे पूर्वस्यां दिशा संयतः ॥ ॥ ॥

वित् द्वादयो श्वेतसर्पोशीरमेव वा । शिवनिमस्यि-मार्जार-तृकेशास्त्रिम्बपत्रकम् ॥ ६ ॥

श्रावानमारूय-माजार-तृकशाश्राम्यपत्रकम् ॥ ६ र्गम्यं वृतं चेत्येतेन भूषयेष्टचैन मालकम् ।

एकं दिनवर्ध करना चतुर्थे शान्तिनारिया। ७।

स्नाववैद्वालकं प्रशास्त्रोजयेचापि भित्तुकम् ।

चीरेण भोजयेदेव मुस्था भवति बालकः ॥ दा।

ह्यान्तिवारियेति शक्त इन्द्राज्ञी शक्तो बात इत्याविकैः स्व-स्व-शाक्षापंडितैर्मेन्त्रैरमिमन्त्रितं बारि शान्तवारि । अथवा वद्यमाण्-भाषेण शतकुरकोऽभिमन्त्रितं वारि शान्तिवारि ॥ १ ॥

क्षितीयदिवसे आसे हार्यने वा धुनन्दन्त ।
 युद्धाति वृतना पार्ख ये।गिनी स्वस्तनाऽपि वा ॥ १ ॥
 तते। अवेडण्डरः पूर्व संदुोचे। इस्त-पादयोः ।

दन्तान्यस्वादत्यनिशं निमीलयति चच्चुपी ॥३॥ आहारं च न गृह्याति दिवारात्रं च रोदिति। श्रक्तिरोगं छर्दनं च भवेद्गीतिः पुनः पुनः ॥ ३॥ कुशत्वं च मनायेव इत्येविच्छशुलक्तणम् । त्तरहुलप्रस्थपिष्टेन विनिर्मायाञ्य पुत्रिकास् ॥ ४ ॥ प्रयोदश्ध्वजा दोपाः स्वस्तिकाय बले।दना । **प**स्थप्रवासायिष्टेन सिद्धापूर्वाय गतस्यकाः ॥ ५ ॥ मांसं चेत्येतदस्तिनं पश्चिमायां दिशि चिपेत्। पश्चिमार्यां च सन्ध्यायामेतश्चादिनत्रयम् ॥६॥ धूपशास्ति-स्नान-बाह्मखनोजनानि च पूर्ववत् ॥ २॥ 🧢 तृतीये दिवसे मासे वर्षे वा पूतनाSभिषा । मुद्दीवाद्योगिनी बार्ल ततः पूर्व ज्वरी भवेत् ॥ १॥ **म**स्थममारापिष्टेन पुत्रिकां कारयेचतः रक्षतीद्रनं ध्वजी रक्तः स्वस्तिकी रक्त एव च ॥ २ ॥ रक्तपुष्पं रक्तगन्थस्तथा रक्ताऽतुकेपनम् पश्चिमायां च सन्ध्यायाग्रुदीच्यां निचिपेद्वलिम् ॥ ३ ॥ भूपशान्ति-स्नान-ब्राह्मसमोजन नि च पूर्वेदत् ॥ ५ ॥ चतुर्थे इनि मासे तु वर्षे गृक्षाति वालकेत्। हुपनएडनिका माम पूतना चाऽय योगिनी ॥१॥ भीषणाख्या ततस्तस्य जायते भवमं ज्वरः । गात्रभक्को स्थितिर्मुद्धी वैवएर्य चाऽज्ञिमीलनम् ॥ २ ॥ वैक्षरुपं स्थापना श्वासः कासी रुचिरितिङ्गितम् । तिखपिष्टमयैः कत्वा पुत्रिकां विण्वकायटकैः॥ ३ ।। स्वाहं रूचयेरपुष्प-पुक्तं शुक्रध्वक्रीऽर्जुनः 🛒 सिस्तिकेरञ्जीमस्थासार्वे भक्तं । सावदपूरकाः ॥ ४॥

त्रिसन्ध्यं पश्चिमाऽऽशायां चित्तं दचास्पयरनतः । ताल्यक्षपका इति अर्ज्यप्रस्थपरमितेनाऽन्तेन कृता इत्पर्थः । मे।शृङ्गं सर्पनियोंनं लशुनं निम्बवत्रकस् ॥ ५ ॥ मनुष्यकेश-मार्जीर छे।मान्याज-धृतं तथा एतैश्र घृपयेदेकनिशि सन्ध्यात्रयेऽपि च ॥६॥ एकनिशि एकस्मिन्नेव दिने विलिरित्यर्थः । शान्तिस्नानमन्त्रव्यस्त्रक्षेत्रेजनामि च पूर्ववस् ॥ ४ ॥ पश्चमे दिवसे बासे वर्षे वा पूतना शिशुम्। , ब्रिटाखिकारूया गृहीयात्त्रथमं जायते ज्वरः ॥ १ ॥ हिका श्वासथ शूलं च गात्रभङ्गो रुचिस्तथा। निर्वायाऽधोरुपुतिकास् ॥ २ ॥ त्रण्डुलपस्थिपष्टेन शुक्लोदनं ध्वजाःपश्च स्वस्तिकाः पञ्च चे।उध्वलाः । पञ्च दोषास्त्रशुक्रानि कुसुमानि च चन्दनम्॥३॥ अपराक्षे दृत्तम्ले पश्चिमायां दिशि त्रिपेत्। धूपस्तु गोश्टङ्गं सञ्चनमित्याविकः । ह्यान्तिसाममन्त्रबाह्यसभोजनानि ॥ 🗴 ॥ वहेऽहनि तथा मासे हायने चापि नासकस्। शृक्कनीर्नाष गृह्वीयाचदनन्तरम् ॥ १ ॥ ब्बर स्ट्रेजनं गात्रे शोषः श्वासेऽक्विस्तया I काशकः इस्त-पादा-ऽज्ञिसङ्कोचरचेति सज्जाखम् ॥२॥ तरहुल्वगस्यिष्टिन विनिर्मायाऽय पुत्रिकास्। कुष्येष्रोदनं ध्वजाः पञ्च कृष्रणाः स्वस्तिकप≅ वकस् ॥ ३ ॥ कुष्णुमेबाध्य मत्स्यांश्र पायसं दुग्धमेव च । 🗸 चाऽपूरकास्त्वद्भमस्यविष्टविनिर्मिताः ॥ ४॥ गांसं पश्चिमायां निचिपेद्धतिषुत्रिकास् । पुत्रिकां पूर्वेवस्करवा प्रख्यां शूल्याचित्रम् ॥ ५ ॥

मत्स्याः पर्पदिकारचैव एकं च प्रस्थसम्बद्धम् । उदीच्यां पूर्वसम्ध्यायां बिहार्देयः भशान्तये ॥ ६ ॥

भभ वित्रदानयोर्विकत्यः । तयोरेव कालयोर्वातकस्य धूपी देयः गोश्टक्तलस्यमित्यादिकः । तथा शान्तिस्तातं आस्यामोजनं च ॥॥ मसिद्यनप्जायां मन्त्रस्तु—ॐ पद् २ स्वाद्वा ।

सप्तमे दिवसे गासे वर्षे वा शुष्करेवती।

गृक्षाति पूतना वालं ततः स्वात्प्रथमं ववशः ॥ १ ॥

गात्रभन्नोऽय विद्वेष आहारे कस्वरे।वने ।

इत्येतम्लक्ष्मणं तत्र विलिर्देषः प्रशान्तये॥ २ ॥

पस्यसम्मित्रविष्टेन सम्यक् कृत्वाऽय पुत्रिकाम् ।

सप्त प्राचाः सप्त दीपाः स्वस्तिकाः सप्त वैतया ॥ ३ ॥

पुष्पात्क मत्स्य-मांसं च मक्तः चेत्युद्गाहरेत् ।

धूषस्तु गोस्टक्लशुनमित्याविकः । शान्तिकानं शाहाव्यक्षेजनम् ।

मन्त्रस्त-भ ही कह स्वाहा ।

मप्टमे दिवसे पासे वर्षे चाऽऽक्रमते शिशुप् । विद्यालिका नामधेया पृतनाऽस्य ततो ज्वरः ॥ १ ॥ गामभेदोऽम हदितं रोदनं नेजमीलंबम् । फिहाशोषः शिरस्फोद आहारदेव एव च ॥ २ ॥ असिरोगो भवेदेतदिक्षितं वह्यहारिख्योतः । क्षयद्धलमस्यपिष्टेन पुत्तलां कारयेत्ततः ॥ ३ ॥ पायसं मधु-सर्पिश्च चीर-लाजाश्च शब्द्धलो । ग्रम्गुलुं मेवमांसं च तथा पर्पटिका आपि ॥ ४ ॥ घमनांसि, च रक्ताबील्येचं मन्त्रोदितेर चिलः ॥ ४ ॥ ममुं समाद्देतपूर्वं सन्त्र्यायां दिल्यादिशि ॥ कृष्याङ्कृत्मां वृक्ष्यमाया-मन्त्रेयाऽनेन स्रंयतः ॥ ६ ॥ ॐ नमो नारायणाय त्रैलोक्यबिद्धावणाय । ॐ हीं फट्स्याद्य । अनेनैव च मन्त्रेख पूजाविबलिहरणान्तं कर्म कुर्यात् । धूपस्तु गोम्ध्कः लक्षुनमित्याविकः । द्यान्तिकानं वाह्यणभोजनं च । अब इब्बल्यस्थां बिह्मरक्षमिति न नियमार्थम् । किन्तु कृति सम्भवे प्राशस्त्यार्थम् । अन्यथा तत्यतीचायां शिशुविनाशायनेः ॥ = ॥

नवमे दिवसे भासे हायने वाऽपि बालकम् ।

एखाति मदना नाम्नी पूतना तदनन्तरम् ॥ १ ॥

प्रवासि मदना नाम्नी पूतना तदनन्तरम् ॥ १ ॥

प्रवासश्च हृष्णता ।

गात्रभष्गश्च शूलं च चिहान्येतानि बालके ॥ २ ॥

प्रस्थमात्रेण पिष्टेन विनिर्माण च पुत्रिकाम् ।

श्रोदनं मत्स्य-मांसं च पर्पटी चेन्नुमृलिकाम् ॥ ३ ॥

निचिपेत्पूर्वसन्ध्यायामुचरस्यां बर्लि दिशि ।

अत्र मन्त्रः—ॐ नमो भगवते वासुदेवाय स्वत्यमण्डले वित्रमा-दाय हर हुं फद् स्वाहः । धूपस्तु गोश्टक्कलसुनमित्यादिकः । शान्ति-स्नानं ब्राह्मणुभोजनं च ॥६॥

दशमे दिवसे मासे द्दावने वाऽप वाशकम्।
पूतना रेवती नान्ना ग्रश्वीयाद्वालकं ततः ॥१॥
प्रवरः व्यदिः कास-श्वासौ ग्रुलं चेत्येतदीरितम्।
पत्र द्देष्य तत्राऽयं विवर्देयो विषयणैः ॥२॥
प्रस्थमगाणिष्टेन पुत्रिकां तत्र प्रकल्ययेत् ।
प्रशाः लेखयेत्तन विन्वद्वत्तस्य कपटकैः ॥३॥
गुडादनं च सर्विश्र घ्वजानां पत्र्विश्रतिः ।
स्वरितकानां प्रदीपानां पश्चविंश्रतिः ।
सत्वारि रक्तपुष्पाणि क्षेतद्विणदिग्गतः ।
सन्ध्यात्रये वस्यमाण-मन्त्रेणाऽनेन निव्विषेत् ॥ ॥ ॥

भत्र मन्त्रः—ॐ नमो भगवते वासुदेवाय इत्य हुं फट् स्वाहा । धूपो गोश्टक्तस्थनमित्यादिकः। शान्तिस्नानं ब्राक्षणमोत्रनं च ॥१०॥ एकादशदिने मासे दायने पूतनाऽधिका ।

गृद्धाति वालकं पश्चाज्ज्वरस्तस्य प्रजायते ॥ १ ॥

श्रश्चद्देषो मुले शोषो गात्रभङ्गश्च रोदनम् ।

अध्यदृष्टिरपीत्येतम्लक्षणं तद्गृहाच्छिशोः ॥ २ ॥

पुत्रका माषपिष्टेन रिचत्वा शुक्कमोदनम् ।

पुत्रकानां पदीपानां पश्चविंशतिरेव का ।

प्तरक्षवी यमाशायां सन्ध्यायां मातराहरेत् ॥ ४ ॥

श्रम मन्यः—ॐ नमो भगवते ताराय प्रन्तृहास-श्रमहरूताय ज्यस हुष्ट्रमहाय ॐ फद स्थाहा । धृपस्तु-गाश्वन्नसञ्जनित्यादिकः । शान्तिस्नानं ब्राह्मस्थात्रनं च । प्रथमदिवस-सास-श्रमगृहीतपूतनाह-

रोक्तं द्रष्टब्यम् ॥ ११ ॥

द्वादशे दिवसे मासे वर्षे या पूतना शिशुम्।
अद्भुतारूपा प्रमुहाति चनरः स्थात्मधमं ततः ॥ १ ॥
रे।दनं सर्वदा दन्त-खादनं रक्तनेश्रता।
रे।माञ्चास्ताप इत्येतदखिलां तस्य लक्षासम् ॥ २ ॥
तस्बुलप्रस्थपिष्टेन कृत्वा तन्त्राम पुत्रिकाम् ।
त्रयोदश स्वस्तिकारचा ध्वजा दीपास्रयोदश्र ॥ ३ ॥
त्रयादश स्वस्तिकारचा ध्वजा दीपास्रयोदश्र ॥ ३ ॥
त्रयादश स्वस्तिकारचा ध्वजा दीपास्रयोदश्र ॥ ३ ॥
त्रस्त्रमं दक्षितस्यां दिशि मन्त्रेस निक्षिपेत् ॥ ४ ॥

मन्त्रस्तु →ॐ नमो नारायखाथ उबस बजहस्ताय हर हर शोषथ २ मर्दय २ पातय हन दन दुष्टसत्वानां हुँ फट्स्वाहा । गोन्ध्ऋ-मित्याविको धूपः । शान्तिस्नानं ब्राक्षणभोजनं च ॥ १६॥

अथ बौधायनोक्ता ज्वराद्युत्पत्तौ शान्तवः।

ं अतिपद्धि कष्टं सम्बेदो या दिनान्यद्वादशः । अञ्चित्वताः सक्षिर-स्मीति प्रवासन्तः । दैमीप्रतिमा । चृत-धूपो चृत-दीपश्च । यथान्, सम्मवं नैवेचं घृतं होमद्रश्यं शास्तिर्भवति । अत्र सर्वत्र शक्मं तत्त्व-चिथिदेवतामन्देजवः। सहसादि-सङ्ख्याकः प्रमात्पृजा-होमदानादि-होमसंक्षा चाऽष्टोचररातारिज्याभितारतस्येन कल्पा । सहस्र सूत्युनिर्देशः ॥ १ ॥ द्वितीयायां विमानि चोडश असा वैदता अस-जवानमिति जप-पूजा-दोममन्त्रः । चगुरुपूरिः घृतवीयः सरवज शर्करानेवेचं तिल-यवा-ऽऽज्यानि होमद्रव्यं प्रतिमा च हैमी ॥२॥ द्वतीयायां दिसानि नवपार्वत।देवता गौरोमिंमायेति मन्त्रः । दुर्वाभिः पुत्रा क्रम्कुम-भूषः । गुग्गुलुर्वा भूषो पृतवीपः । जान्ना-कीराऽऽज्य नैवेचम् । पायसं अभुराकं दूर्वास होमद्रन्यं प्रतिमा हैमी ॥ ३॥ चतुर्थाः विनानि बोडरागगपतिर्वेवता गणानान्वति पूजा होमादि-मन्तः । देवीप्रतिका कुळ्कुमं रक्तचन्दनं गन्धः करबीरादीनि पुष्पावि अनुवर्ष् पो पृतदापो सह्युका रह्युक्तवानि नैवेदं नारिकेर-श्रक्षतानि कदतीफलानि च होमहत्त्वम् ॥ ४ ॥ पञ्चन्यां विनान्येक-विगतिर्मागः देवताः हैमीप्रतिमा भमोऽस्तु सर्पेभ्य इति मन्तः । चन्दर्न गन्धः सुरभियुन्पाणि धृत-धृपः पया नैवेशं तिल-ववाऽऽज्य-पायस-शर्भरा-मधुनि यथायोगं होमद्रव्यम् ॥ ४ ॥ पष्टशां दिलानि हाइस स्कन्दो देवता इप्लक्ष स्कन्देति पुत्रामन्तः । पीतं चन्दन रक्षं वा गम्बः रकानि पुष्पाचि जातीपुष्पाचि था । जटामांसी धूपः । सर्दुकाचिनैवेदं फलानि वा तिस्यवाऽऽज्यं होमहत्यं देशीप्रतिमा शान्तिर्भवति ॥ ६ ॥ सप्तस्यां दिनान्यष्टी दिनगाथी देवता । आस-त्येष भाकृत्योनेति वा मन्त्रः । हैमी शास्त्रता वा मतिमा कुक्कुमं साम्यः करबीराक्षेत्रि कुच्याचि गुन्गुली चूपः ग्रर्कराष्ट्रतसंयुर्व पायसं नानाफतानि च नैवेद्यमर्कसमिधः पायसं हामहब्यम् ॥ ७ ॥

शहरवां विकानि वयोवया ईश्वरो देवता समाशानमिति पूंजा-भग्नः। धातती मितमा कर्पूरमिश्रित चम्बनं गण्यः विश्वदकानि सर्वयुष्याचि नार्ज्ञात्यकानि च पुष्याचि । अटामांसी धूपः पायसं नामभन्नास्य नेवेचं मधुराकास्तिका होमदक्यं छान्नशान्तिर्भवति ॥०॥ वयस्यां विकान्यश्वर्थः भगवती दुर्गादेवता आतवेदस दित पूजा-भग्नः । दैनीप्रतिमा रक्षं चन्दनं गम्बः कुक्कुशादिकं दा। अपा-कुश्चमादिकं पुष्यं शुग्गुलुधूंपः घृतपकं नेवेचं विमधुरार्कं पायस्यं होसद्वर्थं देव्यं दिवनकपानदानं तन्नकाय वा॥ १ ॥ दशस्यां दिनानि पञ्चिषिश्वतिः यसो देवता हैमी सौद्दी वा प्रतिमा यमाय त्येति पृजा-मन्त्रः। चन्द्रनं सृगमद्श्य गन्धः मधुसन्त्रौरसञ्च धूपः तिस्ततैस्त्रदीपः। बिल्वपत्राणि कृष्णतिलाश्च पुजाद्रव्यं कृषातत्रं नैवेदं घृतं मधु-तिल-मुहुगा होमद्रव्यम् ॥ १०॥ एकादृश्यां दिनानि सप्त विश्वेदेशः देवता विश्वे देवास इति मन्त्रः हैमी प्रतिमा श्वेतचन्दनगन्धः कृष्णाऽगुरु-भू पः घृतदीयः तुल्लक्षीपत्राणि पूजायां यदमोदकं नैवेदां तिल-यद-मन ष्याज्यं होमद्रश्यम् ॥ ११ ॥ ज्ञादश्यां दिनानि दश रुद्रो देवता या ते रहेति मन्त्रः । हैमीश्रतिमा चन्दर्न श्रीखएडं बगुरुष् पो पृतवीपः पा-यसं नैवेदां चम्पकं पुष्पं कमलं वा । पूआयां तिल-पवा-55च्य-मीहि-मञ्जूति होमद्रव्यं शान्तिभेनति ॥ १२ ॥ त्रयोषस्यां दिनान्यष्टी शशी देवता रीक्सी राजती वा मूर्तिः आप्यायस्वेति मन्त्रः। पूजादी श्वेतखन्दनं गन्धः चन्दनधूपः घृतदीपः। द्रधि-शर्करा-नैवेशं तिल-यदास्त्रिमस्वका होमद्रस्यं शान्तिभवति ॥ १६ ॥ श्रतुर्देश्यो विनानि द्वाविशतिः शस्भुर्वेवता शस्भवायेति मन्त्रः । रीवसी राजती वा मूर्तिः स्वेतचार्यमं गन्धः, अर्कपुष्पं विल्वदलानि वा अगुरुष् पा पायसं नैवेचं त्रिमध्वकास्तिला होमद्रम्यम् ॥ १४ ॥

श्रमायां दिनान्यए।दश श्रचीदेवता होता यश्चदिति मन्त्रः। हैमो प्रतिमा कुञ्कुमावि गन्धः नानासुगन्यपुर्वाणि छ्वणाऽगुरुध्रुपः फेलिका-पुरिकादिनैवेदं शर्कराधृतपायसं होमद्रव्यम् ॥१४॥

पूर्णिमायां दिनानि घोडश चन्द्रो देवता दशककं पूजार्थमम्बरसर्वे प्रयोदग्रीमान्ताञ्चकं प्राह्मम् ॥ १६ ॥ वि. दोवग्रान्तिः ।

श्रयाऽऽश्वलायनोक्ता वारशान्तिः ।

आदित्यवारस्य बद्दो देवता या ते बदेति सन्त्रः हैमी शक्तती भा मूर्तिः चन्दमं धन्धः अगुबधू पः धृतदीपः पायसं नैवेद्यं होस-द्रुव्यं च ॥ १ ॥

सोमधारस्य पार्वतीदेशता गीरोमिंगायेति मन्त्रः हैमी राजती या मूर्तिः कुञ्जूकमगन्धः सुगन्धिपुर्वम् । अगुरुधूपः । पृतदीपः । नानाभक्याणि नैवेधं तिस्वया होसद्वस्य देवसकसन्दर्भेणं च ॥ २ ॥

भीमस्य रक्तन्दो देवताऽस्यत्सर्वं वष्टीशान्तिवत् ॥ ३ ॥

बुघगरस्य विष्णुर्चेवता विष्णो रराटमसीति मन्तः। हैमं स्वरूपं पीतश्वन्त्रमं पीतपुष्पाणि कमलानि च अगुरुधू पो छतदीयः यब-सब्दुका नैवेदां तिल-यबा ऽऽज्यहोमः॥ ४॥

गुरुवासरस्य ब्रह्मादेवतः ब्रह्म जङ्गानमिति मन्त्रः । हैमी प्रतिमा कुरुकुमगन्धः पर्णपुष्पं गुग्गुलुर्धूपः शर्षराऽऽज्यं नैवेदां तिल्ल-यब-

घानर घृतं होमद्रस्यम् ॥ ४ ॥

श्रुक्षवासस्य इन्द्रो देवता वातारमिन्द्रमिति मन्त्रः हैमी राजती वा मूर्तिः चन्द्रनं गन्धः चम्पकं पुष्पं धगुरुधूपः धृतपक्षवं नैवेधं

तिल-यषाऽऽज्यं मधूनि होमद्रव्यक् ॥ ६॥

शनिषारस्य यमो देवता यमेन दचमिति मन्त्रः हैमी लौंदी,बा मूर्विः । ताम्रजेति केचित् । चन्द्रनगन्धः पुष्पं रुष्णां मधु भूपः तिन-तैषदीपः । मधु-मत्स्याभ नैवेध तिला मधु च द्दोमद्रव्यं सान्ति-भेषति ॥ ७॥ इति बारशान्तयः ।

श्रथं नचत्रशान्तयः।

ष्टद्वशिष्ठः-रोगशान्ति प्रवस्यामि रोगार्त्तानां शरीरिखाम् । वितपुजाङ्गहो मैरच जपबाह्मसमोजनैः ॥ १॥ यस्मिन् विष्यये यदा नृष्णं रागः सञ्जायते तदा । तदिव्ययपुत्रा कर्त्तव्या त्तत्तदीरवरतुष्टये ॥ २ ॥ ममारोन तद्द्धिंऽर्द्धेन वा प्रनः। सुपर्धेन विष्यवेशमविमा **करू**या वथाविचानुसारतः ॥ ३ ॥ ईशान्यामथवा बाच्याग्रदीच्यां दिशि संतिखेत्। त्तरहुळे।पर्यष्टदश्र पृथ गोमयमर्ह्छके पश्चामुतैः सक्षेपेश्च तसन्मन्त्रैः पृथक् पृथक् । स्ताप्य कल्पे।क्तमन्त्रेण प्रतिमां स्थाप्येत्युनः ॥ ४ ॥ किंग्रामा सुसंस्थाप्य ध्यात्वा देवं सवर्षयेत् । तद्दर्णवस्रगन्धारी रक्तभूषे।पहारकैः मारक्तवर्णी झुम्भं च प्रश्नत्वक् प्रस्तवेयुंतम्।

शुक्रवात्त-स्वर्णेरत्न-सर्वीषधि-सपन्वितम् ॥ ७ ॥ मृत्वश्च मृच्य-सद्दोज फल-चौद्र-ब्रुशान्वितम् । देवस्य पूर्वतः स्थाप्यं जलपन्त्रैः समर्वयेत्।। मा मतीच्यां स्थिपडळे वहिं विधिवतस्थापयेत्रातः । मुखान्ते जुहुवादुक्त-द्रव्येणाऽष्ट्रसहस्रकम् ॥ ६ ॥ तिल्होमं व्याहृतिभिर्व्याशरसङ्ख्कम् पूर्णाहुति च जुडुयात्सम्यक्-जवादिपूर्वेकम् ॥१०॥ कतः शुद्धोपनिष्टस्य रेशियः माञ्चालस्य च। मन्त्रपूर्तः कुम्भजलीरव्सिक्क्यूवर्शरमन्त्रकः ॥११॥ मार्जने काश्येशस्य सम्यक् सङ्करपूर्वकम् । नीराजनं च शुद्धात्मा पूजास्थानं समागतः ॥१२॥ देवं हुताशनं अक्तया मसम्य मार्थयेदिति। श्रमृतोद्भवधिष्ययेश । यतस्त्वं शङ्करात्मकः ॥१३॥ रोगादस्माच मां रच तव वश्यक्ष विष्ण्यकः। इति मार्थ्यं तता दद्यात्मतिमा नस्नसंयुतास् ॥१४॥ क्षिणासहितां भक्तचा आचार्याय कुटुन्बिने । बाह्यसम्य यथाशक्तथा बाह्यसान् भेजनेत्रतः । १५३। नचत्रपुजान्तं विधिवासस्योरपि । सर्वान्कामानवाभोति रागी रोगात्मग्र्च्यवे ॥१६॥ धाविन्यामुस्थितो व्याधिर्नवरात्रेण सुअति । देवस्य स्वेति धन्त्रस्य गायत्री कश्यपीऽश्विन्दी ॥१७॥ श्वेतवर्णी छुवापूर्ण-कलज्ञामभाजधरी पृथक्। चन्द्नेग्रश्च-पुरुषा-४ऽचय-गुरगुखी ह गुरमियी ॥१६॥ सीत सर्हकभाकारी समिषः चीरहचनाः । ग्रहोदनप्रक्षि द्वादीयैः सार्द्ध निशास्त्रे अद्या(१)

भरएयाम्रुरियते। ध्याधिरचिराभिधनशदः). मासेन मुजात्यथवा दैवस्य हुटिखा गतिः ॥२०॥ वैयम्बकस्य मन्त्रस्य मोक्कारखन्द्षिदेवताः । गन्थोऽगरुकरवीरं पुष्यं भूषथ गुम्मुलः ॥२१॥ अष्टदीपं च सर्वेषां नैवेद्यं च गुडौदनस् । पाशद्यहवरो रक्तस्त्वाज्य-मध्वाचतैईविः ॥२२॥ ्रमहिपीनायकारुटः कुसराश्चं वर्ति हरेत् । वक्ष्यमाणेन मन्त्रेश वर्शि सम्वक् प्रदावयेत् ॥२३॥(२) कृतिकासूरियते। व्याधिर्देशरात्रेण सुरूचति । सुक् सुवाभयवरदः स्ववर्णी मेषवाहनः ॥२४॥ मेधातिथिर्जगत्यमी पुनन्तु गापित्यस्य च । चन्दमं यथिकापुष्प-घृत-दीषः सुग्रुग्गुलुः ॥२५॥ नैवेर्च तिलागात्रं वरकाश्रेन संयुदम् । गुडे(दर्न इविस्तत्र पायसेन बलि इरेत् ॥२६॥(३) रें।हिएयाप्रुत्यितो व्याधिर्दशरात्रेण ग्रुञ्चति । नमा अहारामन्त्रस्य गायशीविधिरीश्वरः ॥२७॥ शुक्राः - कमग्रहतुस्त्यत्तं -सूत्राभयवरमदः चन्दर्न कपर्ल गुष्पं सदशाङ्गं च ग्रुम्गुलम् ॥२००३ ः नैनेखं पायसं साउडच्यं सर्वदा तैई विभेषेत् े। द्धि-चीर-छुत-चौद्र-शास्यक्षेन बर्लि हरेत् ॥२६॥ (४) भन्त्रमे चेाल्यितो व्याधिः एष्टचरात्रेण पुष्टचति । 🥜 गदावरदपाणिश्र श्वेतो सौरथदाहनः ॥३०॥ त्रवे। नवे। भवत्यस्य नायत्री गौतमः श्राती । चन्दनं क्रमुदं पुष्यं दशाहं पायसादनम् ॥३१॥ नैष्ठेषं भगडका-ऽपूप-घृत-जीदसम्मितस् ।

शुर्करा-दक्षिपश्चेण शुक्राक्षेत्र वर्ति हरेत् ॥३२॥(५) आद्वीयाद्वत्थितो व्याधिरचित्राविधनमदः मासेन मुझत्यथवा दैवस्य क्वटिला गतिः ॥३३॥ शुंद स्फटिकसङ्काश-शूलखड्गाभयेष्टदः नमः शक्रुरायेत्यस्य बृहतीको विधी ऋषिः ॥३४॥ चन्द्रनं सौरभं पुष्पं दशाक्षं पायसोदनम् । स-मध्याक्यं इविस्तत्र दध्योदनवति इरेत् ॥३४॥(६) श्रुतर्वसी भवेद्रव्याधीर्नवरात्रेख ग्रुड्चति । कमएडन्बन्स्बेध्पदर्भासुक्सुवशृत् सदा ॥३६॥ श्चदितियौँभ मन्त्रस्य त्रिष्टुभो हुहिएगोऽदितिः। हरिद्रान्त्रङ्कुर्म गन्धं प्रुष्पं सेवन्तिकाह्यम् ॥२७॥ धृपी मलयमं पिष्टं घुतान्नं पीतवर्शीकम् । घुताकतपद्धताइविः पीताऽश्रेन वर्ति हरेत् ं ।।३≈।।(७) पुष्पे सम्रुत्थितो ज्याधिः सम्रुरात्रेण मुजाति । पीतो दश्ड कमण्डन्वत्त - सूत्राभयवरीद्यतः ॥३६॥ श्रृहस्पते प्रीस्थस्य त्रिव्हुप् जीवोऽङ्गिरा ऋषिः । कुकूमं वारिजं पुष्पं नैदेशं पृतपायसम् ॥४०॥ मएटका-मुबसंयुक्तमेतदेव इविभवेत् समग्रदक-चृतास्त्रीन धर्ति तथ मदापयेत् ॥४९॥(८) श्रारखेवास् त्थितो न्याधिः क्रेशान्यासेन गुरुचति । नमो श्रस्तिवि मन्त्रस्य विराडम्निश्च सर्पराट् ॥४२॥ मधुवर्णी भोगयुक्तः खद्रवर्षधरः शुभः सकुङ्कुमाऽगरुर्गन्धपुरुषं चाऽगस्तिसम्भवस् ॥४३॥ श्रुत ग्रुग्युल-धूपोऽत्र नैवेद्यं श्रीर-सर्पिषा । ह्विः साज्यं मुद्रध्यन्नं दृष्ट्योदनवर्ति हरेत् ॥४४॥(१)

बधार्या चोत्थितो ज्याधिरचिराविधनप्रदः । भथवा सार्द्धगासेन धूम्रो द्रग्डववित्रपृष् ॥४४॥ अस्यन्तु नस्त्वित चाऽस्य जगती वितरोचनः। चन्दनं चम्पकं पुष्पं धूपः समृत ग्रुग्गताः ॥४६॥ नैबेयं घुतिषष्टानं तिला पं सघुतं हविः सतिलान्नं च मुहुगान्नं बृत्तिं च वितृतुप्तये ॥४७॥(१०) पूर्वाफान्यने व्याधिरर्द्धमासेन मुश्चित । भग एव भगवानित्यस्याऽज्ञुष्टुप् भगो विश्विः ॥४८॥ वथाऽभयकरः वद्य-वर्णः सिंहासने स्थितः। चन्दर्न पालतीयुष्पं विन्य-दीपो धृतोदनम् ॥४६॥ नैबेशं शर्कराय्यलह्डकाभिश्व संयुवम् । छतोदनं इविस्तत्र पायसेन वर्ति इरेत् ॥४०॥ (११) मार्यमर्ची भवेद्वव्याधिरद्वमासेन मुञ्चति पद्मवर्णः पश्चसंस्यः पद्मगर्भसमयुतिः ॥४१॥ अर्थमायाति मन्त्रस्य अर्थमा त्रिष्टुवक्वनः । कर्पूरं कुङ्क्कमं गन्तं पुष्पं धूपकसंज्ञकम् ॥॥२॥ बृह्य-गुगाुल-धूपे।ऽत्र नैवेदं घृतपायसम् हेरमद्रव्यं घुतां इसं स्वाच्छान्यक्षेत वृक्ति हरेत् ॥४३॥(१२) इस्ते सम्रुत्थिता व्याधिमवरात्रेण ग्रुक्चित । बदुस्यमिति हिर्यवस्तुपे। गायञ्याऽदितिर्जपेत् ॥५५॥ र्जगन्धं कुरुक्षमं च प्रूष्णं राजीवसंबद्धम् । स-गन्धग्रुम्युको धूपे। नेबेर्च छुतेपायसम् ॥४४॥ मधुपुष्पं तिला-ऽऽज्या-मं द्वीभिः सहितं हविः। गुड-शाकर-मध्वाज्यविष्टाऽब्लेन नर्जि हरेत् ॥५६॥ (१३) चित्रायाम्रुत्यिता व्याधिर्दशस्त्रवेश मुञ्चति 📗

चित्रं देवानावित्यस्य त्वष्टाञ्जुब्दुष् वितामहः ॥५७॥ प्रसुत्राभवकर्श्विववर्णः शिवे रतः स-कुङ्कुगाऽगरुर्गन्ध-कुसुगं चित्रवर्णकम् ।'५८॥ नैवेद्यं मोदकान्नाऽऽज्यं किन्नाऽननं स घृतं हविः। सदन्नेन बर्लि द्यात्सर्वरेगगवनुत्तये । ५६॥ (१४) स्वात्युत्ते चेात्थिते। व्वाधिः सर्वदा निधनपदः । एक-द्दि-न्नि-चतुः-पञ्चामासैर्बाऽपि विग्रुङविति ॥६०॥ स नः पितेति मन्यस्य गायत्री मरुदङ्गिराः। स्नद्गनर्मधरः कृष्णा गन्यः कृष्णाञास्ध्रीशम् ॥६१॥ पुंष्पं दमनकं भूषा जन्दनाञ्चक्रमुग्युलुः । नैवेर्चं पायसं साउँउच्यं इविस्तेन विलं हरेत् सद्शा(१४) हिंदैक्ये भवेड्व्याधिमसिनैकेन सुआति । इन्द्रांग्री आगतमिति गायत्री वाञ्स्य चैत्र हि ॥६३॥ मञ्जूब्द्धःद ऋषीन्द्रामी तथे।ध्यीनं दा पूर्ववस् । श्रीखण्डकुङ्कुमं मन्धं तयोः पुष्पं सरोक्हम् ॥६४॥ देवदारुस्तयोश्चिम नैवेद्य भृतपायसम् । तदेवाउन्नं इविस्तत्र जित्राउन्नेन वर्ति इरेत् ॥६४॥ (१६) मित्रभे चे।स्थितो व्याधिर्दशरात्रेण मुख्यति । वित्रस्य चर्षेणीरेति गायची चाउस्य चौब हि ॥६६॥ अर्धिपर्हिरएयस्तृपाख्यस्तत्र . मित्रोऽधिदेवता । द्विश्वजः पद्ममर्भाभः पद्मभृत् पद्मसंस्थितः ॥६७॥ कुङ्कुमं पुरुदरीकारूयं पुष्पं घूपं च चन्दनम्। नैवेद्यं पायसं साऽऽख्यं हविः कन्दं च सूरणम् ाहिता। 🔆 🗸 बेखिस्तत्र अयातव्यो मञ्जू-शर्कर-पायसम् 🃜 🐃 धृत-पूरक याचा उन्ने मुद्दगमभैथ संयुत्तम् निद्दशा(१७)

क्येष्ठायामुत्थितो व्याधिर्मृत्युरेव न संशयः । अथना मासमेकं ना मुञ्चत्येय न संशायः ॥७०॥ इन्द्रं च इति भन्त्रंस्य गायत्रीन्द्रोऽङ्गिरा ऋषिः । इन्द्राय पूर्ववद्गान्धं च चन्दनं कुछुमं शुभम् ॥७१॥ कर्पूरधूर्वो नैवेदं वित्राडम्नं सुमनोहरम् । इविस्तु सुरखं कन्दं मधु-कन्दं सुपायसम् ॥७२॥ विचित्र-पुष्पगन्धेन दध्यक्षेत विश्वि हरेत् । (१८०) मूलभे चौरियतो ध्याधिर्मासाऽद्धेन विमुत्राति ॥७३॥ स्वङ्गचर्मधरः कुष्णः करास्तवदनः पश्चः । मोबुलोऽस्य च गायश्री घोरः कण्वोऽय नैऋतिः।।७४॥ मन्धः कुच्छाऽमरः युष्यं १वं नीलोर५सं शुभम् । घूपः कृष्णाऽनस्मीषमिश्रासञ्चपहारकम् ।।७५॥ त्रदेवाऽस्त्रं इविस्तत्र प्रापाडन्नेच वर्लि हरेत् । षारिभे चोस्थितो न्याधि रोगिला निधनप्रदः ॥७६॥ विग्रुज्ञत्यथवा मासैद्धि-त्रि-षड्-नव-सप्तभाः आप्यायस्वेति मन्त्रस्य गायशी पद्मनो जलम् ॥७७,। सुवर्णो द्विश्वनः पद्म-पाणिर्गन्यस्तु चन्दनम् । पद्मं शैलेव-धृपोऽत्र नैवेद्यं छतपायसम् ॥७८॥ इविमेस्रिपिष्टामं तदसेन बर्लि हरेत् । (२०) विश्वभे चोत्थिता व्याधिः सार्द्धमासेन मुश्चति ॥७६॥ विश्वेदेवास इत्यस्य गावश्र्या निश्वदेवता । क्रमग्रहल्बभयाम्भोजवरदश्य क्रशासनः चम्दनं कमलं पुष्पं धूर्पं सपृत-शुग्गुलुः। नैबेदं पायसाऽऽज्यामं इविरुप्येतदेव हि । 💵 ి 🛚 समिज्ञिनि चुलीः सार्दे सदकोन निर्ति परेत् । (२१)

श्रवणे चोत्थितो व्याधिर्दशराश्रेण **मुश्रति ॥८२**॥ इस्तो दैवेति मन्द्रस्य गायत्री पद्मत्रो इतिः। पीसाम्बरः कुरुतवर्ताः शङ्गचक्रगदाम्बुजः ॥ध्दे॥ चन्दर्भ मास्ततीपुर्ण धृ्यः कर्पूरगुजाः । शाल्यकं वड्सोपेतं अक्य-भोज्यादिभिः सह ॥८४॥ नैभेशं इतिरप्येतत्शायसेन वर्लि हरेष्ठ् । (२२) ं बसुने चीत्थिती व्याधिर्दशाराधिण मुश्राति ॥४४॥ शपन्ताभिति मनगरपाऽतुष्दुष् व्यासो वसुस्ततः । चाप-वाकाधरः शक्तमन्धं कर्पूरं-चान्दनम् ।]८६॥ धारितं गुग्गुलुर्पूगो नैवेशं धृतपायसम्। इविमोदुक्वर-समिद्-गुढे-पायससंयुतम् ।।=०॥ सहदुका-चुप-मध्वापय-तिश-पिष्ट्रपक्षि इरेत् । (२३) बारुणे चे।त्यिता स्याधिरष्टरात्रेण मुश्रति ॥ध्या। इर्ष मे वरुण इत्यस्य गायत्री कण्डवारिषः। . नाग-पाश्रधरः श्रीमान् वररस्नविभूषितः ।।द्धाः। मक्रदेशे ग्रुक्तेन्यः पुष्पं च कमछेत्वसम् । कर्ष्रं धन्दर्भ धूपा नैवेध धृतवे।शिका । १६०।। क्ष्मिरश्वत्यसमिधश्रित्राज्न्मेन वृत्ति इरेस् । (२४) अजगान्ने भवेद्रव्याचिः सर्वदा निधमपदः ॥६१। प्रस्वा बहुभिमासैदिवसैर्वा विश्वश्वति । वामपादकर्ष भूरपामाकाक्षे स्वपरद्वयम् ॥६२॥ भसार्थ माञ्जलिः साद्वादी वरं विन्तयेतिस्वतः । श्रामग्रिरिहथस्याञ्चविद्यायधीचतुराजनः ।१६ दै।। इतुर्व चन्द्रनं यन्त्रं पुरुषं अनेतापीसक्यव्यः। ि श्रृता शाहीयथी विजी सैयेक अपन-मध्यसक् अहे क्षेत्र

हिनः कृष्णायह-गत्थः स्याइध्यन्नेन वित हरेत् । (२४)
अहिर्युध्ये अवेद्र्व्याधिः सार्द्यमसेन मुश्राति ॥६४॥
नमस्ते कृद्र इत्यस्य सर्वे तत्रैन संस्थितम् ।
गत्थ-वन्दन-कपूरैः पुष्पं पद्योत्पत्तं सुभम् ॥६६॥
स-वित्य-गुग्गृत्तु धूपा नैनेयां घृतपायसम् ।
भृदुग-माप-तिलाकाष्ट्य-यन-त्रीहिमयं हिनः ॥६७॥
पूषा च देवताम्भाज-वर्णो भोजधरं शुभम् ।
रक्षवम्दनगन्भाऽत्र पुष्पं मन्दार-संहकम् ॥६८॥
धूपस्तु गुग्गुतुः साज्या नैनेयं घृतपायसम् ।
इनिस्तदेव स-जलं द्ध्यन्नेन वित्यं हत्यायसम् ।
धूतिशाद्भगतो यस्प्रद्रोगनाथमहाक्वरः ।
रेगादस्माच मां बाहि त्वं मुहीत्वे।चमं वित्यम् ॥१००॥

कमसम्बद्ध गद्धन्याशिकानेषु यमप्रदेषु प्रत्यरेतेषकतार-केऽग्रमसम्बद्धे रोगोत्पत्ती मृत्युः । रचि-ममा-द्रादशी-सोम-विद्यास्त्रका-दर्शता भीमा-ऽऽद्री-पश्चमीनां मुखासरायादा-स्वतीयानां सुरु-स्वतिम-यक्ष-बद्दीनां सुकाऽभिन्यप्रमीनां शकि-पूर्वापादा-स्वयीनां स्व न्यादो सुरुष्ट्यः । अरवपत्तुराधा वा सन्त्रे, मार्गोस्यपादा वा सोमे, नमा शाविष्या सीमे, बांश्यनी विशासा सुने, ज्येष्टा सुगसिते वा सुरी, स्वया सार्शने विश्वासा सामे स्वति।

ष्मय तिथि-बार-चेंद्र साधारखः मयोगः--

भासपद्वाधुनिस्स वय ममोत्पासस्य ध्याधेर्मायस्य राति ते सह-सम्बद्धार्थममुक्तमस्याऽमुक्तेवतास्यं अयं कार्यस्य राति ते सह-स्थाऽक्ष्याताद्वसदस्ययुक्तग्रन्थसमस्ययम् शत्तद्वेयसामन्त्रस्य न्यायं सम्बद्धारम्येत कार्यस्या वा मास-पद्धार्यहरूकस्य ममोरवक्ष्याधेर्भीकः क्ष्यरीराचिरोचेन सम्बद्धार्यस्य स्वाध्यार्थस्य करिन्य इति स्वहस्य ग गर्मेश्वपूक्त-ऽऽचार्यवरुक्तम्यं कृत्वाऽऽचार्यं युज्ञवेस् । तत माचार्यो भूमो सार्वक्रेश्वरुक्तां मर्वन्तं कृत्वा स्व देनी सन्तक्षय्वारं

बसाद्यपरिवृत्तां बच्यमाकतत्त्रदुगम्ब धूपाविभिः पूजयेत् । तदी-शान्यां धान्यं कुम्पं संस्थाप्य जलेना ८८ पूर्यं गन्ध-सर्वीपधि-नूर्याः पक्षर-पञ्चासक् सत्तमृत्-कर्स पञ्चरक-पञ्चगव्य-हिरदयानि सक्तम्मनीः चिपका बसाइयेगाऽउवेच्य सर्वे समुद्रा इति तत्र तीर्यान्याबाह्य तत्त्वा-यामीति तत्र वरुत्तमात्राह्य सम्पूज्याऽप्ति महांश्र भतिहाध्यऽऽज्य-मागान्ते तत्तश्रद्धप्रदेवतामन्त्रेष तत्तदृद्रध्येण चाऽहोत्तरसहस्रा-ऽहो-चरशत्-प्रविशत्यन्यतरसङ्ख्या होतं कृत्वा ग्रान्तिकतरोन यज-मानाऽभिषेके विद्विते तां प्रतिमां शोगी माहावाय रचात्। उक्तगम्बा-मावे चम्दनं पुष्पामावे शतपर्वं धूपामावे शुग्गुलः । नैवेद्यापावे पृती-इनम् । श्रीमञ्जूष्याभावे तिलाः । मन्त्राविद्याने गायत्री भट्टोश्टरसद्याः मृत्युनिर्देशेऽष्टोत्तरशतमन्यश्च श्रुदुवात् । ततः क्रशोदकँर्वस्यकैः पुरासमन्त्रभारियके कुर्यात् । पूर्णाहुति वसीर्द्धाः च कत्वा शास्तिपाठं कृत्वाऽऽशिषं पदात् । जतः सर्वशास्तिर्भवति । तत भाषार्याय खुवर्व्यतिमां बखावुग्मेन बेहितां सबरक्षां यां साउलद्वारां द्यात् । इतरेभ्योऽपि वक्तियां वचाशुक्राक्षयांश्च भोजयेत् । इति रोगो-स्पत्तिशास्तिश्रयोगः । मदनरावे-शिवु सर्वनसूत्रशास्तिवु गायञ्चा यमोद्देशेन दोमोऽष्टलक्ष्यः बित्रस तत्त्वस्त्रप्रदेवतायै सोऽपि होमावशिष्टद्रम्पेण कविद्रयोग । तक तत्र वस्यते । सव रोहिची-पुष्पा- ऽऽस्त्रेश-पूर्वा-इस्त-स्वाती-विशासा-ऽनुराघा-ज्येष्ठा-सूत्रोत्तरा-वाबा पूर्वामाद्रपदोत्तरामाद्रपदाञ्च वृतमेव हामद्रम्बमगुराधावितरपि सेनेबाऽस्यम तु होमे बसी च विशेषस्तव वश्यते । अस्ये तु विशेषी-अध्यक्तादिकमेल पुरुवाकाः चीरमुक्तवमित्रो होते मुच्योदनं वसी मध्यकास्तिकाः पूर्वं बच्योदनं च चीराचं क्ली ४ सुद्गः विका-पूत्त-मञ्जू पृताका असता ६ होने गर्भ शाल्योवनं वली ३०० गमा-साक्यो-दनं बली भिदापं बली ॥६॥ पूराका चाइत-विला होने । असत-विला बसी ॥१०॥ गम्ब-पुच्याचि बसी ॥१९॥ तिस-माचः ॥१२॥ गम्बपुच्यकी #१६॥ जलपुर्व शामे ॥ सञ्चता मुद्राः बस्ती ॥१४॥ गम्ध-पुष्पाच्य बस्ती ॥१४॥ दुरभाकाऽभ-गम्भ-मास्यानि वतौ ॥१६-१७॥ गम्भ-मास्य वतौ ॥१०॥ पायसं वजी ॥१६॥ जालयो शोमे । पायसं वली ॥२०॥ शोमे पायसं वती ॥२१॥ वीजाऽयता होमे ॥ गन्य-पुष्पाचि वती ॥२२॥ अध्यक्षकः सिधी होते । युतासमुद्दगर नली ॥२३॥ सल-पुर्वादि होते ॥ प्रावृद्ध

वसी ॥२॥ गन्य-माल्योदनं वसी ॥१४॥ यक्किशितः (२१) पक्किशितः (२८) नव (६) दश (१०) मृत्यु (१०) विश्वतिः पक्किशितः (१०) स्वर्ताः (१०) दश (१०) दश (१०) स्वर्ताः (१०) स्वर्ताः (१०) दश (१०) स्वर्ताः (१०

अथ बहणशान्तिः

मतस्यपुरायो-

होराषां ग्रस्यते यस्य नत्त्रत्रे वा निशाकरः। वार्यसन्देहमाप्नोति स वा मरणमृच्छति ॥१॥ यस्याऽत्र जन्मनच्चत्रे ग्रस्येते शशित्भास्करी तज्जनानां भवेत्पीडा ये जनाः शान्तिवर्जिताः॥२॥ यस्य राशि समासाच भवेड्ग्रहणसम्भवः तस्य स्नानं प्रवक्ष्यापि मन्त्रीयधिसमन्वितम् ॥३॥ चन्द्रीपरागे सम्माप्ते कृत्वा ब्राह्मखनाचनम् सम्पूष्य चतुरो विमान् शुक्कमान्याऽनुहेपनैः ॥ ८ ॥ समानीयौषधादिकम् पूर्वेमेवोपरागस्य -कुम्भानवृतः सागरानिव स्थापयेचद्ररः गर्जा-८॰व-रध्या-वश्मीक-सङ्गमाद्द-हृद्द-गोक्कखात् निचिपेत् राजद्वारंभदेशाच्य मृदयानीय पश्चमच्यं पश्चरतं पश्चत्वक पश्चपञ्चवस् रोचकं पत्रकं शहं हुङ्ग्यं रक्तचन्दनम् ॥७॥ शुद्धस्फटिकतीर्थाम्बु-सितसप्पिमोक्कलान् मधुकं देवदारं च विष्णुकाम्तां शतावरीयः ॥ = ॥ वर्ता च सहदेवीं च निशाद्वितयमेवद्वैच

एतत्सर्वे विनिचित्रय कुम्भेऽष्टाऽऽवाह्येत्स्रुरान् ॥ ६ ॥ सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थान जलदा नदाः **प्रा**यान्यु यजमानस्य दुरितचयकारकाः ॥१०॥ योऽसी बज्रधरो देव आदित्यानां मश्चमतः । सहस्रमयमरचेन्द्रो प्रह्पीडां व्यपोहतु ॥११॥ मुखं यः सर्वदेशनां सप्तार्विरमृतद्युतिः धन्द्रोपरागसम्भूतां ग्रहपीडां व्यपौद्रतु ॥१२॥ यः कर्मसाची लोकानां धर्मी महिषवाहनः । यमधन्द्रोपरागीस्थां ब्रह्मीदां स्थमोहत् ॥१३॥ रसोगस्याभिपः साची नीलाञ्चनसम्मर्थः । खब्रहस्तोऽतिभीदश्च ब्रह्मपीडां व्यपोहतु ॥१५॥ न्तरगपाश्चररे देवः सन् भक्तरवा**ह**नः । चन्द्रोपरासक्तुपं दहलो में व्यपोहतु ॥१४॥ गागुरूपो हि लोकानां सदा कुच्णसुगियः बाबुधन्द्रोपरागोत्यां ब्रह्मीडां व्यपोहतु ॥१६॥ योऽसौ मिथिपविदेवः खर्गमूलगदावरः । चन्द्रोक्रागदुरितं धनदो में व्यवीहरू ॥१७॥ योऽसाविन्दुधरी देवः विनासी हपवाहनः । चन्द्रोपशागपामानि निवारयसु शङ्करः ॥१८॥ . शैलोक्ये यानि भूतानि स्थावराणि चराणि च । महा-विष्यक्षके-रुद्राश दहन्तु मन पातकम् ॥१६॥ प्त्रपाबाहयेत् क्रम्भात्मन्त्रीरेभिश्र बारुणैः एतानेव तथा भन्त्राम् स्वर्धपट्टे विळेखयेत् ॥२०॥ ताज्ञपटेश्यका क्रेस्ट्य- तथ्यवस्त्रे वर्धव- च 👍 मस्तको मुजयानस्य निवध्युस्ते द्विकोत्तमाः । २३॥ :

कलाशान् द्रव्यसंयुक्ताकानास्यसमन्वितान् रहीत्वा स्थापयेद्गूढं भद्रपीठीपरि स्थितम् ॥२२॥ पूर्वोक्तरेव मन्त्रेथ यजमानं द्विजोत्तमाः । श्राभिषेकं ततः कुर्युमेन्त्रीर्वरणस्कत्रः ॥२३॥ ततः शुक्राम्बर्धरः शुक्रमान्याऽनुलेपनः । भाचार्ये वरयेत्पश्चात्स्वर्णपटं निवेशयेत् ॥२४॥ आवार्यदक्षिणां दचाइगोदानं च स्वशक्तितः। ... गन्ध-मान्धे-धूप-दीपैः पूजये देवतृष्ट्ये ારશા होमं चैव प्रक्रवीत तिलैच्योहतिभिस्तथा । निष्ट्रचे ग्रहणे सर्वे ब्राह्मलेभ्यो विशेषतः ॥२६॥ दानं च शक्तितो दग्रायदीच्छेदास्मनो हितस् सूर्यप्रदे सूर्यनामयुक्तानमन्त्रांथ कीतयेत् ॥२७॥ चनद्वपतस्थाने सर्वत्र स्वीपदमृहनीयमित्यर्थः। श्रानेच विधिना यस्तु ब्रह्मो स्नानमाधरेत्। न तस्य प्रहरों दोषः कदाधिद्धि जायते ॥२८॥ श्रय जलाशयवैकृतशान्तिः। मर्गः-नगरादुवसर्पन्ते समीव खवयान्ति नद्यो इदमस्वरणा विरसा वै भवन्ति च ॥ १॥ विवरणं कलुषं सन्तं फेनवज्जन्दुसङ्कलम् । चीरं स्नेहं सुरां रक्तं वहन्ते व्याकुलोदंकम् ॥ २॥ पएमासाभ्यम्तरे तत्र परचक्रभयं विदुः । जलाशया नदम्ते च मङ्बलन्ति इथन्ति च ॥३॥ विद्वञ्चति तथा ब्रह्मन् ! उदाला घूमं रजांसि च। ग्रखाते वा जलोत्पत्तिः स-सच्या वा जलाशयाः ॥ ४ ॥ सङ्गीतिशब्दा दश्यन्ते जनमारभयं विदुः ।

दिव्यं महाभयं विद्धि मञ्जूमात्राध्यसेवनम् ॥ ॥ ।।
जन्नव्या वारुणा मन्त्रास्तिश्च होयो जले भवेद् ।
मध्याज्ययुक्तं परमास्त्रमत्र देयं दिनानामयभोननायम् ।
गानश्च देगाः सितवस्रयुक्ताःस्त्योदकुम्याःस्वकलाश्चःशान्त्ये ॥६॥
इति जलाश्ययकुत्तशान्तिः ।
आथ वृष्टिवैकृतशान्तिः ।

गर्गः--- अतिष्टृष्टिर्शाष्ट्रिष्टुशिद्धादौ भयं मतम् । श्चनृती तु दिवाऽनन्ता दृष्टिच्योधिभवाय तु ॥ १ ॥ धनश्रवैकृता मेघपन्तरे गर्जितादयः 🕒 🗀 शीलोब्छानां विपयसि ऋतूनां विपुजं अपम् ॥ २ ॥ शोधितं वर्षते यत्र तत्र शक्क भवेत् ! अङ्गारपरंशुवर्षेण नगरं तहिनरयति ॥ ३.॥ मज्जा-ऽस्थि-स्नेइ-मांसानां जनमारभ्यं भवेतु । 🧓 फलं पुष्पं तथा धान्यं परेणाऽविभयाय तु ॥ ४ ॥ क्षांशु-जन्तुफलानां च वर्षता रागणं मयम्। छिद्रावाच मवर्षेण सस्यानामीतिवद्धंनस् ॥ ५ ॥ विरजस्के रती न्यभ्रे यदा छाया न दृश्यते 📋 🚬 दृश्यते हु प्रतीपाचा तत्र देशे सर्थ सर्वेते ॥ ६॥ प्रतीपा=प्रतिकृताच्छाया, विपरीतछार्येत्ययः। निरभ्रे वा तथा रात्री श्वेतं याम्ये चिरेण हुं। इन्द्रायुधं तथा रृष्ट्वा उल्कापातं तथैव च ॥ ७॥ दिग्दाही परिधानी च गन्धर्वनगरं तथा। परचक्रभर्य विन्धादेशी(पह्रवमेव चा विंधा सूर्येन्दु-वर्ज्जन्य-समीरणानां यागस्तु कार्यो विधिवद्दद्विजेन्द्र 🗓 घोन्यानि गा-काञ्चन-दक्षिणाञ्च देवा दिजानामधनाराहेताः ॥६॥ इति इष्टि वैक्रतशान्तिः।

अथाऽग्निवैकृतशान्तिः।

गर्गः-अग्निः पदीष्यते यत्र राष्ट्रे भृशमनिन्धनः ।। न दीप्यते वेन्धनवस्तिद्राष्ट्रं पाडयेन्तृप ।। ज्बलेदाइँग वंशो वा तथाऽऽद्रीन्नं एदः सुपा॥१॥ मासाद-तेरस्यं हारं नृष-वेश्म छुराखयम्। प्तानि यत्र दह्यन्ते तत्र राजमयं बदेत्॥२॥ विद्युता वा पदश्चन्ते तत्राऽपि नृपतेर्भवस्। अनैशानि तमांसि स्युविना पांगुरजांसि च ॥ ३॥ धुमथाऽनरिनजे। यत्र तत्र विद्यान्पद्शियम्। त्रिद्विनाऽभ्रं गगने भयं स्याद्दृष्टिवर्जिते॥४॥ दिवा स नारे मगने तयैव भयपादिशेत्। ताराविकृतिदर्शने ॥ ४ ॥ ग्रह-नज्ञन-वैकृत्ये पुत्रवाहनदारेषु चतुष्वदगृहेषु स्त्रभावाद्दाऽपि हीयेत घेतु-वस्सादिकं च यत् ॥ ६ ॥ के। इायुधविकारः स्याचत्र सङ्ग्रामयादिशेत्। त्रिरात्रोपोषितस्तव पुरोधाः सुसमाहितः॥७॥ समिद्रिरर्फेटचाणां सर्पेपैथ घृतेन च। होमं कुर्याद्गिनमन्त्रैक्रीसाखांश्चीव भेशवयेत्।। 🖙 🕕 द्यात्सुवर्ण च तथा द्विजे भ्ये। गारचैव वस्नाणि तथा श्रुवं, च । एवं कृते तत्समुपैति नाशं यव्यनिवैक्तत्यभयं दिलेन्द्र ! ।।।।।।

इत्यग्नियैद्धत्यशान्तिः ।

श्रथ प्रतिमादिबैकृत्यशान्तिः।

गुर्गः च्रदेवताद्याः भन्नस्यन्ति वेपन्ते मज्बलन्ति वा । ं आर्दिन्त च रोदन्ति मस्विद्यन्ति इसन्ति च गा.१ ()

उत्तिष्ठन्ति निषीद्नित प्रध≀वन्ति रमन्ति **घ**ी भजन्ति विकृति भूम्ना माञ्चुष(णां भयावहाः ॥ २ ॥ व्यवाङ्गुखावतिष्ठन्ति स्थानात्स्थानं भ्रमस्ति च । वमन्त्यस्मि तथा धूर्मस्नेहरक्तेतयायसाम् ॥३॥ एवपादीनि दृश्यन्ते विकाराः सहजीत्थिताः । लिङ्कायतनिवित्रेषु तत्र वासं न रोचयेत्॥४॥ राष्ट्रो वा व्यसनं तत्र स च देशो विनश्यति । देवयात्रामु चोत्पातान् दृष्टुा देशभयं वदेत् ॥ ५॥ देवयात्रीत्याता बराइसंहितोका श्रेयाः। विना साइसधर्मेण तत्र वासं न रोचयेत्। पश्चनां रहनं हेयं नृपाणां लोकपालनम् ॥ ६॥ रुद्रजम्=रुद्रमतिमास्त्पर्भ वैद्यत्यं पशुभयदमित्यर्थः। प्रतं सर्व-भाऽपि कार्राथम्।

ह्रेयं सेनापतीनां च यत्स्यात्स्कन्द्विशाखजम् । ह्योकानां विश्ववस्विन्द्रविश्वकर्मसमुद्भवम् ॥ ७ ॥ विनायकोद्धवं भ्रेयं गणानां सेवकाय च । देवदूते च याः प्रेष्याः देवस्त्रीषु तृपस्त्रियः ॥ ८॥ षाष्ट्रदेवेषु विश्वेषं गृहासामेव नाऽन्यथा । देवतानां विकारेषु श्रुतिवेचा पुरोहितः ॥ ६॥ देवताऽर्ची तु गत्वा वै स्नातामाच्छाच भूषयेत् । पुजवेचां महाभाग ! गन्ध-मानवा-डब्रसम्पदा ॥१०॥ मधुपर्केण विधिवदुपतिष्ठेदनन्तरम् त्रज्ञिङ्गेण च मन्त्रेण स्थान्तीपाकं यथाविथि ॥११॥ प्रुरोधा जुडुयाइहाँ सप्तरात्र्मतन्द्रितः

विषाध पुरुषा मधुरासपात्रैः सन्दक्तियोः सप्तदिनं नरेन्द्र 🗔 शासेऽष्टमे ऽहि चिति-गो-मदानैःसकाञ्चनैःशानितमुपैति पापम्॥१२॥

१रवंद्भतशान्तिषु देवसाप्रतिमा-वैकृत्यशान्तिः।

श्रथाऽऽकस्मिकप्रसादपतनादिशानितः

गर्गः--मास।द-तोरखा-ऽहाल-हार-प्राकार-वेश्यनाम् । अनिमित्तं तु पतनं रहानां राजमृत्यवे ॥१॥ रजसा राध्य धूमेन दिशो यत्र समाकुलाः । श्रादित्यधन्द्रतारोध विवर्णी भगष्टद्रये ॥२॥ राचसायत्र दृश्यन्ते ब्राह्मणाश्च विधर्मिणः **अर्** नवस्र विपर्यस्ता ध्रपूर्व्यं पूजवेक्जनः ॥३॥ नत्त्रत्राणि वियोगोनि तम्महद्भयत्तत्तृणम् केत्दयोपरागौ च छिद्दंदा शशि-सूर्ययोः ॥४॥ अहर्नेविकतियेत्र तत्राऽपि भयमादिशेत् स्त्रियश्च कल्रहायन्ते वाला निघ्नन्ति बालकान् ॥ ५ ॥ क्रियाणुःग्रुचितानां च विच्छित्तिर्येत्र दृश्यते । श्रम्निर्येत्र न दश्येत हृपमानेऽध्य शास्पति ॥ ६ ॥ क्रब्यादा वायसा वाहा यान्ति चे।चरतस्तथा। पूर्णेकुम्भाः स्रवन्ते च वहया वा विलुम्बते ॥७॥ मङ्गरुयध्वनया यत्र न अयुन्ते समं ततः। स्तवश्चर्यायते वाश्य मोत्साहे सिति निन्दिताः॥ =॥ न दैवतेषु वर्तन्ते यथा ब्रह्मइरोषु च। भन्दश्रीषाणि वाद्यानि वाद्यन्ते विन्स्वराणि च ॥ ६ ॥ गुरु-मिश्र-द्विषा यत्र शत्रुषुपारताः सदा। बासखान् सुहुदे।ऽमात्यान् जने। यत्राञ्जमन्यते ॥१०॥ शान्तिमञ्जलहोमेषु नास्तिक्यं यत्र मन्यते। राजा वा भ्रियते तत्राध्यवा देशो विनश्यति ।:११॥ राह्नो विनाशे सभ्याप्ते निविश्वानि निवाध मे । ब्राह्मणाम् मथमं द्वेष्टि ब्राह्मणांच विनिन्दति ॥१२॥

ब्राह्मणस्वानि चाऽऽदत्ते ब्राह्मणांथ जिघांसति ।
नैतान् रमरति कृत्येषु योऽन्वितथात्यस्यति ॥१३॥
रमते निन्दया चैषां प्रशंसां नाऽभिनन्दति ।
श्चपूर्वे तु करं लेभाचथा पातयते जने ॥१४॥
एतेष्वभ्यचेयेत्सम्यक् सप्तनीकान् द्विजेशचमान् ।
भोज्यानि चैव कर्नव्या सुराणां वल्लयस्तथा ॥१४॥
गावथ देया द्विजपुत्रवेभ्या सुवं तथा काञ्चनमम्बराणि ।
होमं च कुर्याद् द्विजपूजन च एवं कृते शान्तसुपैति पापम् ॥
श्चाद्वते तु सम्रत्यन्ते यदि दृष्टिः प्रजायते ।
सप्ताहाभ्यन्तरे ह्रेयमञ्चतं विकलं हि तत् ॥१७॥
१त्याकस्मिकमासाद्यतनादिशान्तिः ।

अथ इत्तविकारशान्तिः।

गर्गः-रुद्दे स्वाधिरभ्येति इसता देशविश्वतः।
शाखामपतने कृर्यात्सङ्ग्रामं योधपातनम् ॥ १ ॥
बालानां मरणं कृर्याद्वालानां फलपुष्पतः।
स्वराष्ट्रभेदं कृष्ठते फलपुष्पमनाचित्रम् ॥ २ ॥
सीरं सर्वत्र सम्भीर-रनेहं दुभिन्नलन्त्रणम् ।
बाह्नाऽपन्यं मसो रक्ते सङ्ग्राममादिशेत् ॥ ३ ॥
मधुद्धाने भवेद्व्याधिर्जलस्थावे च वर्षति ।
श्रामशोषणां श्रेयं ब्रह्मन् ! दुभिन्नलन्त्रणम् ॥ ४ ॥
श्रुष्कोन् सम्मरोहत्स् वीर्यमन्तं च हीयते ।
स्थानात्स्याने तु गमने देशमङ्गं तथाऽऽदिशोत् ।
श्रान्येषु चैव हत्तेषु हत्त्रोत्पातेष्वतन्त्रितः ॥ ६ ॥
सम्बाद्यित्वा तं हृष्टं गन्धमानपैदिभूषयेद् ।

हत्तोपरि तथा छत्रं कुर्णात्मपत्रशान्तये ॥ ७॥

शिषपभ्यचेपेरेषं पशुं चाऽस्मै निवेदपेतः ।

मृष्ठेभ्य इति हत्तेषु हुत्वा ख्दं जपेश्वतः ॥ ८॥

मध्याञ्पयुक्तेन तु पायसेन सम्पूज्य विमाश धुवं च द्यात्।

गीतेन हत्येन तथाऽर्षयेशं देवं हरं पापविनाशहेतोः ॥६॥

इति इन्होत्यस्त्रशान्तः । स्रयोत्पातशान्तिः ।

नारदसंदितायां चतुर्द्धिशेऽध्याये -

्रवत्याता विविधा लोके दिव्य-भौगाऽन्तरिचगाः । तजा न मानि तां शान्ति सम्यक् वक्ष्ये पृथक् पृथक् ॥१॥ देवताधाः प्रकृत्यन्ति पतन्ति प्रज्यलन्ति को । मुहुर्गायन्तिः रोदन्ति प्रस्विद्यन्ति इसन्ति च ॥२॥ वमन्त्वसिं तथा धूमं स्नेहं रक्तं पयो अख्यम् । मधी मुखं हु तिष्ठन्ति स्थानात्स्थानं ब्रमन्ति वा.॥ ३ ॥ व्यमाचात्र दृश्यन्ते विकाराः मतिमादिषु गन्धर्वनगरं श्रेव दिवा-नत्त्रश्रदर्शनम् ॥४॥ महोन्कापतनं कष्टं नृष्णां रक्तपवर्षणम् गान्धर्कगेहं दिग्दाहं भूभिकम्पं दिवा निश्चि ॥ ५॥ अनभी च स्युर्शिक्षाः स्युर्व्यक्षनं च विनेन्धनम् l निशीन्द्रचापं मण्डूकशिखरे श्वेतवायसम् ॥६॥ इश्यन्ते विस्कुलिङ्गा ये गी-गनाऽश्योष्ट्रगास्ततः । जन्तको द्वि-त्रि-शिरसी जायन्ते चाऽवियोनिषु ॥ ७॥ : इतिसूर्यात्र तिसन् स्युद्धितु युगपद्रवेः । जम्मुके प्रावसंवेशः केत्नां च प्रदर्शनम् ॥ ८॥

काकानामाकुलं रात्री कपोतानां दिवा यदि । एववेते महोत्याता बहवः स्थाननाशकाः । । ६ (। केचिन्सृत्युप्रदा केचिच्छत्रुभ्षश्च भयपदाः । देवालये स्त्रमेरे वा ऐशान्यां पूर्वतोऽपि वा ॥१०॥ कुण्डं सन्ध्यसंयुक्तं कल्पयेन्मेखलायुतम् युक्कोक्तविधिना तत्र स्थापयेच हुताशनम् ॥११॥ जुहुयादाञ्यभागान्तमयबाऽहोशर् शतम् । यत इन्द्र भयामहे स्वस्ति येन च मन्त्रकीः ॥१२॥ समिद्।ज्य-चक-जोहि-तिलैब्बहितिभस्ततः कोडिहोर्स तदर्दे वा लक्षहोपमथाशुतम् ॥१३॥ यथाविशानुसारेण पाद्दोपमथापि वा. । एकविंशितिरार्भं वा पर्च पत्ताउद्दे मेव वा ॥१४॥ त्रिरात्रमेकरात्रं वा होमकर्म समाचरेत् गरोश-तेत्रपाला-ऽर्ध-दुर्गाख्या भन्नदेवताः ॥१४॥ सासां मीत्ये जपः कार्यः शेषं पूर्ववदाचरेत्। भ्रात्विगम्या दिवाणां दचाइ वे।हश्रेभयः स्वशक्तितः ॥१६॥

ःति नाने।त्यातशान्तिः । अथ पर्वतीसस्टशान्तिः ।

हर्षार्गः-एन्न्याः विवासस्य फर्ल सरदस्य सथैन च । शोर्षे राज्यं श्रियः माप्तिमित्रे चैश्वव्यवद्वेनम् ॥ १ ॥ कर्णयोर्भृषणावाप्ति नेत्रयोर्थन्धुदर्शनम् । नासिकायां तु सौभाग्यं दक् त्रे मिष्टाक्षभोजनम् ॥ २ ॥ कराते नित्यं विवाऽऽश्लेषः स्कन्दयोदिंजयो श्रुवम् । धनलाभा बाहुयुग्ये करयोर्थसंज्ञयः ॥ ३ ॥ श्रद्धांश्रं निरुद्धोगः वृद्धयेश्चिमणं भवेत् ।

एवं पण्याः भवातस्य फलं ह्रेयं विचन्नर्रौः ॥ ४ ॥ एतदेव फलं विन्याच्छरदस्य भरेहरूले । पश्चयाः प्रपातने चैव सर्टस्य प्रपातने ॥ ४ ॥ पश्चरात्रं भनेपस्य व्याधिपीदा विशेषतः । पतनाऽनन्तरं तस्य रोहरां चदि जायते ॥६॥ पतने फलशुस्कृष्टं रेहिए। अन्यफलं भवेत् । **मारोहर्या चे**रध्वेवक् अभी वक्ते निपातनम् ॥७॥ भवेद्यदि सुशीघेण तत्फलं जायते धुवस् । मृत्युयोगे दम्धदिने पाते च यमवर्ष्टके ॥ ८॥ चन्द्राञ्छवे नैधने च जन्मचे विषतादिके । क्रूत्लम्ने क्रूर्युते क्रूरेण च निरीचिते ॥ ६॥ अष्टमेते कर्रयुते विष्टि-वैधृतिसंयुते । दुर्निभिन्ते सयोः पाते निधनं जायते घ्रवम् ॥१०॥ सयोः स्पर्शनमात्रेण सचैलं स्नानमाचारेत् । गर्म्यं पञ्चाविधं मार्य कुर्यादाज्याऽवळे।कनम् ॥११॥ शस्ते बाञ्ज्ययवाऽशस्ते धदीच्छेदात्मनः शुभम् । पुषपाइं वाचिथित्वा हु शान्तिकर्म सतरचारेत् ॥१२॥ मतिरूपं तथाः कुर्यात्मुवर्खेन खशक्तितः । रक्तवस्रेण सम्बेष्टण गन्ध-पुष्पैः मपूजयेत् ॥१२॥ कलाशे वस्त्रयुग्धेन पूजयेदिधिना ततः , अप्रिसंस्थापनं कृत्वा होमं कुर्याद्विधानतः ॥१४॥ मृत्युञ्जयेन मन्त्रेश सभिज्ञिः खादिरैः शुभैः। तिलैर्चाहृतिहे।मं च अष्टोत्तरसहस्रकम् ॥१५॥ महाज्याहतिहामं च सविः चीरेख कारयेत् अभिषेक ततः , कुर्याद्यजमानस्य मुर्द्धनि ।।१६॥ पुण्यैर्वारुणसूक्तीरच धीः शान्तादिकपनत्रकैः । इत्थं मन्त्रविधानेन यः कुर्याच्छानितप्रसम् ॥१७॥ तस्याऽऽयुर्विजया लक्ष्मीः कीर्तिः प्रष्टिरच जायते । इति पन्यादिपतनशान्तिः ।

अथ शामारएयादिशान्तिः।

गर्गे:-प्रविशन्ति यदा ग्राममारएवा मृमपश्चिषाः अरवर्यं यान्ति वा आक्याः स्थलं यान्ति जळेख्यवाः॥१॥ स्यलजा वा जलुं यान्ति घोरं वा सन्ति विभेगाः। राजदारे पुरद्वारे शिवांश्राप्यशिवमदाः ॥२॥ दिवा रात्रिक्षरा बाडपि रात्रौ बाडपि दिवाचराः। प्राम्यास्त्यजन्ति ग्रामं वा तचोत्त्यातस्य निर्दिशेत् ॥ ३ ॥ उत्पातस्य सञ्जयमिति शेषः। दीप्ता वा सन्ति सन्ध्याधु मण्डलानि च क्रुवेते । पासन्ते विस्तरं यत्र तदा शेतफलं लभेत् ॥ ४॥ मदोषे कृषकुटो वासेद्धेमन्ते वाऽपि कोकिताः । अकींद्येऽकश्मिम्रखस्तद्दाऽपात्यभ्यं बदेख् ॥ प्र॥ पृहे कर्पेतः प्रविशेत् ऋष्याधनुविलीयते Py वा पश्चिकाः क्रुयीन्यृत्युर्येहवतेर्भवेत् ॥६४॥ माकार-द्वार-गेरेषु तोरखा-ऽऽपण-वीथिषु । केतुच्छत्रायुवाग्रेषु क्रव्यात्संश्रयते यदि ॥७॥ जायते वाध्य वन्मीको मधु वा दृश्यते यदि । स देशी नाशमायाति राजा च चियते तहा ।। = ।। मृषिकाः शलकान् रष्टा मभूतं श्रुज्रयं बहेत् 🕆 🥕 काङ्गोल्युकाऽस्थिश्यभास्याऽभानी मस्कवेदिनः ॥ ६ ।

दुर्भिज्ञवेदिनो हेयाः काकाधान्यज्ञुषे यदि । जनाम्नभिश्रवन्तथा निर्भया रणवेदिनः ॥१०॥ काको मैधुनयुक्तथेत् श्वेतः स यदि दश्यते । राजा च श्रियते तत्र तदा देशो विनश्यति ॥११॥ चलुको वासते यत्र निपतेदा यहे यदि । होयो गृहपतेर्मस्युर्थननाशस्त्रथेव च ॥१२॥ बासते = शब्दं करोति ।

मृतपिद्धिकारेषु कुर्याद्धीमं सदिच्छम् ।
देवाः कपोत इति च जप्तव्यं पश्चभिद्दिनैः ॥१२॥
सुदेव इति वैकेन देया गावस्तु दक्षिणा ।
जपेच्छाकुनसूक्तं च नमा चेदशिरांसि च ॥१४॥
देवाः कपोत इत्यादयो मन्त्रा ऋग्वेदे प्रसिद्धाः । ममो नमो
महायो नम इति । वेदशिरांसि उपनियदः ।

गावश्र देया विधिवद्द्विजानां सकाश्रवा क्युपुरोश्वरीयाः। एवं कृते शान्तिप्रपेति पापं सुमैद्विजैर्वाऽपि निवेदितं यत् १५ इति ग्रास्थारख्यादिशान्तिः ।

श्रथ कपोतशान्तिः (

नारदः — आरोहपेद्युई यस्य क्योसो वा मवेश्येत् ।

स्थानहानिर्भवेचस्य यद्दाऽनयंपरम्परः ॥ ६॥
दोषायः यनिनां गेदे द्दिद्राय शिवास च ।
तस्य शानितश्च कर्षव्या जपहोमविधानतः ॥ २॥।
आहाणानः वरयेसत्र स्वस्तिवाचनपूर्वकश् ।
चौदशाद्वादशाष्टौ वा श्रौतस्माचिक्रियापराः ॥ ६॥
देवाः क्योत इत्यादि-ऋचाभिः पत्रशिर्जपम् ।
ज्ञां कृत्वा नपरनेन स्व-पृक्षोक्तविधानतः ॥ ६॥।

ऐशान्यां स्थापयेद्किं मुखानतेऽष्टोत्तरं शतम् ।
मत्येकं समिदाध्याकेः मित्रणवपूर्वकस् ॥४॥
मुखानते श्रव मिनुष्यानते।
यत इन्द्र भयामद्दे स्वस्तिदेति त्रिथस्वकैः ।
त्रिभिर्मन्त्रेथ जुहुयाचिलान् व्याहृतिभिस्तथा ॥६॥
जयाहृतीस्ततो हुत्वा कुर्यात्पूर्णादृति स्वयम् ।
विमेश्यो दक्षिणां दथात् यौः शान्ति चततो जयेत्॥ ७॥
त्राह्मणान् भोजयेत्पश्चातस्वयं भुद्धीत बन्धुभिः ।
एवं यः कुकते सम्यक् तस्मादोवास्ममुक्यते ॥ ६॥
पिन्नुश्वायाः स्वरेऽप्येवं मधु-वन्धिकयोरिष ।
सम्पूर्णे वन्दिरे द्वानः शून्यसमिन मन्नतम् ॥६॥
भाकारे च पुरद्वारे स्थ्यादिषु च वीथिषु ।
श्वामस्य तत्कलं चैव गुरुकश्चनया ततः ॥१०॥
श्वानिकर्माऽसित्तं कार्यं पूर्वोक्तेन क्रमेख तु ।
हति क्योतादिशान्तः।

श्रथ काकवेश्वत्यशान्तिः।

गर्गसंहितायाम्-

शुचौ देशे रिक्रमात्रे स्थिपिटक्षेऽस्नि निधाय च । वदीशानेऽष्ठदछे कुम्भोपरि स्वशक्तितः ॥॥॥ हिरययनिर्मितं त्विन्द्रं लोकपालसमन्वितस् पूजियत्वा स्वशाखोक्तविधिना अपयेश्वरम् ॥६॥ कुरबाऽज्यभागपर्यन्तं जुहुयात्क्रमशो इविः । पालाशीः समिधो त्रीहीबरुपाज्यमिति कपात् ॥ ७॥ अष्टोत्तरसङ्खं वा अष्टोत्तरशतं हु यत इन्द्रेति मन्त्रेण लाकपाकेश्य एव च ॥ ८॥ शक्या हुत्वा स्वशाखोक्त-वायश्वित्ताहुतीर्हुनेत्। क्षोकपालवर्ति दस्वा इन्द्रामे चरुशेयतः ॥ ६॥ बायसेभ्यो पत्ति दचादैन्द्रवारुणमन्त्रतः। पेन्द्रदश्वराज्यायन्यां पे नैऋताम ये ॥१०॥ ते काकाः मतिगृह्यन्तु शूरूपां पियडं भयाऽपिंतम् । पूर्णांदुर्ति तता दुत्वा आवार्य पूजयेशतः ॥११॥ इम्मे।वर्षेनाऽभिषेका यजगानस्य विस्तरात्। आपार्यायेग्द्रभतिर्मा द्यारसोपस्करां ततः ॥१२॥ शक्या च भूयसी दखाद दिजानी भोजने दिशोद । शतं तदर्दमर्द्धं का शक्यभावे दशाऽपि वर १११३॥ सर्वेशान्ति पाटियत्मा सुमीयाच द्विजाशिषः। एवं कृते भवेचछान्तिः काकारिष्टविनाशिनी ॥१४॥ इति काकमैशुनदर्शनादिशान्तिः।

श्रथ प्रकारान्तरेण काकमैथुनदर्शनशान्तिः। भारदः-दिवादा यदि वा रात्री या परयेस्काकमैथुनम्। स नरो गृरयुगामोति अथवा स्थाननाशनम् ॥१॥

काकघातव्रवं यद्दा निद्धातात्र्य दस्सरम् पितृबद्दै दिजान भक्त्या प्रत्यहं चाऽभिवाद्येत् ॥ २ ॥ **जितेन्द्रिया जितकोधः सत्यधर्मेशरायकः** तदोषशमनार्थाय शान्तिकर्म समारभेत् ॥ ३॥ ग्रहस्येशानदिग्यागे होमस्थानं वकश्ययेह । पुराकितिमा तब पतिष्ठस्य हुताशनम् ॥ ४ ॥ शुखान्ते समिदाजयान्नेहुनेदछोसरे शतम्। मतिमन्त्रं ज्यम्भकेन अस्य मृत्युद्धयेन च ॥ १ ॥ न्याइतिभिर्मीहितिलीर्जपार्च तं मकण्ययेतुः । पूर्णांदुति च जहुपात्कर्चा श्रुविरकक्द्रकः ॥६॥ स्वर्णमूझी रीप्यसुरा कृष्णा धेर्च प्यस्विनीस् । वसालङ्कारसंयुक्तां निष्कद्वादशसंयुक्ताम् ॥ ७॥ तर्छेन वर्द्धेन द्याइचिषाया गुतम् । यथाविशासुसारेण स्यूनाधिकपस्य क्रम्पना ॥ 🗢॥ आवार्याय अधित्रयाय तो गां द्यास्कृहस्यने 🇦 यस्मान्यं पृथिवी सर्वा घेना ! वै कृष्णसमिने ! ॥ ह ॥ सर्वमृत्युहरे ! नित्यमतः शान्ति नयच्या से . । जाक्रकोरमेर विशिष्टेश्मेर ययाशक्या च दक्तिकास्मार्**ा**। त्राक्षास्य भे।जयेश्यक्षाच्छान्तिमाचनपूर्वकम् पूर्व या कुरुते सम्यक् तस्यारीप्रात्मप्रुच्यते ॥११॥ इति काक्रमेथुन्शान्तः।

भय काकस्पर्शशान्तिः।

मारदः-सूर्यास्तमनवेलायां कायसः संस्पृशेद्यदि । : : :

अक्रुकां च स्पृशेरकाको वैधव्यं अत्र निर्दिशेत्। नदीवीरे गर्वा गोष्टे श्रीरहत्ते छुराज्ञये॥२॥ बायससंस्कृष्टो यधवन्यनमाप्तुयात् । मतियन्द्रं मतिसूर्ये वावसः स्पृश्ते यदि ॥ ३॥ मध्यामि स्था मृत्युं शस्त्रेष्ठ च विनिर्दिशेत्। मासैः पश्चभिरेवाऽस्य निशाभिः फलमादिशेत् ॥ ४ ॥ सदिनादि फर्स सद्भिः योक्तमत्र शुभाऽशुभम् । शास्ति त्व अकुर्वीत शास्त्रदष्टेन कर्मणा।। ५ व बर्धनग्रम्भसि स्नारवाः, शिवतिङ्गं निरीत्तयेद् । नरवा सम्पूच्य सिद्धं हु स्तुरवा च दिक्पतीनपि ॥ ६ ॥ आर्थ्य तदिनादेव वायसेभ्या वर्ति क्षिपेत्। शनैश्वरदिने प्राप्ते एकान्ते शुभमन्दिरे॥ ७॥ कुष्णावि नवदस्राणि अ-इतानि नवानि पा पूर्वदिकक्रमग्रेगिन स्थापयेच पृथक् पृथक् ॥ = ॥ मानगर्थममायोन स्थापयेत्तत्र वायसान्। स्थापयेन्मन्त्रपूर्वेकम् ॥ ६ ध पूर्वस्याः कपिलं तम भीताग्रीत्रमथा अनेदर्या चारुपां च विकृतसारत् ! नैत्रहस्यां च न्यसेत्कीवन्यपमृत्युविनाशतम् ॥१ अ। वियक्तिक्षं च बावस्यो वश्यव्या कृष्णकर्षुरम् । कीबेंट्यी कालनामानगीमान्यां स्वेतमेव च ॥११॥ 🕰 छो कुल्छनस्रे हु सर्ग मध्ये प्रपृत्रवेत्। महिषं कुण्यावर्धी च पर्च मापेश पूज्येत्।।१२।। क्कोशमार्कं सर्वत्र आयुर्वेश समन्दितस् । क्रोहद्रपटं चहुर्नाहुं पूजयेम्पन्त्रपूर्वसम्।।१३॥ : पश्चिम् हुक्ते परेपि कासं सुगकाः पन्यानमेव च ।

एते पन्धाः समाख्याताः शुद्धाणां नामु-मन्त्रतः ॥१४॥ धकालकल्यां तत्र स्थापयेत्तस्य समिधौ । जलपूर्ण रत्नमर्थे पूर्णपात्रसमन्त्रितम् ॥१४॥ स्थापयेश्वन देवेशं श्रुलगाणि महेश्वरम्। वितिष्ठाच्य च तान् सर्वानय मन्त्रैः प्रपूजयेत्.।।१६॥ कपिलस्त्वं च वर्णेन शुभाऽशुभनिवेदकः। मुहालाऽब्ये पया दत्तं भवाऽशुभविनाशनः ॥१७॥ नीलग्रीव ! ग्रहाणाऽध्ये भया दर्च खगेश्वर !. ष्यण्यमृत्युत्रिनाशस्य ददामि बलिम्रुत्तमम् ॥१८॥। क्र्रस्त्वं पापिनां नित्यं सौम्यस्त्वं धार्षिके जने । षिकृतस्वर ! ग्रहाखाऽघ्ये मया दर्श शुभाय नः ॥१६॥ क्र्रस्त्वं पापिनां निस्यं वथ शुरुभं न ऋष्छसि । पृहोकाऽहर्षे मया दर्श क्रीबा ! सौम्यवदो भव ॥२०॥ विश्वक्रिह ! नगस्तेऽस्तु शे(कव्याधिविनाशन !। विश्वपूर्ण पया दर्श ग्रहाया शुखदे। भव ॥२१॥ .कृष्णकर्षुरनामा . त्वं ः भूतपथ्यनिवेदकः! बृहाखाऽद्यं मया दशं अव वैषद्यनाशन । ॥२२॥ काक ! स्वं काखनामाऽसि दुष्टकाखनिवेदक 🏌 ग्रहाय बलिपूजां मे दशां दुःलविनाशिनीम् ॥२३॥ रवेतस्त्वं सितपर्धोऽसि मृत्युभावस्य सूचकः!। ष्ट्राखाऽर्घ्यं मधा दर्श भव मृत्युविनाशनः ॥२४॥ तन्मध्ये पूज्येदेवं धर्मराणं चतुर्भुजम्। यमाय धर्मराजाय मृत्यमे चाऽन्तकाय च ॥२४॥ वैवस्वताय कालाय सर्वभूतत्त्रयाय अ चौहुम्बराय द्रष्टाय नीलाय प्रसेष्ट्रिने अश्रहा।

ष्टकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय चै नमः। नीलग्रीवाय लेकिश ! द्रएटइस्ताय ते नमः ॥२७॥ पाशहस्ताय सायुषाय सपरिवाराय ते नमः। चन्दनैश्र सुगन्वैश्र बासे(भिः पूजवेद्यपम् ॥२८॥ आदौ ज्यम्बक्मभ्त्रेण ईश्वरं च भपूजयेत्। मृत्युविनाशिनी विद्यों कुम्भे चैव नियालयेत् ॥२६॥ शतमष्टोत्तरं चैव आचार्यो हृष्टमानसः। खरुषोक्तविधानेन चर्व च यमदैवतम् ॥३०॥ संश्रय्य जुहुयाद्वद्दी समिदाण्यकंदितलान्। तरेवत्या समिल्कार्या शतमञ्जातरं तथा ॥३१॥ समितक्रमेख ञ्रहुयास्मितद्रव्यं शृतं हुनेत्। स्रगन्तुपन्यामन्त्रेण होतव्यं सर्वमम हु।।३२॥ भद्रासमे प्रकशिष्यं पश्चवर्णकसंयुप्तस् तस्यापरि न्यसेरपर्द यजमानमथाद्वयेत्।।३३॥ निवेश्याऽऽच्छादिते पष्टे अभिषेकं च कारयेत्। पावमानीभिस्तु तिम्लङ्गिर्भन्त्रैवदिखसम्भवैः ॥३४॥ त्तक्षिक्षैः = द्भुगन्तुपन्धामित्यादिभिः ।

तत्र स्नानं वक्तंव्यं तीर्थाऽऽनीतेन वारिखा ।
सहस्राकादिभिनेन्त्रेः स्नानं कार्य द्वित्रोत्त्रमैः ॥३४॥
तत्रोऽन्यद्वसमादाय धर्मराजं तु पूजयेत् ।
बक्तैः वाडशभिर्मन्त्रेः सुगन्यित्यर्थं भदापयेत् ॥३६॥
तत्र जत्थाय सम्प्राध्यं भक्तिभावसमन्वितः ।
रक्ष मां पुन-पौत्रांश रक्ष मां पशु-वान्धवान् ॥३७॥
रक्ष पर्वा पर्वि चैव पितरं मातरं धनम् ।
क्षित्रतो मे भयं बाऽस्तु रोगाच्त्र च्याधिवन्धनात् ॥३८॥
३६

शक्षते। विषते। अभीवाद्रयं नाश्य वे सद्धा।

प्रार्थनाः च शकर्षव्या नगरकारसपन्तिता ॥३६॥
काकस्पृष्टं च यद्वतं स्नानक्किकं च सद्ववेद्धः।
सिहरसवं च तरकृष्या ब्राह्मणाय निषेद्येद्धः।
सिहरसवं च तरकृष्या ब्राह्मणाय निषेद्येद्धः।
सिश्याः यरिकिञ्चित्स्यश्रीदेशिकः दुष्कृतमि विद्यते ।
स्मानं नाशायातः मस्त्रदानेन द्ध्येद्धः।। । । । ।
सानानं नासासि कृष्णां तु केश्चं चैन प्यस्मिनीम् ॥४२॥
शानिवारे च तरकार्थं रिववारेऽथवा पुनः।
स्ववात्रे सन्तिवर्धां दश्येद्दारमनस्तन्नम् ॥४२॥
शानिवारे च तरकार्थं रिववारेऽथवा पुनः।
स्ववात्रे सन्तिवर्धां दश्येद्दारमनस्तन्नम् ॥४२॥
शानिवारे च तरकार्थं रिववारेऽथवा पुनः।
स्ववात्रे सन्तिवर्धां दश्येद्दारमनस्तन्नम् ॥४२॥
श्राक्तां दिख्यां दश्यात् विक्त्रशास्त्रां चैन शक्तितः।
स्थाने यत्र स्पृश्लेकाकस्तरस्थानं पूजवेचदाः।
स्वां कृर्यास्त्रदानेन ध्वांचदेशः प्रशास्त्रति ॥४४॥
इति काकस्प्रश्लानितः।

श्रय सिंहादी गवादिपस्तिशान्तिः।

श्रञ्जतसागरे नारदः~

आनौ सिहगते चैव यस्य गौः सम्बद्धको ।
गरणं तस्य निर्देष्ठं पद्भिर्मासैने संशयः ॥ १,॥
त्रतः शान्ति भवश्यामि येन सम्बद्धते शुभम् ।
प्रस्तां तत्त्वणादेव शां गां विषाय दापयेत् ॥ २,॥
सतें। होमं मकुर्वति खुनाक्ते राजसक्यैः ।
आहुतोनां खुनाक्तानामयुनां खुदुयासतः ॥ ३,॥
सोअवद्वसः स्यत्नेन द्वादिषाय दक्तिशास् ॥

बस्नयुरमं यवं चैव समदर्शी महाययेत् ॥ ४॥ इष्टदैवत-पन्त्रेण तदः शान्तिर्भवेद्दद्विज[े]! गर्मः-दिवामसूता वडवा श्रावणे च विशेषतः॥ ॥॥ माघमासे बुधे चैव शसवेन्महिया यहि सिंहे गावः प्रसूचनते स्वामिने। मृत्युदायकाः ॥ ६॥ जङ्गमे स्थावर जातं स्थावरे वाज्य अङ्गमस्। क्षस्मिन् योनिविपर्व्यासे परचक्रायमे भवेत् ॥ ७॥ स्यागा विवासे। दार्न वा करवाऽप्याशु शुभं लभेत्। बटवा इस्तिनी गीर्वी यदि गुर्ग मसूयते ॥ = ॥ विजारमं विकृतं वाऽवि वड्भिर्भासैक्रियेत वा । वियोनिषु च गच्छन्ति मैथुने देशनाशतम् ॥ ६॥ धन्यत्र वेसरेात्यचेर्नुणां या जातिमैधुनात् । सर्प-मुषक-मार्नार-मरस्य-थान-विवर्ज्जिताः ।।१०॥ मेया दुर्भिचकर्तारः स्वजातिविशिताशनसः । मकाक्रको मदे। पेरिय पुष्पानस्गपिक्याः ॥११॥ बन्यजातिभयं तस्मात् भेतु-त्यानौ विशेषतः। प्रधाननद्वाननद्वाहं धेनुर्धेनुं पिवेयक्षि ॥१२॥ शुनी बाबचने पेहुं शुनी चेतुरवाऽपि या। तिर्थेग्यानी मानुषी वा परचक्रागमे अवेत् ॥१ शः अभारतमा मध्यपाछि जन्यन्ति गाणिने। यदि । विकृतं वा असूयन्ते परवक्रागर्थं स्टेह् ॥१४॥ स्यागा विश्वासी दानं ना तेषां कार्य्य विज्ञानता। वर्षवेदुझाहाराधिव जप-देशमांथ कारयेत् ॥१४॥ सुदञ्जवाद्याः बटहाः सुशोधनैः 🖰 🏸 पूजा 🗢 कार्या त्रिविबीकसानास् ।

भातुस्तथेज्या विभिना च कार्या देयं तथाऽसं बहु च द्विकेभ्यः ॥१६॥ मर्गः-हत्तं वा ग्रुशतं वाऽपि स्फुटते वाऽप्युल्खस् । वृत्तम्बद्दलनयन्त्रम् ।

भूतानां चैद विभ्येत गृहे देवकुळेऽथवा ॥१७॥ हवद्दा भद्रपीठं वा आसनं शयनं तथा। अकस्मात्रकुठते यम कम्पते वा वसुन्धरा ॥१८॥ हत्यादीनि निमित्तान्युक्त्या शान्तिरच्युका तेनैव। अवस्थ-समिथा हुत्वा खृताक्तमधुसंयुताः। सावित्र्यष्टसहस्रेण शाजापत्यास्तु भन्त्रयेत् ॥१६॥ शाकापत्याः=प्रजापतिवैवत्या।।

पायसं भोजयेदिदान् हुतान्ते भूरिद्विष्णा ।
तत्तरत्वक्षान्यते पार्य धर्मराजयतं यथा ॥२०॥
स एव हुच्याः पिर्गितिका यत्र ग्रामेषु नगरेषु वा ।
श्रातिमात्रं तु हरयन्ते कथ्वेवशहतालयाः ॥२१॥
श्रात्तियदे व्यदे तथा नरपतेष्ट्रदे ।
वपर्यपरिमात्रं तु हरयते वेरमत्रवदा ॥२२॥
मित्तका मशका दंशा स्रतिमात्रं भयावहाः ।
ईहरीर्वेष्वयोग्त्यातिर्महाचौरभयं भवेत् ॥२३॥
द्रव्याणां हरणं स्थात्र्यस्थकस्य वाऽशामम् ।
तत्र शान्ति मनस्यामि विश्वामित्रोपदक्षिताम् ॥२॥।
सन्यसमिश्रचैव हुन्दा चाऽहोत्तरं शतम् ।
पूर्णपात्राणि वातव्या हुतान्ते भूरि दक्षिणा ॥२५॥
द्रासीन्दाससमामुक्तं सुदं द्वाद्वद्विज्ञातमे ।
तिक्षपाक्षे पदात्रव्यं तिक्षाम् जुदीत् संयत् ॥२६॥

मृतः रमशानं यो नीतः पुनर्जानित पानवः ।

गृहे पस्य प्रविष्टोऽसी तिष्ठेद्य कद्दाचन ॥२०॥

श्राचित्राच्छून्यतां याति हृतदारपरिग्रहः ।

तत्र शान्ति प्रवश्यापि धर्मराजमतं यथा ॥२०॥

सचीराणां घृताक्तानामग्नी हुत्वा सुलं सुधः ।

हदुम्बरीणां विविधवस्ताः शान्तिः कृता भवेत् ॥२६॥

साविष्टपष्टसहस्रेण जीरशान्तिः च कार्येत् ।

रकानामेकेस्याविष्ट्यमाणा शीरशान्तिः ।

कपितं च तथा कांस्यं हुतान्ते भूरि दक्षिणा ॥३०॥ ततस्तच्छाम्यते पार्य भर्मराजनतं यथा ।

तंतस्तश्रद्धाम्यते पापं ष्ट्रस्पतिमतं पथा ।
स प्र- वजिमन्द्राऽशनिर्वाऽपि व्वलक्षापतते यदि ॥३४॥
पुरे जनपदे वाऽपि तत्र विद्यान्महन्त्रयम् ।
संवरसरे तते। धारे विन्याश्रेव जनज्ञयम् ॥३६॥
राजाऽमात्यविनाशं च निर्दिशेक्षाऽत्र संश्वाः ।
तत्र शान्ति मवस्यामि इन्द्राग्निवचनं यथा ॥३७॥
अपामार्गस्य समिषां सहस्राष्ट्रीचरं भनेत्।

पायसं भे।जयेदिशान चीरशान्ति च कारयेत् ॥३८॥
रक्तानामेकवर्णानां गर्वा चीरं समादिशेत् ।
समादिशेकोमार्थं सम्पादयेत् ।
हुत्वाऽऽहुतिशतं विशो महेन्द्रेखेव मन्त्रवित् ॥३६॥
महेन्द्रेण महाच इन्द्रो प क्षीजसेत्वाविता ।
सुवर्णपणिसङ्काशा हुतान्ते भूरि दिच्छा ।
गौरिति शेवः ।
सतस्तव्ह्राम्यते पापमिन्द्राग्निवचनं थया ॥४०॥

शीनकः—प्रथ यदाऽस्य मणिककुम्धस्यातीदरगुमायास्रो राज-कुलवियादी मा यान-छव-राव्या-८८सनावस्य प्रकारतीक्रदेशयमञ्जे । गजवाजिमुच्याः प्रमीयन्ते वा हस्तिनी दा माद्यस्ति । क्ष्योकमादीनि । ताम्येतानि सर्वावि इन्द्रदेशस्यान्यञ्चलानि मार्याक्ष्यकानि सपन्ति इन्द्री देवता कत्तां हत्तां च येवां तानीन्द्रदेवत्यानि बञ्जातानि तेशु मायश्चित्तान्यपीनद्वदैवत्यानि भवन्ति । इन्द्रं विश्वेति स्थालीपाकं हुत्वा पञ्चभिराज्याहुतीर्जुदोति रुग्द्राध्य स्वाहा । बाचोपतये स्वाहा । सर्वपापशमनाय स्वाहति स्वाहतिभिक्ष कृषक् पृथक् । स्व एव एहक रेण वा अपीं गड्य त कपोतं प्रश्नियति शरीरे दोइति छन्याक्तीवर्शनमेवमावानि तान्येत नि सर्वाणि यमदैवत्यानि अञ्चतानि मायभिक्तानि शयन्ति । नाकि खुपर्यमिति स्थालीपार्कं हुत्वा पञ्चित-राज्यादुतीर्शुद्रयात् । धमाय स्थादः । मेताधिपतये स्वाद्वा । क्षत्रकागुये रवाहा । सर्वपायमारानाय समाहेति व्याहातिभिक्ष कृत्यम् पृथ्यम् सुहोति स यव । दिशो दश दहान्ति । केतवआ सिष्ठन्ति । राजां न्ट्रकार्वाधदं झः-षति अत्यर्थं दिमांग्रस्तरति । इत्येवमादीनि सर्वाणि सोमदेवत्यान्यं द्भुतानि प्रायक्षितानि भवन्ति, सोमं राजानिर्मत स्थासीपाक दुःवा पञ्चभिराज्यम्बुतिसिर्राधसुद्दोति । लोमध्य स्वाद्यः । नक्तमार्का पतये स्वाहा। सीरपाक्षये स्ताहा । हैस्वराय स्ताहा । कर्वयाक्षाहमाय स्वादः । म्याइतिस्था प्रथक् प्रथक् श्रद्धेति ।

द्यथाञ्चशान्तिः ।

गर्णैः-ब्रारवशान्ति प्रचङ्यामि न्युत्तु शीनकः 🗓 यक्षतः 🚶 अरवशालासमीपे तु कुण्डं कुर्वाद्विधानतः ॥ १॥ इस्तातं इस्तमात्रं च आयामं च तथा भवेत्। मेखलात्रयसंग्रुक्तं योनिरश्वत्थपत्रवत् ॥२॥ कुर्वस्था चरपूर्वे हु बेदिं कुर्यात्स्रशो भनाम् सार्बेहर्स तथाऽऽपामग्रुरसेर्घ हस्तमात्रकम् ॥ ३॥ बम् लां चतुरस्रो च देवानां स्थापनाय व । पद्मं तग्रहलीर्वेदिकीपरि **क्र**यदिष्टदश्चं बन्धाःचे पूजधेदेवं सुवर्धोन मकन्पितम् । व्यश्वारुदं महातेजः सप्तहस्तं महावल्तम् ॥६॥ बरदारिष्टहरं शूरं देवं तं हयवन्तमम् । देवेग्द्रं च वराभीशं, धुवर्णेन प्रकरपवेत् ॥६॥ वस्यां चा तथेशानं रजतेन नकश्यितम् यमं च कालके।हेन ताम्रेखाऽपि तथैब च ॥७॥ . निच्छति 🔏 तथा बार्युं नागेनैद मकल्पयेत् । सीर्यं च रजतेनेव कल्पयेत्सुमपाहितः ॥ = ॥ **%** श्रीवं छे। कपालांख स्वेषु स्थानेषु विश्यसेत् । मानाइनार्घपात्राचैर्गन्थ-पुष्पादिकः शुभैः **्ष्र्य-दर्गिश्च नैनेखैः** पूजयेन्मन्त्रपूर्वकम् पञ्चामुलेन स्नपर्न क्रुयदित स्वमनत्रकीः ॥१०॥ ्र**स्पश्रुक्ताजिनमिति** मन्त्रेखाऽऽवाहनं चरेत् । अश्वस्तृषरागविति क्रुयर्त्संस्थावनं सुषः ॥११॥ मानस्ताकिति भन्त्रेण स्नानं सम्वक् प्रकल्पयेत् । युवं वृद्धान्धीति तथा वस्त्रं चैव बदापयेत् ॥१२॥

यक्नोपबीतं द्वातन्यं देवस्य स्वेति मन्त्रतः । विश्वदायेति मन्त्रेण अचेयेत्मुसमाहितः ॥१३॥ गन्धद्वारेति वै गन्धं पुष्पं श्रीक्ष तथैव घ। धूरसीति तथा धूपं दीपं चाऽपि विशेषतः ॥१४॥ सन्त्रेण नैवेद्यं बहु फन्पयेत् द्यानपतेति एकं सम्बूष्टय विमेन्द्र! स्विपुत्रं स्याभिषस् ॥१४॥ ततः सम्यूचयेद्धीमान् लेकिपालान् स मन्त्रतः । इन्द्रं के विश्वतः शक्तं अग्नि द्वेति पावकम् ॥१६॥ यगाय सोमेति यमं निज्यति मेापुछेति 🔻। स्वको ज्ञानेति वरुएं तब बायेति चार्शनताम् ॥१७॥ सोमो पेतुं तथा सोमं कहुदेति तथा शिवस्। पूजयेहगन्थ-पुष्वाचैर्पूप-दीपनिषेदणैः क्रमेण पूजयेदित्थं देशान्सम्पूजयेत्रतः। भरवारूड पहावीर ! तुरङ्गेश ! पहावल ! ॥१६॥ प्राथास्टं च रेवन्तं शक्तवा चाऽऽग्रु विनाशय । शासवडत गजास्ट ! वजहस्त मुरेस्वर ! II२०II षज्ञेख तुरगारिष्टं भिन्नं हुद **रा**चीपते ! महातेजो क्वलक्क्वालाविभूवितः ॥२१॥ मेषारूट ! तीक्ष्णाऽसिना हुतवह ! धारवारिष्टं विनाशय । कालद्यद्धरे। देव! महामहिषवाहन ।।।२२॥ कालद्यदेन द्यहेत्यमस्वारिष्टं विनाशय ! खड्गहरत महाथीय ! निऋते भेतवाहन !।।२३॥ विश्रं कुर ह्यारिष्टं तीक्ष्यखद्गेनः शीघतः। पाशहस्त ! अलाधीश ! सं-दामकरवाहन ! ॥२४॥ पाञ्चीन क इश्रास्त्रिं भिन्नं कृष जसाविव 🕴 🗠

ध्यज्ञस्य वहाकाय! हुनाक्य! महामलः! ।१२४॥
साहयस्य इयारिष्टं ध्यज-इयहेन वाऽनिलः! ।
श्वाक्तिहृस्य !:महाराजः! कुनेर ! नरनाहनः! ।१२६॥
स्थारिष्टं च यजेश! शक्या चाऽऽशु विनाशय।
सूलईस्त ! यहारोद्र! पिनाकित् ! ष्ट्रचाहनः! ॥२७॥
नाश्याऽऽशु ह्यारिष्टं त्रिश्लोन त्रिलोचनः! ।
एवं सम्प्राध्यं विभेन्द्र! लोकपालकमेणः च ॥२०॥
सानेः संस्थापनं कृत्या कुण्डे होमं च कार्यत्।
सानेः संस्थापनं कृत्या कुण्डे होमं च कार्यत्।
होमं कुर्यादश्यकामभक्षणः चृतपूर्वकम् ।
स्थापयित्वाऽऽवयसंस्थालीं तस्येनाऽऽवयेन प्रजतः।३०॥
इस्यं सर्वेश मन्त्रेश देनग्रहिर्य कार्यत्।

कानये स्वाहा । सोमाय स्वाहा । वायवे स्वाहा । विश्व के स्वाहा । स्वाहा । स्वाहा । स्वाहा । रेवस्साय स्वाहा । सर्व कामप्रदाय स्वाहा । मजायतये स्वाहा । सर्व कामप्रदाय स्वाहा । मजायतये स्वाहा । सर्व कामप्रदाय स्वाहा । मजायतये स्वाहा । सर्व व होमा कार्यः । स्वाहा रेवस्ता स्वाहा । स्वाव प्रकार प्रदास स्वाहा । स्वावो राजा राजपति एवं सर्वव होमविधा ।

इत्थं कृत्वा देशकर्म आवार्यो विधियत्तरः।

हाको भवन्द्व, मन्त्रेण अस्वशालां मनेस्येत् ॥ १ ॥

पवित्रं तेति मने ण अवान् सम्मोद्ययेह् द्विजः ।

प्र वाजीति मन्त्रेण तथाऽस्वांवं विसर्कायेत् ॥ २ ॥

मा नो मिनेति मन्त्रेण देशहान् स्थापयेत् छुधीः।

प्राद्धिं च जुहुयाद्धिक्षव्रष्ट्वस्यर्थाः ॥ १ ॥

भूतेभ्यव वर्ति द्यात् छिन्नां तं मन्त्रपूर्वकम्।

असुराः पंकाणं यद्या याद्धानाम राचसाः ॥ १ ॥

पिशाचाः सिद्धमन्द्रवी देताला छोगिनी शिन्।

द्वाकिनो लाकिनी चैव शाकिन्या जम्मुद्वाद्या ।। १ ॥ अश्वारिष्ठ-प्रशान्त्यथे वर्ति गृहन्त्यमी प्रशाः ।
द्वार्य दत्या वर्ति सम्यक् भूतेभ्यम विधानतः ।। ६ ॥ अश्वं च दत्तिगायुक्तं वतिमां चत्ससंयुताम् ।, इदिश्य भाकतं देवमाचार्याय मदाययेत् ॥ ७ ॥ आकृतीदेवतानां च दिलेभ्यो चस्तसंयुताः । द्याचा दश्चिणायुक्ताः अद्धापृतः समाध्रितः ।। द ॥ आकृतीदेवतानां च दिलेभ्यो चस्तसंयुताः ।
द्याचा दश्चिणायुक्ताः अद्धापृतः समाध्रितः ।। द ॥ आकृतीदेवतानां दश्चानाम् = दन्द्वाचीनाम् ।
दश्चानां विधिना कृत्वा हयानां शान्तिकं महत् ।
अश्वानां वीठजरवं च वस्तं पृष्टिक्तं तथा ॥ ६ ॥ स्वभाो स्थिता मनूनां च सङ्ग्रामे विजयो भवेतः ।
वाद्याचा योजयेत् वद्याचतः शान्तिभीवष्यस्त ॥ १०॥ द्व्याव्यक्तं शान्तिभीवष्यस्त ॥ १०॥ द्व्याव्यक्तं शान्तिभीवष्यस्त ॥ १०॥

अथ गजशान्तिः।

स्वस्कुनार स्थात—
स्व राजा प्रकुर्वात चतुध्यों वज-वाजिनाम् ।
शान्तिमामयतमानां तदुत्याताद्ये सति से है।
क्षवलाति च नाऽध्दत्ते यदा सभूकि मुश्राति ।
स्तब्धः प्रशान्तो निर्वेदो स्थान्मदेन विविज्ञिकः ॥ है।
विहीनमित्रस्ययं परिच्नीस्थततुद्धिः ।
विमानात् सस्तसर्वाद्ग-सुप्तो नष्ट्यराक्रमः ॥ है।
नष्ट्याभः सदाहीना नष्ट्रसङ्को स्थान्वतः ।
नानान्यःभिसमुत्याभः पीटाभिः पीट्यते यदा ॥ ह।।
स्रिक्षिणनिषातेषु वर्षोत्पात्मयेषु च ।
स्तद्धः स्थान्ति मकुर्वातः गजरचापरेः नुषः ॥ ॥ ॥
स्रिक्षासस्युक्तं विवे त्राज्ञिमाः स्वष्ट्यते सद्दाः ॥ ॥ ॥
स्रिक्षासस्युक्तं विवे त्राज्ञिमाः स्वष्ट्यते सद्दाः ॥ ॥ ॥
स्रिक्षासस्युक्तं विवे त्राज्ञिमाः स्वष्ट्यते सद्दाः ॥ ॥

युद्धारम्भेषु च तथा तेषां श्वान्ति च कारयेत् ॥६॥ शान्त्यर्थे गज-वाजीनां मध्दपं चतुरस्रकम् । द्वादशाऽरिक्षमानेन सस्मितं कार्येत् ध्रुधीः ॥ ७॥ बाहुममार्खं मध्ये तु योनि नाभिसमुञ्ज्यसम् कुएडं त्रिमेललं द्वर्यात् हतं वा चतुरस्रकम् ॥ ८॥ तत्पुरस्ताइक्षियातः पश्चिमे चोत्तरे तथा चतुरस्रं ततः कृपीत् कुण्डं इस्तममास्यकम् कोरोषु व तथा क्वर्याइइचं चाऽष्ट्रविकोणकम् । सर्क-स्वादिर-पाक्षाश-विन्वा-ऽश्वत्य-वर्देरपि ॥१०॥ बौदुम्बर-अवामार्ग-समिद्धिस्तत्र मध्ये सर्वसमिद्धिर्वा पालाशीर्वाऽऽज्य विन्वकैः ॥११॥ तिल-तवहुल-लाजाभिः सक्तसिद्धःर्थशस्त्रिभिः यवैरेभिख्निमध्वक्तमध्ये संबेभिति स्थितिः ॥१२॥ दरवा च पयसा चैव छुतेन अधुनाऽि बा के। छेषु च तथाऽऽच्येन मध्ये तु कलशीरपि ॥१३॥ स्थापयेत ततः कुम्भानष्टामञ्जा दिच्च वस्तयुग्मेन सञ्ज्ञान् सर्वीविध-समन्वितान् ॥१४॥ सर्वरस्नयुतान् युग्मान् गन्ध-पुच्चोदकरिष् । इस्तावरभवावां तु बृहत्कुम्भं तु सध्यमे ॥१॥। तीर्थोदकेन सम्पूर्ण सर्वरत्नीपथैरपि । चतुरः कलशरेस्तत्र चतुर्थस्य समं ततः ॥१६॥ की से चु प्रयान्यायं जल्लन्वसाविकेयुंतान् । स्मरेत् प्रधानं कुम्मे हु मरसिंहाकृति हरिम् ॥१७॥ शक्क-चक्र-गदा-पद्म-चर्मा-ऽसि-श्रार-शक्तयः पूर्वादिक्रवयागेन ध्यासच्यं कलहोच्यपि विशः शामादि-विक्यालाँस्तत्र सम च संस्मरेत्।

वधानकुम्भारपुरतः कुर्यासकं तु मरदकम् ॥१६॥ तत्र सम्पूज्य देवेशं पश्चाद्धामदि साध्येत् । मण्डलाग्रे तदा कुर्म कुरमात्रे कुण्डमेव च ॥२०॥ सर्वेत्राऽनलसंस्कारान् स्वयुग्नोक्तेन कर्मणा जुहुपादग्निसिष्पर्थमाज्याऽऽहुतिसहस्रकम् ॥२१॥ **भा**नुष्टुभेन मन्त्रेण गुरुर्गाऽस्य पूरोहितः । आनुष्दुभा दुसिंहमन्त्रा दशसाहस्रमिष्यते ॥२२॥ समिइद्रव्यचळपयेवं हुत्वा मन्त्री समाहितः । सम्परम्याऽऽज्याऽःहुतीनां च सहस्रं वाऽयुतं चरेत् ॥२३॥ ततः स्विष्टकृदिस्पादि-समापनविधिः क्रमात् । एवं समाप्य विभिन्नद्वीमं तत्र पुरीहितः ॥२४॥ संस्पृशेदुद्दुम्भं च नपेदशसद्द्रसम् वर्यन्तकलशान् स्पृष्टा जयेचन सहस्रकम् ॥२४॥ अनम्तरेषु कुएडेषु गायच्या मण्येन या । ऋ स्विग्धियेनपश्कार्य होमतश्रतं तु पूर्वेवत् ॥२६॥ प्रतिक्रमं सहस्रं च जपेचानध्युपस्पृशन् पुजवेन्लोकपालादीन् गन्यादिभिरलय्हतः ॥२७॥ भय राजानमाकाये नवास्तीर्थे सिंहविस्तरे । समाप्य प शुचिस्रानं सर्वोऽलङ्कारमंयुतम् ॥२८॥ इम्मोदकेन देवाग्रे तन्मन्त्रेणाऽभिषेचयेत्। पर्यन्तकसरीथाऽपि सूर्वं पथाद्रगजादिकम् ॥२८॥ अभ्यांश्र वाहनान पून्य दिव्यलक्षणसंयुतान्। गजादिनाऽत्रशिष्टेन ते।येन स्नापयेह बुधः ।ध्रै०॥ अस्यवाहात्रं द्विपामातान् सर्वानेव समाहितः। बाराकुम्भादकनैव स्नापयेष्ठभसाधकः ॥३१॥

राज्ञो भीराजनं कुर्याद्वाहनेषु च मन्त्रवित्। ब्रान्येष्वेत्रं विधिः कार्य्यः सहिरत्नकरः परः ॥१२॥ राजानं पाइनार्वीक्ष तथाऽन्यांक्ष पुरोहितः। सर्वाऽलङ्कारसंयुक्तान् सर्वेषङ्गलसंयुवान् ॥३३॥ छत्वा तु बाचयेत् पथाइब्राझखैर।शिषेः बहु। दक्षिणाबप्यलं दस्वा ऋस्विम्भ्या गुरवे नृषः ॥३४॥ बाइनं पञ्ज-भूषाणामाधार्याय निवेद्येत्। दास-दासोचु भृत्येचु ब्रामादिचु च सर्वशः ॥३५॥ सर्वालङ्कारसंयुक्तं राजवाद्दोपरि स्थितम्। मन्त्रद्वीर्पेहेंपैश्चैव ब्राह्मछैः स्वस्तिवाचनैः॥३६॥ साऽऽनन्दरचैय ऋत्विम्भिवेद्धैर्मन्त्रवरैस्तथा । बाचार्यो राजभवने तृषं संवेशयेत्स्वयम् ॥३०॥ पूर्व स्तानाऽवशिष्टेन कुम्भते।येन मन्त्रवित्। गजशालां च सम्प्रोह्य वाजिशालां तथैव च ॥३८॥ सिद्धार्थतवहुत्त-तिलीः पुष्पैर्बोऽव्यवकीयर्थे च। शालावध्ये दृषः सिंहं भ्रदर्शनमनामयस् ॥ ३६॥ पूजपेद गन्ध-पुष्पाचैः सर्वाऽलङ्कारसंयुतिः। सक्तुभिः कसरान्नेन कुर्याञ्जूतपर्शि वहिः ॥४०॥ ततः शालास् सर्वास् माक्षणान् भाजयेद्रलिए। ततः संवेशनं क्रुयीदाचार्यो गज-वाजिनाम् ॥४१॥ एवं शान्ति पद्धवीत निभिन्ते सति तद्गुरुः। सपरिष्ठद्रस्य चृत्तेर्मन्त्रवित् स्नुसमाहितः ॥४२॥ सर्वेषम्याणसम्पूर्णः सवनाधाविवर्ण्जितः। सपुत्री राजमन्त्रस्य दृपस्तेन महीयते । ४३॥ इति गजशास्तिः।

अथ महाशान्तिः।

श्रीकृष्ण ख्वाच-

पहाशान्ति प्रवश्यामि महादेवेन भाषितम् ।
पार्थिवानां हितार्थाय महादुस्तरतारियीम् ॥ १ ॥
नृपाऽभिषेके सा कार्धा यात्राकाळे नृपस्य ह ।
दुःस्वप्ते दुनिमिन्ते च ग्रहवेगुरुयसम्भवे ॥ २ ॥
विष्तुक्कानिपाते च जन्मचें ग्रहभेदने ।
केतृद्ये च निर्धाते चितिकम्पस्य सम्भवे ॥ ३ ॥
महती भृष्यगयदास्ते यमसस्य च सम्भवे ॥ ३ ॥
महती भृष्यगयदास्ते यमसस्य च सम्भवे ॥ ४ ॥
महती भृष्यगयदास्ते यमसस्य च सम्भवे ॥ ४ ॥
महती भृष्यगयदास्ते यमसस्य च सम्भवे ॥ ४ ॥
महत्वाद्यां च ध्वजानां च स्वस्थानात्पत्ते स्वि ॥ ४ ॥
महत्वाद्यां च चतुर्थे वाद्यमे तथा ।
पदा स्युर्ण्ड-मन्दा-ऽऽराः स्युर्वेव विशेषतः ॥ ६ ॥
मन्दः = शनः । मारो=भीमः ।

युद्धे प्रहाणां सर्वेषां सूर्य-शांतांशु-कीलके ।

यद्या-ऽऽपुध-गवा-ऽश्वेषु संस्मिते शयनासने ॥ ७,॥

यद्यानाः परिहरयेत रामाविन्द्रभञ्जस्तयाः ।

पेरमनमः तुलाभद्ये गर्भेव्वश्वतरीषु च ॥,०॥

एविष्यभद्वये हृष्टे महाशान्तिः मशस्यते ।

सर्वाणि दुर्निमित्तानि भशमं थान्ति सर्वेशाः॥ ६॥

यां कुर्युम्भोकाणाः पश्च कुल-शील-समन्विताः ।

चतुर्वेदाक्षिचेदाभ द्विवेदाभाषिः पास्टवः ॥ १०॥

हम्पर्यस्याः विश्वेषण सर्ह्वास्त सुर्वेयताः ।

श्वाप्यः अतसम्पद्धः अपृष्टेमपरायणाः ॥११॥

श्वापः अतसम्पद्धः अपृष्टेमपरायणाः ॥११॥

कृष्यक्रोपन्।सनकारीः कृष्ठकायविशोधनाः। पूर्वमाराध्य मन्त्रांस्तु शार्भेत ततः क्रियाः।(१२॥ मन्त्रान् विविधोक्यमःशान्।

दश-दादशहरतं वा मण्डपं कारचेच्छुभम्।
तन्मध्ये वेदिकां कुर्याचर्न्दरंतप्रमाण्तः ॥१३॥
आग्नेय्यां कारचेत् कुण्दं हस्तमात्रं सुशे।भनम्।
येखलात्रयसंयुक्तं येत्या वाऽिय समन्वतम् ॥१४॥
रवीन्द्रीरुपरागेषु महेत्न्कापतनेषु च।
उत्पातेषु तथाऽन्येषु निभिन्नेषु च सर्वशः ॥१४।
सर्वारिष्ठोपशमना महाशान्तिः प्रशस्यते।
वास्तम्दन-माळे च तेरिणाऽलाक्कृते सथा ॥१६॥
गामयेनोपलिसे च मण्डपे ते द्विजातयः।
शुक्राम्बरपराः स्नाताः शुक्रमान्याऽनुकेपनाः ॥१७॥
कर्म कुर्युकिति शेषः।

तत्व पश्चकलशाँस्तस्यां वेदाः निवेशयेत्।
धारनेयरदिषु कोर्येषु पश्चमं मध्यतस्तया ॥१८॥
धारनेयरदिषु कोर्येषु पश्चमं मध्यतस्तया ॥१८॥
धार्यकृते पर्ये चूनपन्लत्रधारित्रम् ।
अक्षकृचित्रधानेन पश्चगव्यं तु कार्येत् ॥१८॥
अक्षकृचित्रधानं सामूत्रं ताम्रमर्थाया इत्यादिना प्रक्षकृच्यकर्यो

चोक्तम्। ग्रीवधीः पश्चरत्नानि रेश्वनां चन्दनं तथा। सिद्धार्थकान् शर्मी द्वी कुशान् श्रोहिन्यवाँस्तथाः॥२०॥ अपाभागे फलवती 'स्यग्राधे।दुस्वरी तथा । ग्रजा-अ्वत्य-कपित्यांथ वियकूंश्चृतपद्ववान् ॥ २१॥

सन्ता-ज्यान्तापरमात्र । स्यक्षुरम्तप्रधान् ॥ स् इस्तिदन्तस्दं चंद काणकुरमेषु विन्यसेत् । फुलबती = ग्रन्थमियक्गुः । प्रिसृष्टुः = कदुः । पुग्यतीर्थोदकोपेतं पञ्चग्रन्यं च मध्यमे ॥२२॥

श्रामं वाचिमितीदं च विद्वज्ञम्भाऽभिमन्त्रणम् ।

श्रामः शिशानं नैक्ट्रंत्ये यदेवा मासुगे।चरे ॥२३॥

ईशावास्यं चतुर्थस्य क्रम्भस्य त्वभिमन्त्रणम् ।

प्रध्यमे त्वथ जप्तन्या च्द्राः क्रम्भे पज्ञभेवाः ॥२४॥

गन्ध-पुद्धा-ऽचतिर्वस्त्रैनैवेद्येष्ट्रंतपाचितैः ।

पत्तित्र नातिकराद्यद्विपकैः क्रम्भपूजनम् ॥२४॥

स्वस्तिवाचनकं चैव कार्यचद्दनन्तरम् ।

क्रमेणाऽनेन शनकैरिनकार्यं च योजयेत् ॥२६॥

क्रमेणाऽनेन शनकैरिनकार्यं च योजयेत् ॥२६॥

क्रमेणाऽनेन शनकैरिनकार्यं च पूर्वमेव विधापयेत्। पूर्वं

क्षतारास्थायनास् ।

हिर्ण्यगर्भः समिति ज्ञह्मासननियोजने ॥२७॥
कथानसा प्रणीताम भन्त्रेण विनिनेश्येत् ।
कृत्वा चास्तर्णं वहेराज्यसंस्कारमेव च ॥२८॥
छथवाऽऽसाद्येद्कं द्रव्यं यस्य भयोजनम् ।
सतः पुरुषस्केन पायसभवणं भनेत् ॥२६॥
द्राध्यायाऽथ संसिद्धं पायसं स्थापयेद्धुवि ।
छश्चादश प्रमाणेध्मान् द्याद्य स्पीमयान् ॥१२०॥
पालाशीः समिधः सप्त सप्त ते इति दाययेद् ।
छश्चादाहुतोः सप्त जातवेदस इत्यूचा ।
स्थालीपाकस्य ज्ञहुयात्पुनर्वे जातवेदसे ॥३२॥
तरत्समन्दीस्केन चतसो जुहुपाचतः ॥३२॥
यशयेति सप्ताऽन्याः स्वाहान्ता ज्ञहुपाचतः ॥३३॥
स्वाहान्ता इति स्वर्थत्र योज्यम् ।

इदं विष्णुस्ततः सप्त जुदुयादानुतिर्हेष ः। निम्नेभ्यस्ततः स्दाक्षा सप्तविशतिराहुतीः।।३४॥

नद्मशहुतयस्य कृतिकाभ्यः स्वाहेत्यादिभिर्मन्त्रैः कार्याः । तम् रोहियीद्वयःपुष्यहस्तादित्रया ऽतुराधादित्रयाऽभिनिदृद्वयशतभिवक्-रेनतीष्वेकवस्यस्यः । पुनर्वसु-फाल्गुनीद्वय-विद्याका-ऽश्यिनीयु द्विय-चन श्रेषेषु बहुत्रचनम् ।

यत्कर्मणेति जुहुवाशतः स्विष्टकृतं पुनः ।
प्रइहोमस्ततः कार्यस्तिलीशाञ्चविरुकृतेः ॥११॥।
अत्र तिलिक्धानं वैकतिपका यवादिनिवृत्यर्थम् ।
प्रायक्षिमं ततो हत्वा होमकर्म समाप्येत् ।
सतस्तु तूर्यनिर्धोपैः काइला-शङ्गनिस्वनैः ॥१६॥
यजमानस्य कर्चव्यो सभिषेको द्विजोत्तमैः ।
कारमर्यद्वसम्भूते समे भद्रासने स्थितम् ॥३॥।
कारमर्यद्वसम्भूते समे भद्रासने स्थितम् ॥३॥।

वेदोमध्यमतं कृत्वा दुनिभित्तमसान्तये ।
पश्चिमिः कलशेः पूर्णमेन्त्रेरेतैययाक्रमम् ॥३८॥
सहस्राचेण प्रथमं ततश्चेय शतायुषा ।
सजीपसा इन्द्र इति च विश्वानि वदणेति च ॥३८॥
दुपदा दिवेति च ततः स्नापयेयुः सपादिताः ।
ततो दिशां विलि द्याद विचित्राऽभसमाश्चितान् ॥४०॥
नमोऽस्तु सर्वश्चदोध्य इति मन्त्रग्वदाहरेत् ।
स्नातस्य बाह्मणाः सर्वे पठेयुः शान्तिमुत्तमास् ॥४२॥
शान्तितोयेन धारां च पात्रियत्वा समन्त्तः ।
पुष्याहवाचनं कृत्वा शान्तिकपे समापयेत् ॥४२॥
तीथे देवालये वाऽपि गोदोहं कारयेह चुधाः ।

New Delhi

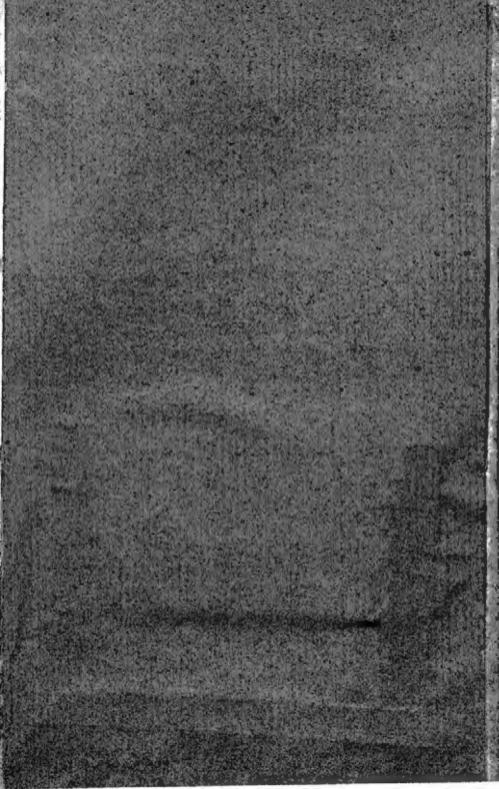
विमेश्नो दक्तियां द्याययाश्वया विमत्सरः । शोनानाथविशिष्टेश्यो द्याय्येन युधिष्ठरः । ॥४४॥ भोनानं वार्यनम् द्याय्ये मसिद्धयति । मामुभ ताभते दोर्थ सम्बद्ध विभयते खणात् ॥४४॥ दुर्गाणि वाश्य्य सिद्धयन्ति प्रमास समते श्वभान्। यया समावरारायां कवनं वार्या भनेत् ॥४६॥ तथा देवोपयातानां शान्तिभवति नार्यम् । शहसकस्य वान्तस्य पर्धाजितधनस्य व ॥४७॥ द्या-दाविष्यपुक्तस्य सर्वे सातुष्ठा प्रदाः । सर्थान् सर्वद्धयति वद्धयते व पर्ध

कार्यं प्रसाधयति तस्य विनष्टि पापद्य । यः कार्येत् सकतदोपहरी घरार्या शान्ति प्रशान्तहृदयः पुरुषः सदैव ॥४८॥

इवि यहाशान्तिः

वर्गवनती-तरिक्षणाद्यमसङ्गमस्य साक्षिध्यभाषि इतशास्त्रिन मध्यदेशे । व्याता गरेदनगरी किस तथ राजा राजीयकोचनरतो भगवन्तदेवा ॥४६॥ इति श्रीसँगरवैद्यापतेस-महाराजाधिराज-श्रोभगयन्तदेवोद्योजिते गीमांसकगद्दशङ्करास्यज-भद्दनोसकगढकते भगवन्तभास्करे शान्तिभयस्यो द्वादशः समाप्तः ।

> प्रस्टर खेळाड़ीकाळ ऐएड सन्स, इंस्कृत तुबब्दियो, बचोड़ीयक्री, बनारस सिडी।



2011年ルルスのあります

D.G.A. 80. CENTRAL ARCHAEOLOGICAL LIBRARY NEW DELHI

Issue Record.

Call No .-

Sa3S/Nil/M.M.-5356

Author-

Nilkanthabhatta.

Title-

Santimayukha.

Borrower's Name	Date of Issue	Date of Return
Dry Kilon	23 4,83	26 483
	57/gum=	



